

प्रकाशक :
सम्पत्ति ज्ञानपीठ,
मोहानाथी बजार.

प्रथम संस्करण १९
सन् १९६१
मूल्य ३ (तीन रुपये)

मुद्रक :
भारतीय मुद्रण
बजार.

प्रकाशक की ओर से

श्रद्धेय मुनि श्री लाभचन्द्र जी महाराज के शिक्षाप्रद दृष्टान्तों को पाठकों के मम्ममुख प्रस्तुत करते हुए अत्यन्त प्रसन्नता एवं गौरव का अनुभव हो रहा है।

संस्था से इधर कुछ अन्य प्रकाशन भी हुए हैं, इसी कारण से इस पुस्तक के प्रकाशन में कुछ विलम्ब हुआ है। फिर भी पुस्तक तैयार करने में शीघ्रता का पूर्ण ध्यान रखा गया है।

आशा है, पाठक मुनि श्री जी के इन महत्त्वपूर्ण दृष्टान्तों से उचित धर्म-लाभ लेंगे और इस दिशा में हमें आगे बढ़ने का अवसर देंगे।

प्रस्तुत पुस्तक की सहायतार्थ—

हमें १५००) गुप्तदान द्वारा व २५०) पालनपुर निवासी (पाहूवेरी) नानालाल फोनालाल की स्वर्गीय पत्नी मनहर देवी के स्मरणार्थ प्राप्त हुए हैं। अतः सहर्ष धन्यवाद है।

भवदीय
सोनाराम जैन
मन्त्री
सन्मति ज्ञानपीठ, आगरा

सम्पादकीय

पद्य व न बुनियादी सामग्र्य भी महाराज द्वारा लिखे इन कबु हस्तों को सम्पादित करने का सुभवतर बादर मरुत प्रसन्नता हुई । पुनिया की भी माववा निवनी निर्यन व समान विनेपी है, इनका मरुत प्रमाउ मे हस्त है ।

प्रस्तुत पुस्तक मावव को एक सार की राह पर चलाने में प्रपना मरुतान देवी पीर वसुके विचारों मे एक नई कान्ति पैदा करेपी । प्रमें कोई सन्देश नहीं है ।

पुस्तक मे 'पुन' भी है पीर 'मून' भी । वह पाठक का अपना भाव है कि वह पुनी का परिभाषा है वा कटी वा । कान्ति प्रेमी एक मरुतान न पुन ही वहा करेने पीर स्वर्न भी पुनी की सुभव से सुवाचित होने पीर समान को पी करेने ।

हो कनता है कि कुछ मरुतानाचारिवा एवं स्वार्थी लोगों के मन के विचार न ऊतरे पीर इनको स्वर्न ही समझे, तो ऐसे लोगों के विदे ता निरवध ही के 'सुख' है । पीर मे पुन के स्वाम पर पुन के ही स्वर्न का उरने ।

पुस्तक को इसी कान्ति के प्रारम्भ मे पाठकों के हार्थों तक पहुँचाने का विचार का पण्णु खेद है कि विशेष परिस्तिथि वहा ऐसा करने में कनर्न न हो सके ।

प्रस्तुत पुस्तक बहुत ही कौशला मे कनी है । हो कनता है सम्पादन तथा सुवहा मरुति मे कोई कृति रह गई हो । वरि हमार पाठक वसु मरुतान में अपने प्रस्तुत सुमाव देने का वद करेने । हो कनता उरई स्वामन किवा कान्ति पीर मावानी सन्देश मे कचित उद्योग कर रिया कान्ति ।

मुनि श्री जी ने समाज को एक अमूल्य पुस्तक प्रदान की है। यदि संशोधन और भाषा पर ध्यान न देकर पाठक भाव पर अधिक ध्यान देंगे और पुस्तक लिखने के उद्देश्य को ध्यान में रखकर अधिक से अधिक शिक्षा ग्रहण करेंगे तो पूर्ण विश्वास है कि उनको 'फूल' ही दृष्टिगोचर होंगे। यदि ऐसा हुआ तो मुनि श्री जी का यह शुभ प्रयत्न सफल होगा और मुनि श्री जी भविष्य में भी अपनी सुन्दर कृतियों से समाज को लाभान्वित करते रहेंगे, जैसी कि हमें उनसे पूर्ण आशा है।

विनीत—

आर० डी० शर्मा, 'साहिरल्ल', 'प्रभाकर'

एक आदर्शमय जीवन

जिन्दगी देखी बना, जिन्दा रहे मिलघर तु
बच न ही दुनिया में तो दुनिया को घसी बच दू ।

बाल

अर्द्धक वं मुनि श्री मानसचन्द्र श्री महाशय का जन्म संवत् १६ १ में हुआ था । आपके पिता का नाम भागुपाल व माता का नाम प्यारीबाई था ।

आपके हृदय में आत्मभावना से ही आत्मिक विचार संतुष्टि होने लगे थे और तब अतिथि धारणा भाव आत्मिक कृत्यों को धोर बढ़ा ही गया था ।

आठ वर्ष की आयु में ही आप स्वाध्याय पर विद्युत्त प्रीति रखने लगे और श्री महाशय की सेवा में पधारे, बच कि वे पठनाम पाठ के ही विद्यमान थे । पुत्र श्री कृष्णचन्द्र श्री महाशय की उठ उठव गरी पद थे । बच वर्ष की आयु में ही कुरबेच की सेवा में रहकर आत्मबचन का कार्य आरम्भ कर दिया ।

बोला

मुनिजी जी का बीछत संवत् १६६२ में बीच दिवाकर वं मुनि श्री श्री भोजमन श्री महा ज्ञ ठाका २७ की जगतिवति में हुई और आपके नाम एक नार्द और ही कइने और भी बीछित हुए थे । आपने अर्द्धक श्री कृष्णचन्द्र श्री महाशय के मुनिव्य व मुनि श्री कृष्णपियन श्री महाशय को अपना बीछा पुत्र स्वीकार किया ।

अध्ययन .

आपने हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, उर्दू आदि अनेक भारतीय भाषाओं तथा जैन शास्त्रों का समुचित रूप से अध्ययन किया और अपने इस मचित ज्ञान से समाज को यथाशक्ति लाभान्वित किया ।

प्रदेश बिहार

आपने मालवा, मेवाड़, मारवाड़, गुजरात, काठियावाड़, पंजाब, उत्तर-प्रदेश, मध्य-प्रदेश, बंगाल, बिहार, विन्ध्याचल, आन्ध्र प्रदेश, नेपाल, कर्नाटक और मद्रास आदि विभिन्न प्रदेशों में विस्तृत बिहार किया और वहाँ की जनता को अपने सदुपदेशों से समुचित लाभ दिया और उनको सन्मार्ग पर बढ चलने के लिए प्रेरित किया ।

अन्य महत्त्वपूर्ण कार्य

आप पंडित मुनि श्री प्रतापमल जी महाराज तथा ५० मुनि श्री हीरालाल जी के साथ सन् १९५५ में कलकत्ता चतुर्मास के पश्चात् पधारे । वहाँ दिनांक २६-१२-५५ से मारवाड़ी सम्मेलन प्रारम्भ हो रहा था, जिसमें लगभग ८० हजार मारवाड़ी भाई एकत्रित हुए थे ।

सम्मेलन के अध्यक्ष एवं जनता द्वारा विनती करने पर मुनि श्री जी ने वहाँ पर “गोरक्षा एवं जैन-धर्म” विषय पर प्रभावशाली प्रवचन किया । वहाँ उपस्थित जनता पर मुनिश्री जी के प्रवचन का बहुत ही प्रभाव पडा और सब ने मुनिश्री जी की मुक्त कंठ से प्रशंसा की ।

सम्मेलन के अध्यक्ष महोदय ने मुनि श्री जी का आभार प्रदर्शित करते हुए कहा कि उन्हें यह पूर्ण विश्वास हो गया है कि जैन-धर्म में गाय को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है, जब कि अन्य व्यक्ति इसके विपरीत समझते हैं ।

आज से लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व बंगाल और बिहार में भगवान् महावीर स्वामी ने यात्रा की थी और जनता में धर्म-प्रचार किया था ।

महावीर स्वामी के उपरोक्त से एक लाख उनमठ द्वारा स्थितियों के सर्वत्र
बैत-धर्म स्वीकार किया था ।

मगधान् महावीर स्वामी के निर्वाण के परवान् जब उत्तर-भारत
में १२ वर्षोंके कुण्डल पड़ा तो महावाहु स्वामी धार्मिक सभी सन्त ब्रह्मिण्ड
की घोर बने बने घोर बहुत समय उत्तर-भारत में एक वैत मुनियों का
सावाधनन नहीं हो गया । इसी कारण से वहाँ के सावकबहु धर्म धर्म
की कुलती बने बने ।

प्राचीन प्रतापी में वैदिक धर्म के प्रचारक श्री संकटचार्म के वैदिक
धर्म की कपीर प्रति पहुँचाई थीर धर्म-धर्म के भी हस्तक्षेप किया ।
वैतानाओं की विद्या एवं विवेकपूर्ण बुद्धि के कारण सीमाध्य से धर्म-धर्म
को कोई प्रति नहीं पहुँची । फिर भी उत्तर-भारत में धर्म में बहुत से
सावक ईच्छा हो गये थीर 'सावक' धर्म का प्रचार होकर 'हराक'
धर्म रह गया । मगध विहार थीर कड़ीका में इन सावक धर्मों की
लक्ष्मा एक लाख में ही धार्मिक है । के लोग यह भी प्रति धार्मिक एवं
महानुभ धार्मिक का प्रवेश नहीं करते हैं । मुनि श्री श्री के बनेक धर्मों में
आकर धर्म धर्मों को धर्म धर्म का विधि मुनापा थीर उन धर्मों
पर महावाहु श्री श्री के महात्पुण्य प्रवचनों का लाभप्रद प्रचार पड़ा ।
विहार के राज्यपाल को बन्धेय

सन् १८१९ में प्रविवा का अनुमति समाप्त कर मुनि श्री श्री बट्ठा
होने हुए राजापुर पधारे । वहाँ पर महावाहु श्री श्री श्री बट्टनबवात
निर्धन कुमार (प्राइमेट मिनेट) के बोधाम में निरधरे थे ।

विहार प्रवेश के राज्यपाल श्री धार धार विवाकर मुनि श्री श्री
के धार्मिकन की सुचना वाकर धर्मधर्म पधारे । मुनि श्री श्री से धार्मिक
धीर संगठन धार्मिक विधियों पर लक्ष्य एक बने एक धार्मिकन किया ।
आज ही महावाहु श्री से महावाहु महावीर स्वामी के धर्म-धर्म वैताना
में पधारने का सावह भी किया ।

वैशाली में महावीर जयन्ती :

राज्यपाल एव वैशाली सभ की अत्यन्त आग्रहपूर्वक विनती को मुनि श्री जी ने स्वीकार किया और वहाँ पधारे। वहाँ पर पिछले १५ वर्षों से बिहार राज्य की ओर से महावीर जयन्ती मनाई जाती है और इस जयन्ती में ही भाग लेने के लिए निकट के स्थानों से लगभग दो लाख व्यक्ति एकत्रित हुए थे। मुनि श्री जी ने "भगवान् महावीर की विश्व को देन" विषय पर प्रवचन किया और राज्यपाल महोदय ने भी अहिंसा के सम्बन्ध में भाषण दिया।

वैशाली के निकट हिंसा को रोकना

वैशाली के निकट लगभग तीन मील की दूरी पर वासुकुण्ड गाँव में, जहाँ कि भगवान् महावीर का जन्म हुआ था, राष्ट्रपति डाक्टर राजेन्द्र प्रसाद ने स्मृति चिन्ह के रूप में एक बहुत बड़ी शिला स्थापित कर दी है। उसके निकट ही एक देवी का स्थान है, जहाँ प्रतिवर्ष नवरात्रि के अवसर पर लगभग डेढ़ हजार बकरे कटते हैं। मुनि श्री जी ने इस हिंसा के कार्य को रोकने के लिए गाँव गाँव बिहार किया और जनता को अहिंसा का उद्देश्य समझाया। मुनि श्री जी के उपदेश से प्रभावित होकर वहाँ की जनता ने भविष्य में हिंसा को त्यागने का आश्वासन दिया।

प्राकृत जैन विद्यापीठ में

महाराज श्री जी वैशाली से मुजफ्फरपुर पधारे। वहाँ पर राज्य की ओर से एक प्राकृत जैन-विद्यापीठ चल रही है। विद्यापीठ में एम० ए० के विद्यार्थी प्राकृत भाषा का अध्ययन करते हैं। मुनि श्री जी ने वहाँ पर "महावीर का अनेकान्तवाद" विषय पर सुन्दर प्रवचन किया।

नेपाल की बिहार यात्रा

मुनि श्री मुजफ्फरपुर से सितामढ़ी पधारे और वहाँ से छ मील

का बसन्तपुर प्रकृती रास्ता बंद कर बीरपंथ पधारे । बहु नैपाथ का एक बड़ा पहर है । यहाँ से नैपाल की राजधानी काठ्याँहु पधारे ।

बुद्ध-बपत्ती घर घड़िता का लोच :

काठ्याँहु से लखवान् बुद्ध की २३ १ की बपत्ती यगई गई जिनमें महाप्राय भी भी ने महावीर पीर बुद्ध की घड़िता का बनान् बन कर बुद्ध घड़िता का विष्पर्थन कछमा पीर वहाँ की बनता को अपने गुन्वर प्रबचन से बहुत ही प्रभावित किया । १३ वर्ष के अपने समय में स्वानक बाहियो में मुनि भी भी ऐसे होत हैं को कि प्रथम बार नैपाथ पधारे पीर वहाँ धर्म लोच दिया ।

नैपाल में घड़िता सम्मेलन :

महाप्राय भी भी की प्रेरणा से वि १५ ९-२७ की घड़िता सम्मेलन बुझाया गया । बिहमे बौद्ध पीर वैचारिकियों की पीर से अपने प्रतिनिधियों ने भाग लिया । नैपाथ के हिन्दी व नैपाली पधों के अपने मन की लक्षणा की बहुत ही प्रथमा थी । बहु सम्मेलन नैपाल के इतिहास में अपने प्रकार का सर्व प्रथम था ।

प्रधान मंत्री के बर्षा

नैपाथ के प्रधान मंत्री की एक प्रचार पाचार्य मुनि भी भी के बर्षेभार्य पावे पीर बिबती करके महाप्राय भी भी को अपने निपाथ स्वान पर के बने वहाँ घर बर्षा बार्ना हुई ।

नैपाल नरेक को लोच

विवाह २३ ९ ९१ को नैपाल के बर्षेभाष महाप्राय महेन्द्र की बिबत को बौद्ध-धर्म की देन" विषय पर प्रबचन मुनाया बिबते के बहुत ही प्रभावित हुए ।

मुजफ्फरपुर मे सास्कृतिक समारोह

मुजफ्फरपुर के सघ का विशेष आग्रह होने पर सन् १९५७ का चातुर्मास वहाँ करना स्वीकार कर लिया। मुनि श्री जी की प्रेरणा से वहाँ पर २५-८-५७ से ३-९ ५७ तक एक सास्कृतिक समारोह मनाया गया। जिसमे जैन, बौद्ध, ईसाई, मुस्लिम, सिक्ख आदि प्रत्येक धर्म के विद्वानो ने भाग लिया। महाराज श्री जी ने वहाँ पर "अहिंसा एव विश्व मैत्री" पर प्रवचन किया।

हैदरावाद का चातुर्मास

मुजफ्फरपुर से छपरा, आरा, सीवा आदि स्थानों पर भ्रमण करते हुए जबलपुर पधारे। जबलपुर मे वापू के निधन दिवस पर नगर निगम के क्षेत्र मे चलने वाले कट्टीखाने बन्द कराये।

जबलपुर से नागपुर होते हुए मुनि श्री जी हैदरावाद पधारे और वहाँ पर मुनि श्री हीरालाल श्री महाराज के दर्शन किये।

इस वर्ष आपका चातुर्मास वैगलौर मे है। वहाँ पर मुनि श्री जी के प्रवचन से जनता बहुत धर्म-लाभ ले रही है।

मुनि श्री जी तीन वर्ष से वर्षितप कर रहे हैं और आप १८ महीनों से आमन भी नहीं करते हैं।

मुनि श्री जी के जीवन की यह सक्षिप्त भाँकी है। आशा है, पाठक उनके इस आदर्शमय एवं उन्नत जीवन से शिक्षा ग्रहण करेंगे और शिक्षाओं को ग्रहण करके सन्मार्ग पर बढ चलने की प्रेरणा लेंगे।

विषय-सूची



	विषय			पृष्ठ
१	किडाल घोर स्वरु-नाम	---	---	१
२	नानु-इ म	---	---	४
३	बर्म-बुद्ध	---	---	१
४	बर्म-बिद्या	---	---	४
५.	एराइता-बुर्बक शार्बवा	---	---	१
६	बर्मम ईलार	---	---	१२
७	बर्मगर घोर कुता	---	---	११
८.	बिद्याधी की ब्याख्या	---	---	१५
९	बालक का साहस	---	---	१७
१०	पुस्तार्थी-बुबक	---	---	१८
११	राधी की लकी महाबुद्धि	---	---	२१
१२	महापानी की लक्ष्मणा	---	---	२३
१३	कला का अनुपयोग	---	---	२२
१४	पराधीलता	---	---	२७
१५.	आवाधीक का भाव	---	---	१
१६.	उमा का बीर	---	---	३९
१७	लक्ष्मणी-मोक्षी	---	---	३४
१८	बभ्रु-देवा	---	---	३३
१९	बालक के प्रति लक्ष्मणुता	---	---	३७
२०	चार आदि	---	---	३८

	विषय	पृष्ठ
२१	ग्राज्ञावागी दिग्घ्न	४२
२२	धार्मिक-समता	४४
२३	अतियि-मन्कार	४६
२४	निष्पाप-भक्त	४८
२५	भ्रगर तीन दिन की आयु बढ़ जाय !	५०
२६	आदश-मैत्री	५२
२७	भगी की उदारता	५४
२८.	मन्त की शान्ति	५६
२९.	मिथ्याभिमान	५८
३०.	सन्त इब्राह्म का अस्तेय व्रत	६०
३१	पत्यर से भी सीख लो !	६२
३२	क्रोध ही चाटाल है	६४
३३	दयानु-हृदय	६६
३४	क्रोध का हलाक	६८
३५	योगेन्द्रनाथ का आत्म-त्याग	७०
३६.	उन्नति की कुँजी	७२
३७	सत्य-निष्ठा	७४
३८	नियमित समय	७६
३९	लिकन की दयावृत्ति	७८
४०	आत्म-विश्वास अजेय दुर्ग है	७९
४१	अग्नेज षप्तान की कर्त्तव्य-परायणता	८१
४२	निष्काम-सेवा	८३
४३	दूसरो की सेवा ही सच्ची साधना	८४
४४	गुरु का सम्मान	८६
४५	असन्तोष की दवा	८८

विषय

पृष्ठ

६३.	धनुकरणोत्सव	---	---	१ ५
६५	बाह्यस्य का कथाचरण	---	---	१६
६७	कल्पीत और समय का मूल्य	---	---	१६२
६८.	बापानी बहिना का देश-प्रेम	---	---	१६४
६९.	पद्मा बन्धुवीर की कथाएँ	---	---	१६९
१	पुत्र कथाएँ और संरक्ष	---	---	१६८
१ १	बाल की कथमात	---	---	२
१ २	पद्मा और युवक	---	---	२ २
१ ३	दार्शनिक जीवन	---	---	२ ४
१ ४	पानु-बुनि और ईश्वर-निष्ठ	---	---	२ ९
१ ५.	पत्नीर के प्रस्तोत	---	---	२ ५
१ ६	पामीना का परकुल बाल	---	---	२१
१	सावित्री के लिए त्याग	---	---	२१२
१ ८.	ईश्वर के प्रति हृद निरवाद्य	---	---	२१४
१ ९	महात्मा बाबी और कथा	---	---	२१९
११	जीवन का लीनार्ड विवम-वास्तव	---	---	२१
१११	पुण्या का मुन्नाकन	---	---	२२
११	सर्वश्रेष्ठ बाल शिक्षा विद्यालय	---	---	२२४
१ ३	ध्यान मयन और ज्ञान	---	---	२२५
११४	पद्मकण्ठ परम हूँत और बापबुद्धी	---	---	२२
११५	सुल बलबहादुर और ध्यात्म-ज्ञान	---	---	२३
११६	बलबहादुर का ध्याता पालन	---	---	२३२
१	ब्रह्मचर्य-व्रत और स्मरण-शक्ति	---	---	२३४
११	हाजी महमूद की सद्बुद्धता	---	---	२३९
११९	धार्मिक और नीचर	---	---	२४५

	विषय	पृष्ठ
१२०	कालिदास और रूप	२३६
१२१	ईर्ष्यालु का वृष्ट	२४०
१२२	पुत्री को पिता की सीख	२४१
१२३	प्रसन्नराय का स्वातन्त्र्य प्रेम	२४४
१२४	नेपोलियन का पक्षी-प्रेम	२४६
१२५	वस्तु का उचित उपयोग	२४८
१२६	प्रकाश की और	२५०
१२७	सच्ची सेवा	२५२
१२८	खुदा की सच्ची वन्दगी	२५४
१२९.	माता के प्रेमाश्रु	२५६
१३०.	परिश्रम और विनोद	२५८
१३१.	रानाडे का भाषा प्रेम	२६०
१३२	नौकरी की स्वामि भक्ति	२६२
१३३	काजी सिराजुद्दीन और बादशाह	२६४
१३४	प्रिंस एलवर्ट का मित्र-प्रेम	२६६
१३५	राजा जनक और विदेह	२६८
१३६	किसान और जन-सेवा	२७०
१३७	महान् बनने की कला	२७२
१३८	महारानी मेरी और ग्रामीण	२७४
१३९	बादशाह का आदर्श	२७६
१४०	पशु के प्रति भी प्रेम	२७७
१४१	भक्ति और रोग	२७९
१४२	सकट में भी धैर्य	२८२
१४३	स्वामी विवेकानन्द की दयालुता	२८४
१४४	नेहरू जी का स्वच्छता-प्रेम	२८६

	विषय			पृष्ठ
१५.	पशुकरकीर्ण चरित्र	---	---	१ ४
१६	बाइबल का सत्यावरण	---	---	१६
१७	लॉकनीज और समय का मुन्व	---	---	१६२
१८.	बापानी महिला का रैड-ग्रैम	---	---	१६४
१९	राधा चन्द्रपीठ की बहारठा	---	---	१६५
१	मुझ उधारसु और ईश्वर	---	---	१६
१ १	बाल की कष्टमाय	---	---	२
१ २	राधा और बुधक	---	---	१ १
१ ३	सात्त्विक जीवन	---	---	१ ४
१ ४	मस्तु-भूमि और ईश्वर-निष्ठ	---	---	१ ५
१ ५	कभीर के प्रश्लोत्तर	---	---	२ ४
१ ६	प्राचीन का मरुतु बाव	---	---	११
१ ७	सावित्रा के निरु त्वाथ	---	---	११९
१ ८.	ईश्वर के अक्षि इड विरवाव	---	---	११४
१ ९	ब्रह्मला राधी और बाया	---	---	११६
११	जीवन का लोन्वर्न विजन-वालय	---	---	११

	विषय	पृष्ठ
१२०	कानिदास और रूप	२३६
१२१	ईर्ष्यालु का वृष्ट	२४०
१२२	पुत्री को पिता की सीख	२४१
१२३	प्रसन्नराय का स्वातन्त्र्य प्रेम	२४४
१२४	नेपोलियन का पक्ष-प्रेम	२४६
१२५	वस्तु का उचित उपयोग	२४८
१२६	प्रकाश की और	२५०
१२७	सच्ची सेवा	२५२
१२८	खुदा की सच्ची वन्दगी	२५४
१२९	माता के प्रेमाश्रु	२५६
१३०	परिश्रम और विनोद	२५८
१३१	रानाडे का भाषा प्रेम	२६०
१३२	नौकरो की स्वामि भक्ति	२६२
१३३	काजी सिराजुद्दीन और बादशाह	२६४
१३४	प्रिंस एलवर्ट का मित्र-प्रेम	२६६
१३५	राजा जनक और विदेह	२६८
१३६	किसान और जन-सेवा	२७०
१३७	महान् बनने की कला	२७२
१३८	महारानी मेरी और ग्रामीण	२७४
१३९	बादशाह का आदर्श	२७६
१४०	पशु के प्रति भी प्रेम	२७७
१४१	भक्ति और रोग	२७९
१४२	सकट में भी धैर्य	२८२
१४३	स्वामी विवेकानन्द की दयालुता	२८४
१४४	नेहरू जी का स्वच्छता-प्रेम	२८६

	विषय			पृष्ठ
४६	ईश की सेवा—समा	---	---	१
४७	प्रार्थना के लाभ प्रमाण की आवश्यकता	---	---	११
४	विश्वास का फल	---	---	११
४८.	अमेरिकन इतिहास की ईसायतापी	---	---	१२
१	सर्वत्र शासक का विस्वास	---	---	१७
११	सम-सम का विश्वास	---	---	११
१२	सुन-बाली का प्रभाव	---	---	११
१३	सम्मान नहीं है वा अनुपेक्षा है ?	---	---	१३
१४	हाकिमगारों का बरोनकार	---	---	१३
१५.	सुन-दान का महत्व	---	---	१
१६	सहायता सुलभता का जन-सैन्य	---	---	११
१	निर्भरता से परिचित अनुपेक्षा	---	---	११२
२	कुलों की बरत	---	---	११४
३	कभी हठि	---	---	११६
४	काशी का ज्ञान	---	---	११७
५	सचिवालय का फल	---	---	१२
६	सचिवालय प्र म	---	---	१२२
७	सचिवालय का प्रकाश प्र म	---	---	१२४
८	सिद्धांत की सुद्धिमत्ता	---	---	१२६
९	प्र म से प्राप्त	---	---	१२
१०	समाधी और सचिवालय	---	---	१३
१	समाधी प्र म	---	---	१३२
१	जीवन की सार्थकता	---	---	१३४
१२	सम से प्राप्त	---	---	१३६
	सहानुभूति	---	---	१३

	विषय	पृष्ठ
७१	मूर्ख ईर्ष्यातु	१८०
७२	त्यागी मे लागी रहे	१४२
७३	खुदा के बदा की सेवा	१८४
७४	दृष्टि का भेद	१४६
७५	दुर्जन के साथ भी सज्जनता	१४८
७६	धन के दृष्टी	११०
७७	नादिरशाह का आदर्श	१५२
७८	सुख कहाँ ?	१५४
७९	महात्मा ईसा का आदर्श	१५६
८०	राज्य-वैभव और त्याग	१५८
८१	सद्व्यवहार	१६०
८२.	स्वाभिमानी वीरागना	१६१
८३	दीवान सागरमल का न्याय	१६३
८४	धन बढ़ा या विद्या ?	१६५
८५	खुशामदी भक्ति और खुदा	१६७
८६,	परिश्रम ही सच्चा सन्तोष	१६९
८७	दयालु सेठ	१७१
८८	सन्तोष और निष्काम भक्ति	१७३
८९	प्रभु को प्रेम ही प्रिय है	१७९
९०	सर्वधर्म समन्वय	१७८
९१	धन दोष-मूलक है	१८०
९२	भोग की वृत्ति, भोग मे नहीं	१८२
९३	संकट मे भी धैर्य	१८४
९४	दान और भावना	१८६

	विषय		पृष्ठ
४६	हॉल की सेवा—कामा	---	९
४७.	मार्चवा के साथ प्रसन्न भी यावत्क	--	११
४	विश्वास का फल	---	११
४२	अमेरिकन इंडियन की ईमानदारी	---	१२
५	घड़ीय बालक का विश्वास	---	१७
५१	राज-राज का विश्वास	---	१९
५२	फल-वाणी का प्रभाव	---	१९
५३	ब्रह्मान : कबकी से वा अनुष्णता से ?	---	१९
५४	हृदयिन्द्राई का परीयकार	---	१९
५५.	पुन-वान वा महत्त्व	---	१५
५६	महत्त्वा सुनिमान वा जल-ईम	---	११
५	निर्भीकता में आरिषद् अनुष्ण	---	११२
५	पुष्पा की परख	--	११४
५	लक्षी दृष्टि	---	११५
५	काशी का ल्याप	---	११५
५१	परिष्कार का फल	---	१२
५	अपराधमे इ म	--	१२९
५१	अगोच वा इया ईम	---	१२४
५	विद्वान् की बुद्धिमता	---	१२५
५१	इ म में वागम	---	१२
५१	आत्मा और परमात्मा	---	११
५	लया ईम	---	११२
५	जीवन की मार्चवना	---	११४
५१	अन मे अरु	---	११५
	महान् ल्यापी	---	११५

	विषय	पृष्ठ
७१	मूर्ख ईर्ष्यालु	१८०
७२	त्यागी से लागी रहे	१४२
७३	खुदा के बंदो की सेवा	१४४
७४	दृष्टि का भेद	१४६
७५	दुजन के साथ भी सज्जनता	१४८
७६	घन के ट्रस्टी	११०
७७	नादिरशाह का आदर्श	१५२
७८	सुख कहाँ ?	१५४
७९	महात्मा ईसा का आदर्श	१५६
८०	राज्य-वैभव और त्याग	१५८
८१	सद्व्यवहार	१६०
८२	स्वाभिमानी वीरागता	१६१
८३	दीवान सागरमल का न्याय	१६३
८४	घन बढ़ा या विद्या ?	१६५
८५	खुशामदी भक्ति और खुदा	१६७
८६,	परिश्रम ही सच्चा सन्तोष	१६९
८७	दयालु सेठ	१७१
८८	सन्तोष और निष्काम भक्ति	१७३
८९	प्रभु को प्रेम ही प्रिय है	१७६
९०	सर्वधर्म समन्वय	१७८
९१	घन दोष-मूलक है	१८०
९२	भोग की वृत्ति, भोग में नहीं	१८२
९३	सकट में भी धैर्य	१८४
९४	दान और भावना	१८६

	विषय		पृष्ठ
१३.	प्लुकरलीय चरित्र	---	१५८
१५	बाइबल का ललाचरस	---	१६
१७	सन्तों का जीवन का सूत्र	---	१६२
१८.	बापाजी महिला का वेद-श्रीम	---	१६४
१९	पन्ना चन्द्रपीठ की उपाख्या	---	१६५
१	पुत्र चन्द्रारस और संतान	---	१६
१ १	बाल की उपमा	---	२
१ २	पत्नी और पुत्र	---	२ १
१ ३	सात्त्विक जीवन	---	२ ४
१ ४	मातृ-भूमि और ईश्वर-लिप्ता	---	२ ६
१ ५.	कभीर के अस्तोत्तर	---	२ ७
१ ६	प्राचीन का परबुद्ध ज्ञान	---	२१
१ ७	सावित्री के निय त्याग	---	२१९
१ ८.	विष्णु के प्रति हृद विरवाह	---	२१४
१ ९	पद्मात्मा पापी और ज्ञान	---	२१६
११	जीवन का लक्ष्य विमल-वाहन	---	२१
१११	कुली का सुखाचल	---	२२
११२	सर्वश्रेष्ठ ज्ञान : शिक्षा प्रधान	---	२२४
११३	ज्वालन मन्त्र और ज्ञान	---	२२६
११४	रामरूप परम हृद और बापबुद्धी	---	२२
११५	सन्त जगन्नाथ और ध्यात-ज्ञान	---	२३
११६	जगन्नाथ का ध्यात-ज्ञान	---	२३३
११	ब्रह्मचर्य ज्ञान और स्वराज्य-प्राप्ति	---	२३४
११	ज्ञानी का बुद्ध की कल्पना	---	२३६
१११	ध्यातक और जीवन	---	२३७

	विषय	पृष्ठ
१२०	कालिदास और रूप	२३६
१२१	ईर्ष्यालु का वृष्ट	२४०
१२२	पुत्री को पिता की सीख	२४१
१२३	प्रसन्नराय का स्वातन्त्र्य प्रेम	२४४
१२४	नेपोलियन का पक्ष-प्रेम	२४६
१२५	वस्तु का उचित उपयोग	२४८
१२६	प्रकाश की और	२५०
१२७	सच्ची सेवा	२५२
१२८	खुदा की सच्ची वन्दगी	२५४
१२९.	माता के प्रेमाश्रु	२५६
१३०	परिश्रम और विनोद	२५८
१३१	रानाडे का भाषा प्रेम	२६०
१३२	नीकरो की स्वामि भक्ति	२६२
१३३	काजी सिराजुद्दीन और बादशाह	२६४
१३४	प्रिंस एलवर्ट का मित्र-प्रेम	२६६
१३५	राजा जनक और विदेह	२६८
१३६	किसान और जन-सेवा	२७०
१३७	महान् बनने की कला	२७२
१३८	महारानी मेरी और ग्रामीण	२७४
१३९	बादशाह का आदर्श	२७६
१४०	पशु के प्रति भी प्रेम	२७७
१४१	भक्ति और रोग	२७९
१४२	सकट में भी धैर्य	२८२
१४३	स्वामी विवेकानन्द की दयालुता	२८४
१४४	नेहरू जी का स्वच्छता-प्रेम	२८६

	विषय			पृष्ठ
१४६.	घारपीं आमात्त नीवन	---	---	१४४
१४७.	ईसन की आनप्रसिद्धता	---	---	१६
१४७.	इबरात मोहम्मद का पच्छिम उपरोध	---	---	२६२
१४८.	कुल्मान बनने की सीपना	---	---	१६४
१४८.	नरीब के घबमान का पद	---	---	२६५
१४९.	उंड कमावन से नाव	---	---	१६४
१५०.	आन विपाना	---	---	१
१५०.	घनेन-वन का च्य घारपीं	---	---	१ १
१५१.	अधु की दवा नर क्या सीना ?	---	---	१ ३
१५४.	महात्मा गांधी की घडाभारत आना	---	---	१५७
१५५.	आरतोव नरेणो को गांधी की का उपरोध	---	---	१ ६
१५६.	महात्मा गांधी का घारपीं	---	---	१६१

किसान और स्वर्ण-थाल :



एक समय की बात है,

विश्वनाथ के मन्दिर में स्वर्ण का एक थाल गिरा, और उमी समय ध्वनि हुई, कि जो वास्तव में सच्चा भक्त होगा, उसको ही यह स्वर्ण-थाल मिलेगा।

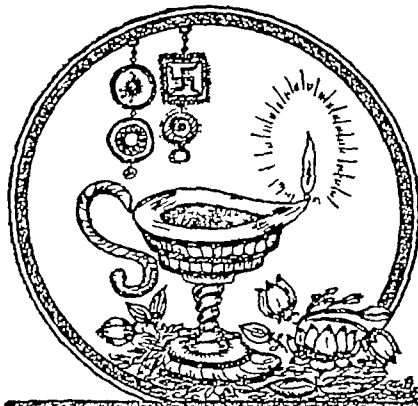
जिम राजा ने वह मन्दिर बनवाया था, वह आया और प्रमत्तता पूर्वक कहने लगा कि—मैंने ही इस मन्दिर का निर्माण कराया है। मेरे से अधिक सच्चा भक्त कौन हो सकता है ? इसलिये यह थाल तो मुझे ही मिलना चाहिये। राजा ने स्वर्ण-थाल को अपने अधिकार में लेने के लिये जैसे ही थाल को स्पर्श किया, उसी क्षण वह स्वर्ण-थाल लोहे का बन गया।

इसके पश्चात् सेठ जी आये और उनका मन भी स्वर्ण-थाल को लेने के लिये ललचा उठा। सेठ जी बोले कि—मैं दिन भर गरीबों को दान देता हूँ, इसलिये मेरे से अधिक सच्चा भक्त कौन होगा ? सच्चा भक्त होने के नाते यह थाल मुझे मिलना चाहिये। जैसे ही सेठ जी ने उस स्वर्ण-थाल को ग्रहण करने के लिये हाथ लगाया, वह स्वर्ण-थाल फिर से लोहे का हो गया।

	विषय		पृष्ठ
१८१.	पारस्य साम्राज्य जीवन	---	२ ७
१८२.	ईजिप्ट की प्रामाणिकता	---	२६
१८३.	एबराहम मोहम्मद का अन्तिम उपदेश	---	२६२
१८४.	मुन्नाज बनने की बीम्या	---	२६४
१८६.	बरीय के अफसान का फल	---	२६९
१९	ईत क्वाबम है जान	---	२६७
१९१	आज विपत्ति	---	३
१९२	अलेब-बन का बच्य पारस्य	---	३ ९
१९३	अबु की क्या पर क्या बीना ?	---	३ ८
१९४	महात्मा गांधी की अफाफादरुह बना	---	३१७
१९६.	माधुमि बीरों को बीरों की का अफदेठ	---	३ ८
१९६.	महात्मा गांधी का अफदेठ	---	३१६

भिखारी के हजार-हजार मूक आशीर्वाद लेकर जब वह भोला किसान मन्दिर पहुँचा और उसने उस धाल को ग्रहण किया, तो वह स्वर्ण का ही बना रहा। देखिये, विद्वानों ने भी कहा है कि सच्चा भक्त या धर्मात्मा तो कोई बिरला ही होता है —

परोपदेशे पाण्डित्य, सर्वेषां सुकर नृणाम् ॥
धर्मं स्वोयमनुष्ठान कस्य चित्तु महात्मन ।



कुछ समय पश्चात् एक पंडित जी पूजा के लिये गंगा जल लेकर मन्दिर की तरफ चले आ रहे थे। रास्ते में एक हीन मिचारी प्यासा बिल्सा रहा था। उस मिचारी ने पंडित जी से जल पिाने को कहा ता पंडित जी ने उस प्यास से तटपते हुए मिचारी की जल नही मिलाया। पंडित जी कहने लगे कि यह जल पूजा के लिये है। इस पर यदि तरो प्यासा भी पड गई, तो यह जल अपवित्र हो जायगा। इस प्रकार यह जल फिर पूजा के योग्य ही नही रहा।

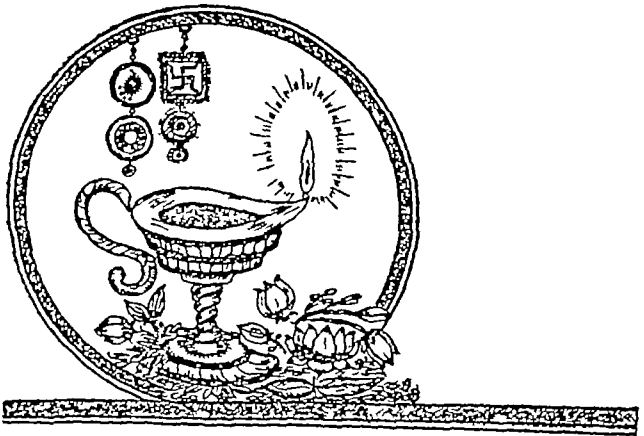
पंडित जी मन्दिर में आये तो उनको भी मातूम पड़ा कि यह स्वयं-जान सच्चे भक्त को ही मिल सकता है। इसलिये पंडित जी ने भी अपने का मन्त्रा भक्त ब्यक्त करते हुए जल सेना चाड़ा। परन्तु जैसे ही पंडित जी ने जल मिया यह उसी प्रकार से फिर लोहे में परिवर्तित हो गया।

कुछ क्षणों के पश्चात् एक मोठा किसान जल लेकर मन्दिर में पूजा करने के लिये आ रहा था। उस प्यसे मिचारी ने उससे भी पानी मांगा। किसान के हृदय में दया का सामर हिमारे सेने लना। किसान उसी क्षण बोला—“इसमें मेरी क्या हानि है। तुम तो सचमुच प्राण-मुक्त भगवान् हो। इससे थ थके मेरा क्या सीमाय हो सकता है कि पूजा करने के लिये जाता हुआ मार्ग में एक प्यासे को पानी पिनाऊँ।”

उस प्यास से तटपते मिचारी ने अपनी प्यास कुम्हार धीर जैसे ही उस पटीब मिचारी ने ससुपूर्ण धीरों से किसान की तरफ देखा तो किसान को उस मिचारी के टपकते आँसुओं से एक विष्य-सचिन प्रतीत हुई धीर यह किसान इतना प्रसन्न हुआ कि जैसे सचमुच उसे भगवान् के ही दर्शन हो जये हों।

भिखारी के हजार-हजार मूक आशीर्वाद लेकर जब वह भोला किसान मन्दिर पहुँचा और उसने उस थाल को ग्रहण किया, तो वह स्वर्ण का ही बना रहा । देखिये, विद्वानो ने भी कहा है कि सच्चा भक्त या धर्मात्मा तो कोई बिरला हो होता है —

परोपदेशे पाण्डित्य, सर्वेषा सुकर नृणाम् ॥
धर्मं स्वीयमनुष्ठान कस्य चित्तु महात्मन ।



भ्रातृ-प्रेम



कीरवों ने पाँडवों को बनवास लेकर बहुत प्रसन्नता का अनुभव किया। अपनी विजय के उपलक्ष में उत्सव का आयोजन करने हेतु पर्वों के बीच में पड़े। कीरवों ने अपने उत्सव के उपलक्ष उसी बाग को उचित समझा।

बनवों ने अपने बाग की हानि होने की सम्भावना देखकर बड़ी उत्सव करने से मना किया। कीरवों ने भी हठपूर्वक वही उत्सव करने का निश्चय किया। परन्तु जब पर्वों को अपने बाग को रक्षा हेतु कटिबद्ध देखा, तो अन्य कीरव तो भाग पड़े परन्तु दुर्योधन को पकड़ लिया।

जब इस सम्बन्ध में युधिष्ठिर को सूचना मिली कि दुर्योधन का पकड़ने में पकड़ लिया है तो उसके मन में भाई का बाल बिल प्रेम द्विगुण से बढ़ गया और समझने लगा गया। उसने तत्काल ही पकड़ने से कहा कि तुम अभी जाओ और तुरन्त दुर्योधन का मुखाधो।

हम भाई-भाई आपस में चाहे जितना लडे, परन्तु जब कोई अन्य हमारे साथ लडता है, तो हम एक-सौ पाँच भाई एक हैं। यदि हम इसी नीति के अनुसार रहेंगे, तो कोई भी शत्रु हमारा बाल बाँका नहीं कर सकता है।

यदि दुर्योधन अन्य किसी के बन्धन में रहता है, तो इसमें हम सब का अपमान है। भाई-भाई से पराजित हो, तो इसमें अपमान जैसी कोई बात नहीं है, परन्तु अन्य किसी का बन्धन हम स्वीकार नहीं कर सकते हैं। हम आपस में लडकर भी अन्त में दूसरों के सामने एक हैं।

वय पच वय पच वय पच शताधिका ।

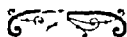
परस्पर-विवादे तु यूय यूय वय वय ॥

इस प्रकार युधिष्ठिर के वचन का पालन करने के लिये अर्जुन तुरन्त ही दुर्योधन को छुड़ाने के लिये चल दिया और उसको गधवों के बन्धन से मुक्त कर अपने भाई के प्रति अपूर्व-प्रेम प्रदर्शित कर एक महान् आश्रय उपस्थित किया।

नीति के निम्न श्लोक में स्पष्ट कहा है कि भाई वही है, जो आपत्ति में साथ दे—

आपत्सु मित्र जानीयात्, युद्धे शूर मृगे शुचिम् ।

भार्या क्षीणेषु वित्तेषु व्यसनेषु च वान्धवान् ॥



धर्म युद्ध



एक समय मुहम्मद साहब के मित्र बहादुर हजरत यानी साहब युद्ध करते समय घना घन की पृष्ठी पर विरा कर उसकी छाती पर सवार हो गये। तिस समय घन पृष्ठी पर पडा प वह उसका सर काटने ही चाहे प कि घन को नीचे पड़े-पड़े एक युक्ति सूझ गई और उमने उसी क्षण घनी साहब के मुह पर चुक लिया।

इस प्रकार युद्ध पर चूमने से घनी साहब को सहमा क्षोभ था यथा और शत्रु को भार डालने के लिये जैसे ही उन्होंने अपने हाथ दबाए तो उमी उस उमके घस्टर से एक शक्ति हुई। घनी साहब ने उसी समय उसका जो समय शत्रु दिया और घन का मुक्त करके घनक लड़े हो गये।

घना साहब के इन कार्य से उनका धन बहुत बलिग हुआ और पूछा कि— आपने ऐसा क्यों किया ? घनी साहब चाहे—
 'मया धर्म एव कर्मस्य-परायणता हेतु मै युद्ध कर रहा था।
 शत्रु-धर्म एव कर्मस्य-परायणता करने समय यदि हम दोनों

मे से कोई भी मृत्यु को प्राप्त हो जाता, तो कोई चिन्ता की बात नहीं थी। परन्तु जैसे ही आपने मेरे मुँह पर थूका, तो मेरे क्रोध का ठिकाना न रहा और मेरे अन्दर सहसा अहंकार की लहर दौड़ गई।

उसी क्षण मेरे हृदय से एक आवाज आई, कि अब शत्रु को मारना अधर्म है। जब तक आपने मेरे मुँह पर नहीं थूका था, उस क्षण तक मैं सत्य-धर्म एवं अपने कर्त्तव्य के मार्ग का अनुसरण करता हुआ युद्ध कर रहा था। परन्तु जैसे ही आपने मेरे मुँह पर थूक दिया, वैसे ही मेरे क्रोध का ठिकाना न रहा और मैं कर्त्तव्य से हट कर व्यक्तिगत द्वेष के लिये लड़ने लगा।

उसी समय मेरे मन में एक विचार-क्रान्ति आई और मैं तलवार फेंकने के लिये बाध हो गया। यदि उस समय मैं आपको मार देता, तो व्यक्तिगत द्वेष के लिये बंध किया हुआ गिना जाता और मेरी गिनती अधम पुरुषों में होती।

अली साहब ने अपने शत्रु को फिर से लड़ने के लिये ललकारा, परन्तु अली साहब की आदर्शमय कर्त्तव्य परायणता से उनका शत्रु इतना प्रभावित हो चुका था, कि उसने अली साहब के सामने घुटने टेक दिये और अपनी पराजय स्वीकार कर ली।



धर्मान्धता



धर्म एव ह्यतो हन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः ।

तन्माच्छर्मा न हन्तव्यो ना नो धर्मो ह्यतोऽधीत् ॥

घोरयवेन बादशाह के समय में धर्मान्धता एवं धर्त्याचारों का बोम-बाना रहा। इसी कारण से उस काल में हिन्दुधर्म पर बहुत ही धर्त्याचार हुए। यहाँ तक कि सामु एवम् सभ्यत पुरय भी इन धर्त्याचारों की जपेटों से न बच सके।

धर्त्याचारों के फलस्वरूप ही उस समय से मुगल बादशाहों के पठन का इतिहास प्रारम्भ हुआ। यहाँ तक कि बादशाह ने बुद्धिमत् या सफट-काल में भी हिन्दुधर्म को धर्म तक नहीं दिया और बड़ी फसलों को नष्ट करा दिया।

बादशाह की धीर से धर्म्य सम्प्रदाय धर्मों का धर्म परिवर्तन कराने के लिये साहो करमान निकले। इतना ही नहीं यह भी धारणा की गई कि जो भी हिन्दू इस्लाम-धर्म का स्वीकार न करे, उमता मिर तनवार से उदा हो धीर जो हिन्दू इस्लाम-धर्म स्वीकार करे उसे मीझपी न धन्य हो।

यह प्रवृत्ति सर्व प्रथम काश्मीर में प्रारम्भ हुई। तेगवहादुर ने ब्राह्मणों से कहा कि—तुम बादशाह से कहो कि यदि हमारा नेता तेगवहादुर इस्लाम-धर्म स्वीकार कर ले, तो हम भी कर लेंगे।

इस प्रकार जनता में उत्तेजना भरने एवं फुसलाने के लिये बहुत-सी युक्तियाँ निकाली गईं, जिमसे अधिक से अधिक जनता इस्लाम-धर्म स्वीकार कर ले। बादशाही फरमान की जिन लोगों ने अवहेलना की, उनको मौत के घाट उतार दिया गया।

देखिये, उर्दू के मशहूर शायर 'मीर' ने कहा था—

“मीर साहब गर फरिश्ता हो तो हो ।
छादमी होना रुगर दुश्वार है ॥”



एकाग्रता-पूर्वक प्रार्थना



मुजनामपुर के बादशाह ने एक बार गुरु नानक से कहा कि—तुम इस्लाम-धर्म सम्बन्धी बहुत बड़ी-बड़ी बातें करते हो इसलिये आज मेरे साथ नवान् पढ़ो।

गुरु नानक ने सहर्ष नवान् पढ़ना स्वीकार कर लिया। परन्तु जब बादशाह नवान् पढ़ने लगे तो गुरु नानक एक तरफ बढ़े ही गये। नवान् पढ़ने के पश्चात् बादशाह ने पूछा— 'तुमने मेरे साथ नवान् क्यों नहीं पढ़ी?' इस पर गुरु नानक ने जवाब दिया— 'तुम यहाँ के ही कब खो मैं तुम्हारे साथ नवान् पढ़ता। तुम्हारा शरीर सबस्य प्रार्थना या नवान् में जया हुआ प्रतीत होता था परन्तु मन तो तुम्हारा नवान् में संलग्न न होकर काबुल की ओर कर रहा था।

इस पर बादशाह ने सातह-पूर्वक पूछा तो गुरु नानक ने स्पष्ट कह दिया कि तुम्हारा मन तो काबुल में चोड़े शरीरने में व्यस्त था। मीनबी साहब भी नवान् पढ़ते समय अपने बख्त की चिन्ता में थे कि कहीं बख्त का दुर्ल में न फिर जाय।

इस प्रकार गुरु नानक की बात सुनकर वादशाह चुप हो गया और बोला कि यह सत्य है—“ईश्वर की उपासना करते समय मन एकाग्र होना चाहिये। एकाग्र-मन से की गई भक्ति या उपासना ही सच्ची उपासना है। उपासना के समय में भी यदि सासारिक कार्यों में मन भटकता रहा, तो इस प्रकार की प्रार्थना से कोई लाभ नहीं है। वास्तव में उपासना एकाग्र-मन से ही होनी चाहिये।



सर्वत्र ईश्वर



एक समय का प्रसंग है कि गुरु नानक मक्का की यात्रा को गये। मक्का-यात्रा करते समय वहाँ पर वे विधाम करने के लिये काबा की तरफ पैर करके खो गये।

काबी जी गुरु नानक के इस कार्य से बहुत नाराज हुए और बोले कि इस प्रकार काबे की तरफ पैर करके सोना धर्म बिच्छू है।

काबी जी के वाक्य सुनकर गुरु नानक सद्गुरु स्वभाव से बोले कि काबी जी इतने नाराज क्यों होते हो? धाव मेरे पैरों को चम तरफ कर दीजिये जिस तरफ मुझा न हो। गुरु नानक की बात सुनकर काबी जी चुप हो गये क्योंकि ईश्वर सब व्यापी है।

धर्मराज और कुत्ता :



एक समय धर्मराज युधिष्ठिर स्वर्ग की यात्रा करने के लिये चले। हस्तिनापुर से एक कुत्ता भी उनके साथ हो गया। इस प्रकार पत्नी, भाई एव कुत्ते के साथ युधिष्ठिर चले जा रहे थे।

मार्ग में पर्वतारूढ़ होते समय उनकी पत्नी एव भाई नीचे गिर पड़े और उनका अन्तकाल हो गया।

धर्मराज और कुत्ता, लम्बी यात्रा को पार करते हुए स्वर्ग के द्वार पर जा पहुँचे। जिस समय इन्द्र के सामने पहुँचे तो इन्द्र ने कहा कि—“युधिष्ठिर इस अपवित्र श्वान का त्याग कीजिये, तभी स्वर्ग में प्रवेश की अनुमति मिल सकती है।” इस प्रकार इन्द्र के वचन सुनकर युधिष्ठिर बोले कि—“यह श्वान तो मेरे माय ही रहेगा। इस श्वान को मेरे से अलग नहीं किया जा सकता है।”

इस पर इन्द्र ने धर्मराज से कटाक्षपूर्ण शब्दों में कहा कि—“आपने पत्नी एव भाई का तो त्याग कर दिया। उनका ममत्व आपको आकर्षित न कर सका, तो फिर इस श्वान के प्रति क्यों

सर्वत्र ईश्वर



एक समय का प्रसंग है कि कुछ गानक मक्का की यात्रा को गये। मक्का-यात्रा करते समय वहाँ पर वे विद्याम करने के लिये काबा की तरफ पैर करके खो गये।

काजी जी गुरु नानक के इस कार्य से बहुत नाराज हुए और बोले कि इस प्रकार काबा की तरफ पैर करके छोटा बर्ग बिलय है।

काजी जी के वाक्य सुनकर गुरु नानक सहज स्वभाव से बोले कि काजी जी इतने नाराज क्यों होते हो? आप मेरे पैरों का उम तरफ कर बीजिये जिस तरफ खुदा न हो। गुरु नानक की बात सुनकर काजी जी चुप हो गये क्योंकि ईश्वर सब व्यापी है।



विद्यार्थी की उदारता :



एक समय की बात है कि कलकत्ते में दो मित्र एक ही स्थान पर रहते थे। दोनों एक ही कक्षा में थे, और साथ-साथ ही अध्ययन-क्रम को चलाते थे। उनमें से एक विद्यार्थी प्रथम श्रेणी में पास होता था, और दूसरा द्वितीय श्रेणी में। उनका बहुत समय तक यही क्रम चलता रहा।

एक बार प्रथम श्रेणी में पास होने वाले विद्यार्थी की माता जी बोमार पड गई। उसने अपना अधिकांश समय अपनी माता की सेवा शुश्रूषा में लगाया। इसी कारण से सब मित्रों को विश्वास हो गया, कि इस बार द्वितीय श्रेणी में पास होने वाला लड़का प्रथम पास होगा और प्रथम श्रेणी में पास होने वाला लड़का द्वितीय श्रेणी में पास होगा।

दोनों ने परीक्षा दी, परन्तु परिणाम वही जैसा कि पहले से रहता आया था। प्रथम श्रेणी में पास होने वाला लड़का इस बार अपनी माता की सेवा में अधिक समय लगाने पर

ज्ञाना ममत्व है ? हम अपवित्र स्वाम का प्रेम क्यों आपको साथ रखने के लिये प्रेरित कर रहा है ?”

सुबिष्टुर बोले कि— “भाई एवं पत्नी का मैंने त्रीभित्त प्रवस्था में त्याग नहीं किया है। मृत्यु के परवान् मृत व्यक्ति के पास बैठे रहना यह मोक्ष का काम है।

“जीवन में साथी चाहे मनुष्य हो या पशु उसका साथ कभी नहीं छोड़ना चाहिये। साथी का त्याग करना या उसके साथ विश्वासघात करना एक बहुत बड़ी भूल है।”

“यह कृत्ता बन एक बनवास में लषा मेरे साथ रहा है। इस कुत्ते ने बहुत बड़ी मजिब को पार करने के लिये मेरा साथ दिया और कदम से कदम मिसाकर कठिन यात्रा की है। इस प्रकार इस बेचारे सूक-श्राणी का किस प्रकार छोड़ दू ? मेरा हृदय अन्तर से इस बात के लिये गवाही नहीं देता है कि इस कुत्ते का धर साथ छोड़ दू ओ कि बहुत बड़ी मजिब को पार करके मैं मेरा सहयोगी रहा है।”

धर्मराज की इस अत्युर्ध्व धर्म-निष्ठा एवं हृदय विचारों से इन्द्र बहुत प्रभावित हुआ और उस स्वाम के प्रति उनका मन भी दया से भर गया। कहा भी है —

“माहित-तुल्यं त्वो नास्ति च कर्मोऽन्तरं सुखम् ।

न सुखदया : तपो व्याधिर्न च कर्मो स्वभारः त”

इन्द्र ने यह देखा कि सुबिष्टुर अपने विचारों पर हड़ है। धीर कुत्ते का साथ न छोड़ कर स्वामी का मोक्ष त्यागने की तैयार है तो उसे बहुत प्रसन्नता हुई और दोनों के लिये स्वर्ग के द्वार खोल दिये।



बालक का साहस :



एक वार इंग्लैंड के राजा जेम्स द्वितीय के पौत्र प्रिन्स चार्ल्स प्रथम, जार्ज के सेनापति से परास्त होकर प्राण बचाने के लिये स्कॉटलैंड की पहाड़ियों में छिप गये ।

यह घोषणा की गई कि जो भी उसका सर काट कर लायेगा, उसे चार लाख रुपये का इनाम मिलेगा । चारों तरफ प्रिन्स चार्ल्स की खोज प्रारम्भ हो गई ।

कुछ समय के पश्चात् एक खोजकर्ता कैप्टिन ने एक बालक से पूछा कि तुमने प्रिन्स चार्ल्स को देखा है ? बालक बोला— जाते हुए तो मैंने देखा है, परन्तु यह नहीं बतलाऊंगा कि कब और किस रास्ते से जाते हुए देखा है ।

कैप्टिन ने तलवार निकाली और बालक को भय दिखलाना चाहा । इस पर जब लड़का सब भेद बतलाने को तैयार न हुआ, तो बालक पर तलवार से प्रहार भी किया गया । बालक का कण्ठ क्रन्दन हुआ । परन्तु बालक ने बहादुरी के साथ कहा— “मैं इस घातक प्रहार के कारण से ही चिल्लाया हूँ । मैं

मी परीक्षा में प्रथम थाया था मित्रों एवं परिचितों को बहुत भारभर्य हुआ ।

धम्मपापका ने उनके प्रश्नोत्तरों की जाँच की तो पता लगा कि द्वितीय श्रेणी में पास होने वाले विद्यार्थी ने एक प्रश्न का उत्तर ही नहीं दिया । जब उससे पूछा गया कि तुमने ऐसा क्यों किया था वह विद्यार्थी बोला—माय भोगों में इतनी छान चीन क्यों की है । यह सब मैंने ध्यान-बुझकर किया है ।

विद्यार्थी बोला— मेरे मित्र की माता बीमार पड़ी थी इसलिए वह अपनी माता की सेवा करने में लगा रहा । इसी कारण से उस बीमारे को पढ़ने का समय कम मिल पाया है । वास्तव में वह मेरे से योग्य है और प्रथम श्रेणी में ही पास होने का अधिकारी है । यदि इस वर्ष मैं प्रथम पास हुआ जाता तो मेरे मित्र का उम्मीद भंग हो जाता । इसी लिये मैंने एक प्रश्न का उत्तर ही नहीं दिया जिससे कि मेरा मित्र सदा की तरह इस बार भी परीक्षा में प्रथम था सके ।”

संसार में सच्चे मित्र किसी माम्बवान् को ही मिलते हैं । कहा भी है—

ए प्रदीपैस्तुचरितं स्तिरं तदुच्यते
 वाचनपुरैव हितमिच्छति लक्ष्मणम् ।
 तन्निवृत्तान्नि तुष्टे च तमपिचं यः
 दृश्यन् वनति पुञ्जहसो नक्ते ॥

बालक का साहस :



एक वार इंग्लैंड के राजा जेम्स द्वितीय के पौत्र प्रिन्स चार्ल्स प्रथम, जार्ज के सेनापति से परास्त होकर प्राण बचाने के लिये स्कॉटलैण्ड की पहाडियों में छिप गये ।

यह घोषणा की गई कि जो भी उसका मर काट कर लायेगा, उसे चार लाख रुपये का इनाम मिलेगा । चारों तरफ प्रिन्स चार्ल्स की खोज प्रारम्भ हो गई ।

कुछ समय के पश्चात् एक खोजकर्ता कैप्टन ने एक बालक से पूछा कि तुमने प्रिन्स चार्ल्स को देखा है ? बालक बोला— जाते हुए तो मैंने देखा है, परन्तु यह नहीं बतलाऊंगा कि कब और किस रास्ते से जाते हुए देखा है ।

कैप्टन ने तलवार निकाली और बालक को भय दिखलाना चाहा । इस पर जब लडका सब भेद बतलाने को तैयार न हुआ, तो बालक पर तलवार से प्रहार भी किया गया । बालक का कण्ठ क्रन्दन हुआ । परन्तु बालक ने बहादुरी के साथ कहा— “मैं इस घातक प्रहार के कारण से ही चिल्लाया हूँ । मैं

मेकर्सन बंस का वाक्य है इसलिये तमवार के भय से डरने वाला नहीं है।”

इसके पश्चात् बालक बोला—“संकट में घाये हुए राजा को सन्तु के हाथों में फँसाने के लिये मैं सहायक नहीं बनूँगा। मुझे घायप कितना भी कष्ट दीजिये परन्तु मैं अपने प्रण से विचलित नहीं हो सकूँगा।

केप्टिन उस बालक की बोरणा साहस एवं दृढ़ता से बहुत प्रभावित हुआ और प्रसन्न होकर उस बालक को चौरी का श्राव (ईसाई धर्म का एक चिन्ह) इनाम में दिया। मेकर्सन बंस के लोग धाक भी इस इनाम को सम्मान पूर्वक रखते हैं।



पुरुपार्थी-युवक :



एक युवक ने अमेरिका के विश्वविद्यालय से बी० ए० की डिग्री प्राप्त की। युवक निर्बल था, इसलिये शीघ्र ही उसे नौकरी की खोज करनी पड़ी।

उस युवक ने इधर-उधर अपने योग्य कार्य की बहुत खोज-बीन की, परन्तु उसे सफलता न मिल सकी। इससे उसके मन में कुछ निराशा के बादल छा गये, परन्तु उसने प्रयत्न करना नहीं छोड़ा।

अन्त में उसने एक धनवान् सेठ के पास जाकर विनय-पूर्वक नौकर रख लेने की प्रार्थना की। पहले तो सेठ ने उस पढ़े-लिखे अपटूडेट लडके को रखने से मना कर दिया, परन्तु जब युवक ने बहुत आग्रह किया तो सेठ ने उसको नौकर रख ही लिया।

सेठ जी ने उस युवक को चार आने प्रतिदिन की मजदूरी पर घर व दुकान आदि की सफाई करने के लिये रखा। युवक

ने सहर्ष हम कार्य का करने की स्वीकृति द दी और उही दिन से सेठ जी के सही परिश्रम पूरक कार्य करने लगा ।

पुबक ने अपने परियम एवं कर्तव्य-नरायणता से सेठ जी की सहानुभूति पीछ ही प्राण कर ली । सेठ जी ने प्रसन्न होकर उसे शय्य कर्मचारियों की देग-रेल का कार्य दे दिया और उसकी मजदूरी भी माठ घाने प्रतिदिन कर दी ।

उस पुबक के परियम ने सेठ जी को इतना प्रभावित किया कि सेठ जी ने उसका घयना हिस्संगर बना लिया ।

बहु पुबक का एक दिन सच्यई घादि की चार घान प्रतिदिन पर मजदूरी करता का घयन परिश्रम पुबुगार्थ एक सदन से पीछ ही बहुत बड़ा बनवान् बन गया ।



रानी की सच्ची सहानुभूति :



एक समय इटली की रानी मारग्रोट पर्वत पर चढ़ रही थी। पर्वत पर चढ़ते समय मार्ग में भयकर आँधी व तूफान आ गया। रानी सकट में पड़ गई। उसने बहुत साहस के साथ अपने कदम आगे बढ़ाने चाहे, परन्तु तूफान के वेग ने उसे आगे बढ़ने से असमर्थ कर दिया।

रानी ने आल्पाइन के एक छोटे-से वगले में जाकर आश्रय लिया और इस प्रकार अपने प्राणों की रक्षा की।

रानी के वगले में प्रवेश करते ही वहाँ के कर्मचारी वगला छोड़कर बाहर जाने लगे, जिससे कि रानी को कोई असुविधा न हो।

इस पर रानी ने कर्मचारियों से कहा कि तुम लोग वगला छोड़कर बाहर क्यों जा रहे हो? इस भयकर तूफान में अपने प्राणों को सकट में क्यों डाल रहे हो। यह सकट का समय सब

के नियम हैं। जीवन में प्रत्येक मनुष्य को बुद्ध व गुण की पहिचान देवनी पड़ती है। बुद्ध व गुण का नाम ही तो बुद्धिमान है।

अन्त में रानी ने सभी धारमियों को बंयसे के अन्तर बुलाया और कहा कि तुम सब सोम मेरे देश के नागरिक हो इसलिए सब की रक्षा करना मेरा पहला धर्म है।

रानी ने सब से प्रेम-पूर्वक कहा कि यदि यहाँ अपहृ के धमाक से इस समय हम सब बैठ भी न सके तो बड़े-बड़े हो इस संकट के समय को साहस के साथ पार कर लेंगे।

रानी की इस अपार सहानुभूति एवं साहस्यता से सभी अवस्थित कर्मचारी बहुत ही प्रसन्न हुए और मुक्त कंठ से रानी की प्रशंसा करने लगे।



महारानी की सहृदयता :



महारानी विक्टोरिया चार घोड़ों की गाड़ी में बैठकर हवा खाने जाया करती थी। एक दिन वह इसी प्रकार खूब अच्छी प्रकार सजी हुई गाड़ी में जा रही थी। उसके अग-रक्षक भी उसके साथ थे।

मार्ग में रानी ने एक आदमी, उसकी पत्नी एवं एक छोटी कन्या को देखा, जो कि एक मृत बालक को लेकर दफनाने जा रहे थे।

रानी ने जब देखा कि केवल तीन प्राणी ही इस मृत बच्चे के शव को ले जा रहे हैं और जिनमें भी बच्चे का पिता, माता व बहन है। उस दृश्य को देखकर रानी के मन में यह विचार आया कि मरने के पश्चात् धनवानों की शव-या व्यक्ति होते हैं। परन्तु गरीब एवं दीन-दुखियों के कष्ट में भी कोई साथ नहीं देता है। रानी की आंखें भर आईं।

लोग इकट्ठे हुए कि कुछ ही

उस व्यक्ति ने वह मरी हुई टोपी उस मिचारी को प्रणम की और स्वयं बलदा बना। मिचारी चिक्छों से मरी टोपी को पाकर अव्यक्त प्रसन्न हुआ। इससे उस दीन-पुत्री मिचारी की मरीची दूर हो गई और वह सुख-पूर्वक अपना जीवन व्यतीत करने लगा।

वह व्यक्ति यूरोप का एक महान् सचीवज्ञ था जो कि संघीत-शासन के लिये समस्त यूरोप् में प्रसिद्ध था।

उसने सारंगी गरीब मिचारी के सहायार्थ ही बजाई की और इस कार्य के द्वारा उसने गरीब मिचारी की सहायता की और उसकी गरीबी को बहुत कुछ धरों में दूर कर दिया। इस प्रकार उस अमर कमाकार ने अपनी कला का सद्व्यय किया और सब की प्रशंसा का पात्र बना।



पराधीनता :



एक गोपस्वामी बंगाल प्रदेश के रहने वाले थे। वह प्रभु के बहुत ही भक्त थे। बाल्यावन्या से ही उनका ध्यान प्रभु-भक्ति की तरफ लगा हुआ था। गौड़ राज्य के बादशाह अनाउद्दीन के यहाँ वे बर्जोर के पद पर भी कार्य किया करते थे।

बादशाह न्य गोपस्वामी के कार्य में बहुत ही प्रसन्न एवं मगुष्ट रहने थे। इसलिये वे बर्जोर का बहुत ही सम्मान करते थे।

एक बार वे गवरे ही दरवार में जा रहे थे। रास्ते में बहुत लोग में वर्षा होने लगी। वर्षा में भी वे गले नहीं हूण और दरवार की ओर बरस बताने ही रहे।

राजा ने उन बर्जोर देखा कि एक गरीब निगानी की पत्नी अपने पति में निष्ठा माँग लाने या आरुष्ट कर रही थी। निगानी यह था कि इन मृतकपार बराने पानी में

गुपाम या नौकरी करने वाले के विषय कोई भी बाह्य नहीं था करता है। कुले और धर्म बीच-बन्तु भी ऐसी भयंकर बर्षा में बाहर नहीं निकलते हैं। फिर मैं तो एक इन्सान हूँ।

रूप गोपस्वामी को मिश्रक की बात सुनकर बहुत पार्श्व हुआ। उन्होंने सोचा कि एक मिश्रक को कि मिश्रा भयंकर अपने परिवार का पालन-पोषण करता है बर्षा में मिश्रा के लिये जाने को तैयार नहीं है। परन्तु मैं बजीर के एक बड़े पद पर होतों हुए भी राज्य-वरवार मे अपनी नौकरी पर बर्षा में जा रहा हूँ।

मिश्रक के पद बजीर साहब के कानों में घुबने लगे और उन्होंने सोचा कि नौकरी चाहे कितने ही बड़े पद की बर्षों न हो पाकिर ता नौकरी ही है। नौकरी में मनुष्य पराधीन हो जाता है और बन्धन का अनुभव करता है।

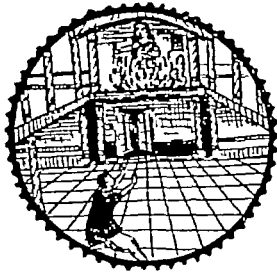
बजीर साहब के मन में ये छाप घुबने लगे —

“पराधीन सपनेह मूल नाही।”

रूप गोपस्वामी को अपनी नौकरी से उठी छाप बूझा हो गई थीर उन्होंने सोचा कि मैं भगवद्भक्ति के पवित्र मार्ग को त्याग कर इस मन्त्री के पद पर घासीन होकर मल्ल हो गया हूँ। वास्तव मे मेरा यह जीवन विरर्भक है और पद से मा धर्म बीचन कलौठ हो रहा है। इन पराधीन जीवन को त्याग कर पार्श्व-विस्तार मे ही शेष जीवन की जगाना श्रेष्ठ मार्ग है।

इस प्रकार विचार करके उन्होंने उठी दिन बादशाह के समक्ष अपनी त्याग-पत्र है दिया और मन्त्री के महान् पद से अपनी मुक्ति पाकर भक्त्य महाप्रभु के अनुयायी बन गए।

वर्षों तक ज्ञानाराधन किया और आत्म-ज्ञान की खोज में लीन रहे। उन्होंने वृन्दावन में श्याम-कुण्ड और राधा-कुण्ड भी बनवाये। इस प्रकार उन्होंने इतने बड़े पद को त्याग कर अपने ज्ञानाराधन एवं चिन्तन-मनन द्वारा शेष जीवन को उत्तम मार्ग पर लगाया एवं ससार में भी यज्ञ प्राप्ति की और अपने शुभ कर्मों के द्वारा आगे भी अच्छी गति प्राप्त की।



न्यायाधीश का न्याय



एक समय का प्रसंग है कि बयबारा के खलीफ़ा के मन में अपने महल के विस्तार का विचार उत्पन्न हुआ। महल के पास ही एक गरीब बुढ़िया की झोंपड़ी भी थी। उस झोंपड़ी को खलीफ़ा साहब हटाकर महल बढ़ाना चाहते थे।

खलीफ़ा साहब ने बुढ़िया से झोंपड़ी की माँग की। बुढ़िया झोंपड़ी देने का तैयार नहीं हुई। खलीफ़ा साहब ने बुढ़िया को पैसों का भी लोभ दिया, परन्तु बुढ़िया ने इस पर भी झोंपड़ी देने से साफ़ मना कर दिया।

खलीफ़ा साहब ने गरीब बुढ़िया की झोंपड़ी पर बमपूर्वक अधिकार कर लिया। बुढ़िया ने न्यायालय में न्याय के लिये प्रार्थना की।

न्यायाधीश बुढ़िया और खलीफ़ा के बीच न्याय करने के लिये जन दिये। काबू न्यायाधीश खलीफ़ा के पास गया और कहा कि मुझे यहाँ से कुछ मिट्टी पारनी है।

खलीफा ने काजी जी को मिट्टी खोदने की स्वीकृति प्रदान कर दी। काजी जी ने बहुत-सी मिट्टी खोदकर थैला भर लिया। काजी जी ने थैले को उठाने के लिये खलीफा से सहायता करने को कहा।

खलीफा साहब ने बहुत प्रयत्न किया, परन्तु उस मिट्टी के थैले को उठा न सके। इस पर न्यायाधीश काजी जी बोले कि खलीफा साहब, तुमने दूसरे की भूमि पर बल-पूर्वक अधिकार किया है। जब तुम पराई जमीन के एक छोटे-से भाग से खोदी हुई मिट्टी भी इस दुनिया के काजी के सामने न उठा सके, तो खुदा के समक्ष अन्तिम फैसले के समय सारी जमीन का भार कैसे उठा सकोगे।

खलीफा साहब के हृदय में ज्ञान की किरणों का प्रकाश हुआ और उन्होंने सोचा कि वास्तव में मनुष्य ससार में परिग्रह के लिये समस्त जीवन को स्वाहा कर देता है और अन्तिम समय में सब कुछ त्याग कर इन्सान खाली हाथ इस ससार से चला जाता है।

खलीफा साहब अपने इस कार्य से बहुत लज्जित हुए और बुढिया से क्षमा मांगी और उसकी भोपड़ी सुरक्षित रूप में वापिस लौटा दी।



राजा का धैर्य



फ्रांस के राजा से बर्ही के मुख्य नागरिकों ने कहा कि महाराज व्हेल्स नगर के लोग आपकी बहुत घपभय कहते हैं और आपक पुतला भी जसाले हैं। इसलिये उनमें से पाँच-सात को आप बेमजाने की हवा लिखा हो जिससे कि ये जसकी पुनरावृत्ति फिर करने का साहस न करे।

राजा ने मंत्रियों को बसाकर पूछा कि बर्ही के लोगों ने राज्य-कर दिया है या नहीं। मंत्री बोले कि राज्य-कर व ठीक समय पर दे बैठे हैं।

राजा ने कहा— 'उन बेचारे भासे पुरुषों को कर अधिक देना पड़ता होगा जिससे उनकी भात्मा को कष्ट होगा होगा। इस प्रकार व क्षिप्त होकर और घपना गुस्सा कम करने

के लिये ही ऐसा करते हैं। विरोध प्रकट करने के लिये ही वे मेरा पुतला जलाते हैं।”

राजा ने कहा—“यदि मेरा पुतला जलाकर उनको कुछ क्षणों के लिये मन में शान्ति प्राप्त हो जाती है, तो इसमें मेरी क्या हानि ? यह राज्य-द्रोह नहीं है।”



सन्धा हीरा-मोती



स्वीडन देश के राजा की बहिन युजिनो ने अपने हीरे-मोती के सहने बेचकर एक धर्मार्थ धौपधामय बुनवाया। इस धौपधामय से निर्धन पुष्ट्यों का बहुत नाम हुआ।

राजकुमारी स्वयं भी प्रतिदिन रोगियों को सेवा-सुभूषा करने जाया करती थी। एक दिन जब वह रोगियों की सेवा में लगी हुई थी तो एक रोगी उधकी बसा से बहुत ही प्रभावित हो गया। रोगी की आज्ञा पर आई और वह जाने लगा।

राजकुमारो को अपनी सेवा से बहुत संतोष प्राप्त हुआ। राजकुमारो ने कहा—“अपने हीरे-मोतियों को घाब में फिर से बेच लो।”



अतिथि-सेवा :



महान्ना इब्राहिम नेवा करना अपना परम कर्तव्य समझने थे। अतिथि-सेवा जिये बिना वे भोजन भी नहीं करते थे।

एक दिन कोई भी अतिथि उनके द्वार पर नहीं आया। इब्राहिम को अतिथि की प्रतीक्षा करते हुए बहुत समय हो गया। जब उन्होंने देखा कि अब किसी भी अतिथि के आने की सम्भावना नहीं है, तो वे स्वयं बाजार गये और वहाँ से एक वृद्ध को आदरपूर्वक घर ले आये।

उन वृद्ध को मन्नागपूर्वक घर पर बैठाया। वृद्ध ने भोजन प्रारम्भ करने से पूर्व ईश्वर की स्तुति नहीं की। इस बात को इब्राहिम सहन न कर सके।

इब्राहिम ने वृद्ध से इनका कारण पूछा तो वृद्ध ने तुरन्त उत्तर दिया कि— 'मैं अग्नि पूजक हूँ तुम्हारे धर्म को मानने वाला नहीं हूँ।'

सच्चा हीरा-मोती



स्वीडन देश के राजा की बहिन मुबिनो ने अपने हीरे-मोती के सहने बेशक एक बर्तारि धौपबालय बुनबाया । इस धौपबालय से निर्भन पुरणों को बहुत नाम हुआ ।

राजकुमारी स्वयं भी प्रतिदिन रोमियों की सेवा-सुभूपा करन जाया करतो थी । एक दिन जब वह रोमियों की सेवा म लयी हुई थी तो एक रोगी लक्षकी रमा से बहुत ही प्रभावित हो गया । रोगी की प्राण नर घाई और वह रोने लगा ।

राजकुमारी को अपनी सेवा से बहुत संतोष प्राप्त हुआ । राजकुमारी ने कहा— अपने हीरे-मोतियों को घाब में फिर से देख लकी हूँ ।



घातक के प्रति सहष्णुता :



यवन देश का राजा दानगील स्वभाव के लिये बहुत ही प्रसिद्ध था। किसी ने राजा के सामने सर्व गुण-सम्पन्न हातिम की प्रशंसा कर दी। राजा इसे सहन न कर सका और उसने यह घोषणा करा दी कि जो भी व्यक्ति हातिम का सर काटकर लायेगा, उसे उचित पुरस्कार दिया जायेगा।

डघर-उबर हातिम की खोज प्रारम्भ हो गई। एक व्यक्ति हातिम को ढूँढता-ढूँढता बहुत थक गया था, इसलिये वह एक गृहस्थ के यहाँ ठहर गया। उस गृहस्थ ने प्रतिथि को दो-चार दिन तक बहुत विश्राम दिया और उसकी सेवा की। जब वह व्यक्ति जाने लगा तो हातिम बोला कि—“इतनी जल्दी कहाँ जा रहे हो? ऐसी शीघ्रता का क्या काम है? यदि मेरे योग्य कोई ऐसा कार्य हो जिसमें मे सहयोग दे सकूँ हो अवश्य बतलाओ। मैं तुम्हारी सहायता अवश्य करूँगा।”

इबाहिम ने उसको काफिर समझ कर घर से बाहर निराल
रिया ।



चार व्यक्ति :



“क्या खूब सौदा नकद है । इस हाथ दो और उस हाथ लो ।”

महाराजा विक्रमादित्य की सभा में एक यक्ष ने चार प्रश्न किये — (१) अभी भी है और भविष्य में भी रहेगा । (२) अब तो है, परन्तु पीछे नहीं रहेगा । (३) अब तो नहीं है, परन्तु भविष्य में रहेगा । (४) अब भी नहीं है और भविष्य में भी नहीं रहेगा ।

राजा ने उपरोक्त कार्य कालिदास को सोप दिया । कालिदास और यक्ष, दोनों गुप्त वेप में एक सेठ के यहाँ गये और बोले— “हम अतिथि हैं, इसलिये आपको कुछ धन व्यय करना पड़ेगा, कष्ट भी उठाना पड़ेगा और इसके अतिरिक्त कुछ अपमान भी सहन करना पड़ेगा ।”

कालिदास और यक्ष बोले कि राजा ने एक तालाब को तुड़वा दिया है, इसलिये उसके निर्माण हेतु एक हजार रुपये की अत्यन्त आवश्यकता है । किन्तु यह बात राजा के कानों तक न पहुँचे, नहीं तो आपको तड़ दिया जायेगा ।

घमस्तुक बोला— 'हातिम का सर काटकर राजा के पास ले जाना है। राजा बहुत बड़ा इनाम देम। इसलिये घाय इस कार्य में मेरो सहायता करेग ता घायको भी उचित इनाम मिलेगा।'

हातिम बोला—'इसमें कौन-सी बड़ी बात है। यदि घायका मसा हो घाय ता बहुत ही प्रसन्नता की बात है।'

हातिम बोला—'मैं स्वयं हातिम हूँ। इस समय घण्टा घबहर है। यहाँ कोई मीकर घादि भी नहीं है, इसलिये घायको मेरे मारने में कोई कठिनाई नहीं होगी। घाय मुझे मारकर मेरा सर घासानी से राजा के पास ले जा सकते हैं। ऐसे घबहर पर घायको कोई पकड़ने वाला भी नहीं है। मेरे मारने से यदि तुम्हाए कार्य बन घाय तो अच्छा ही है।'

हातिम की बात को सुनकर वह व्यक्ति स्तब्ध रह गया। बहुत देर तक वह घमस्तुक कुछ न बोला सका। कुछ ही क्षणों के पश्चात् वह हातिम का सर काटने की बात स्वीकार कर हातिम के करसों में फिर बड़ा घोर अमा मांग भी।



इस बात को सुनकर दोनो चल दिये और कालिदास बोले—
 “इस भिखारी के पास अब भो नही है और आगे भी
 नही मिलेगा।”



सेठ जी बोसे—“घाय खाये न बिये यदि राजा को सबर पड़ेगी तो बेसा जायेगा । दोनों सेठ जी से खयें लेकर बाजार में घायें तो कानिदास यज्ञ से बोसे—“इस सेठ के पास धन भी है धीर घायें भी धार्मिक भावना के कारण इसे मिलेगा ।

इसके पश्चात् एक दूकान पर खयें धीर उसी प्रकार वैसे का सवाल किया । दूकानदार बोसा—“मैं हुरामकोरों का पोषण नहीं करता हूँ । धन-सम्पत्ति जो कुछ भी मुझे मिली है वह मुटाने के लिये नहीं है, इसलिए मैं एक पाई भी नहीं दूँ या । दोनों वहाँ से चम दिये । कानिदास जी बोसे—“इसके पास धन तो है लेकिन धायें नहीं मिलेगा ।”

कानिदास धीर यज्ञ गरीब का बेप बनाकर एक मिचारी के पास खयें धीर बोसे—“धूल लगी है कुछ खाने को दो ।” वह मिचारी खाने के लिये बैठा ही था ।

मिचारी बहुत प्रसन्न हुआ धीर वह जो खत् खाने बैठा था उसमें से तीन हिस्से किये धीर बोला—“घाय तो इससे ही काम चला लीजिये कम धीर परिधम करिये धीर खायें । उस गरीब की बात को सुनकर दोनों वहाँ से चम दिये धीर कानिदास ने यज्ञ से कहा—“इसके पास नहीं है परन्तु धायें मिलेगा ।”

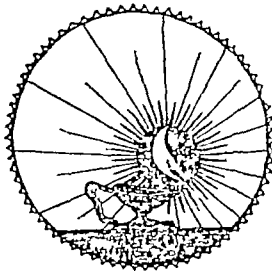
इसके पश्चात् एक गरीब मिचारी भीक माँग रहा था । उसको १ रु० दिये धीर कुछ समय के पश्चात् उसी गरीब के पास मिचारी का बेप बनाकर उसके पास खयें धीर बोसे—“कुछ वैसे दे लीजिये धूल लगी है ।” वह गरीब बासा—“ये कहीं से धायें भोजन माँगते-माँगते बहुत समय हो गया है परन्तु कोई नहीं देता है ।

गुरु जी ने सोचा कि बहुत समय हो गया, परन्तु आरुणि अभी तक खेत से वापिस नहीं आया है। ऋषि स्वयं अन्य शिष्यों सहित वहाँ गये।

ऋषि ने 'बेटा आरुणि' कहकर आवाज लगाई। आरुणि बोला—“गुरु जी, खेत का पानी रोकने में मैं असमर्थ था, इसलिए स्वयं ही पानी निकलने के रास्ते में लेट गया हूँ, जिससे कि खेत का पानी बाहर न निकल सके।”

इसे देखकर ऋषि बहुत प्रसन्न हुए और आरुणि को स्वयं अपने हाथों से उठाकर प्रेमपूर्वक छाती से लगा लिया।

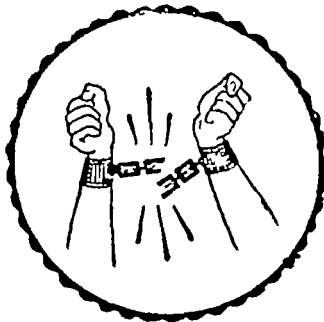
ऋषि ने अन्य शिष्यों को आरुणि के कार्य से शिक्षा ग्रहण करने को कहा। गुरु जी आरुणि की भक्ति से इतने प्रभावित हुए कि उसका नाम उदालक रख दिया। उदालक ने विद्याध्ययन किया और सर्व विद्याओं में प्रवीण एवं पारंगत होकर उदालक ऋषि के नाम में विख्यात हुआ।



चढ़कर नीचे की तरफ देखा जाय, तो घाम और भाड़—सत्र एक समान दिखलाई देते हैं, -उसी प्रकार यदि मन को ऊंचाई की भूमिका पर ले जाकर खड़ा कर देते हैं ता साधारण भेद-भावों की और ध्यान केन्द्रित नहीं होता ।”

सभी धर्मों में मुख्य और सामान्य गुण हैं, परन्तु सफुचित मनोवृत्ति एव साम्प्रदायिकता की सीमा से बाहर होकर ही ये बातें ध्यान में आती हैं ।

अच्छा एव सद्गुणी सत चाहे जिस धर्म का हो, उसे ईश्वर-भक्त अवश्य कहना चाहिए और उसका यथोचित आदर-सत्कार करना भी प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है ।



धार्मिक-समता



एक समय का प्रसंग है कि कन्नकर साहूबुर उम नबी साहूब ने एक फकीर के धरानि किये । वह फकीर विभिन्न ईरान मुस्लिस्तान और समस्त भारत की यात्रा करके आया था ।

कन्नकर साहूब ने पूछा—“छाई बाबा आपने किस तीर्थ में सबसे अधिक संख्या में साधु-संत बने ।” फकीर बोला—“हरद्वार के कु म मेरे में बने हैं ।

यों तो प्रत्येक देश में कम तथा अधिक संख्या में सभसे संत बने हैं परन्तु भारत में तो साधु-संतों की एक जमात ही कहना चाहिए । यदि ऐसा न हो तो लोगों के पाप के बीजों से दुनिया का सर्वान्न हो जाय ।

कन्नकर साहूब आश्चर्य-चकित होकर बोले—“छाई बाबा आप तो मुसलमान फकीर हैं, फिर आपने हिन्दुओं के तीर्थ हरद्वार में कु म के समय यात्रा क्यों की ?” छाई जी बोले—“भारत जब आप साम्प्रदायिक भेद भाव से ऊपर उठकर देखोये तो बहुत कुछ बराबर दिखाई देया । जिस प्रकार ऊँचे पर्वत पर

चढकर नीचे की तरफ देखा जाय, तो घास और भाड—सब एक समान दिखलाई देते हैं, -उसी प्रकार यदि मन को ऊँचाई की भूमिका पर ले जाकर खडा कर देते हैं ता साधारण भेद-भावों की ओर ध्यान केन्द्रित नहीं होता ।”

सभी धर्मों में मुख्य और सामान्य गुण हैं, परन्तु सकुचित मनोवृत्ति एव साम्प्रदायिकता की सीमा से बाहर होकर ही ये बातें ध्यान में आती हैं ।

अच्छा एव सद्गुणी सब चाहे जिस धर्म का हो, उसे ईश्वर-भक्त अवश्य कहना चाहिए और उसका यथोचित आदर-सत्कार करना भी प्रत्येक नागरिक का कर्त्तव्य है ।



अतिथि-सत्कार



भूरेब महोपाध्याय घर से बूमने के लिए निकले। गार्म में मौसबी साहब गिर गये। भूरेब भी मौसबी साहब के साथ बातचीत करते हुए घर तक आ गये।

मौसबी साहब को प्यास लगी थी। सा उम्हाने पानी माँगा। मौसबी साहब को बिलास में पानी दिया गया। पानी पीने के पश्चात् भूट्टा गिलास मौसबी साहब पास में लड़े बालक को देने सब।

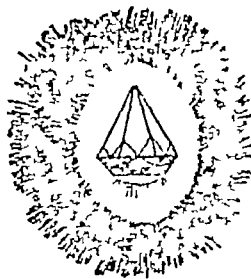
बालक ने सोचा मुसलमान फकीर का भूटा गिलास मैं कैसे सूँ ? तब महोपाध्याय जी ने धीरे के संकेत द्वारा गिल्लास लेने का बहा। बालक ने गिल्लास में लिया।

मौसबी साहब के बसे जाने पर महोपाध्याय जी ने बालक को समझाया और कहा— हिन्दू धर्म के लिये इस प्रकार भूटा गिल्लास लेने से दुःख घबराह हुआ होना किन्तु यदि रचना चाहिए कि अपने घर पर कोई भी अतिथि धारे सा उसके सत्कार करने में

धर्म व जाति का विचार नहीं करना चाहिए। अतिथि को साक्षात् ब्रह्मा, विष्णु समझकर उसका सत्कार करना चाहिए।”

अतिथि-सत्कार में यदि तनिक सी भी कमी पड़े, तो हिन्दू-धर्म का वास्तविक रूप में पालन नहीं होता है। हम इस प्रकार अतिथि का सत्कार न करें, तो हम सद्-गृहस्थ ब्राह्मण की श्रेणी में नहीं आ सकते।

“तुमने मुसलमान भाई का झूठा गिलास स्पर्श किया, इससे तुमको कोई दोष नहीं लगा है। हाँ, यदि तुम मौलवी साहब का उचित सत्कार नहीं करते, तो तुम बहुत बड़ी मात्रा में कर्त्तव्यहीन की श्रेणी में गिने जाते और पाप के भागी बनते।”



निष्पाप भक्त



बासी के बाट पर एक बार प्रहृण के प्रबसर पर बहुत बड़ा मेला लगा था। महादेव और पार्वती भी मेले में गए?

महादेव और पार्वती ने सोचा कि यहाँ परीक्षा करनी चाहिये इतनी जन-सङ्ख्या में मन्वा भक्त कौन है।

शिखरी पृथ्वी पर जेट बने और मृत-प्राय दिखाई देने लगे। पार्वती पास में खोक। मुझ में बैठ गई। पार्वती भी ने अपने पति की मृत्यु के सम्बन्ध में लोगों को बतलाया और कहा—“जो निष्पाप भक्त होगा वही मेरे पति को बिम्बा कर सकता है परन्तु यह ध्यान रहे जो भी पापी होना वह इस सब को स्पर्श करते ही मृत्यु को प्राप्त हो जायगा।”

मेले में जितने भी व्यक्ति घास पे से भी अपने को भक्त समझने पे परन्तु पार्वती को इस बात को सुनकर किसी ने भी सब को छूने का साहस नहीं किया।

पन्थ में एक हरिजन बोला—“मैं बहुत धीघ स्नान करके बापिस आता हूँ फिर आपके पति को भीखित करूँगा।

अगर तीन दिन की आयु बढ़ जाए !



बगदाद का खलीफा अपने निजी खर्च के लिए प्रतिदिन शाम को राज्य कोष से एक स्वया मिया करता था। इससे अधिक लेने का उसे त्याग था। परन्तु राज्य के अन्य कर्मचारियों को अपनी धाँजा से अधिक बेतन दिलावाटा था। खलीफा को अपने बेतन की व्यवस्था स्वयं ही करनी पड़ती थी। इसलिये अपने तथा अपने परिवार के खाने-पीने व कपड़े आदि का खर्च वह एक रुपये से ही बचाते थे।

एक समय ईर का खलीफा थाया। राज्य के सभी लोगों ने स्वयं भी धान्से-धान्से कपड़े पहने और अपने बाल-बच्चों को भी पहनाये।

खलीफा के बच्चों ने जब सब को सुन्बर कपड़े पहने देखा तो वे भी नये कपड़ों के लिए हूठ करने लगे। खलीफा की पत्नी ने बच्चों को बहुत समझाया परन्तु उन्होंने एक न सुनी।

अन्त मे खलीफा की पत्नी ने खलीफा से कहा—“आप तीन दिन का वेतन पेशगी (Advance) ले लीजिए, उससे बच्चो के नये कपडे बन जायेंगे ।”

खलीफा ने पत्नी की बात सुनकर उत्तर दिया—“अगर तू खुदा के पास जाकर मेरी जिन्दगी के तीन दिन का पट्टा ले आवे तो उसके आघार पर मैं राज-कांप से तीन दिन का पेशगी वेतन ले लूंगा ।”

खलीफा के इस उच्च आदर्श के सम्बन्ध मे जिसने भी सुना उसी ने मुक्त कंठ से प्रशंसा की ।



आदर्श-मैत्री



एक बार सिपकुञ्ज के राजा ने जेमन नामक युवक को प्राण-दण्ड की सजा दी। जेमन ने राजा से एक वर्ष का समय माँगा कि मैं अपने देश घौस में जाकर अपनी बाम्बराय व भाग का प्रबन्ध कर पाऊँ। अबधि पूरी होते ही सौटने का ससने बचन दिया।

राजा तिरस्कार पूर्वक बोला—“यहाँ ऐसा कोई व्यक्ति है जो तेरी बमानत दे सके क्योंकि बिना बमानत के तुमको नहीं छोड़ा जा सकता। परन्तु इतना ध्यान रखे कि यदि तुम समय पर उपस्थित न हुए तो बमानत देने वाले को मृत्यु-दण्ड दे दिया जायगा।

जेमन का एक मित्र पिथियस उस समय वहाँ मौजूद था। राजाका सुनकर वह बहुत प्रसन्न हुआ और उसने सहर्ष बमानत देने की प्रतिष्ठा की।

अब तो राजा धार्वर्य में पड़ गया क्योंकि वह किसी पर भी विश्वास नहीं करता था। उसकी समझ में नहीं आया कि

इतने बड़े सकट को सामने देख कर भी एक मित्र ने हमारे का किस प्रकार विश्वास कर लिया।

डेमन अपने देश को चला गया। पिथियम को बंदने में नजरबंद कर दिया गया। इस प्रकार एक वर्ष पूर्ण होने को आया, किन्तु डेमन वापिस नहीं लौटा।

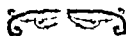
पिथियम ने सोचा कि इस प्रकार मित्र के लिए मृत्यु-दण्ड पाने में मुझे कोई भी दुःख नहीं होगा। मेरा मित्र डेमन या तो मर गया होगा या किसी कारण-विशेष से उमें पहुँचने में विलम्ब हो रहा है।

पिथियम को फाँसी देने की तैयारी होने लगी। फाँसी देने के कुछ ही क्षण पूर्व डेमन आ पहुँचा।

राजा दोनों मित्रों के इस अद्भुत विश्वास और सच्ची मैत्री से बहुत ही प्रभावित हुआ और उमने फाँसी की सजा भी माफ कर दी। राजा ने दोनों से प्रार्थना की कि आज से मुझे भी अपना मित्र समझना।

जहाँ पर परस्पर सच्चा प्रेम, दृढ-विश्वास और स्वार्थ, त्याग को वृत्ति न हो, वहाँ मित्रता नहीं हो सकती। पिथियस और डेमन की सच्ची मित्रता अभी तक समस्त यूरोप में प्रसिद्ध है।

“विपद पत्तोटी जे फसे,
ते ही साँचे मीत।”



भंगी की उदारता



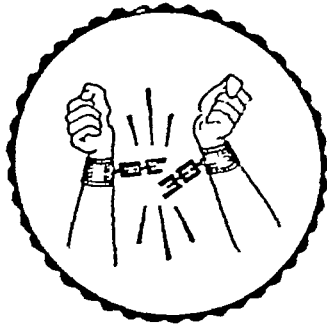
एक दिन म्यूनिसिपल कमिस्तर ने भंगी-भंगियों के जमादार से कहा—“यह धारणी कार्य करने में बहुत ही होशियार है इसलिए इसे काम पर लगा दो।”

जमादार ने स्पष्ट कहा—“साहब कहीं भी जगह खाली नहीं है इसलिये किस प्रकार इसे काम पर लगा दू।” इस पर कमिस्तर साहब ने कड़क कर उत्तर दिया—“किसी भी धारणी को काम से हटा या धीरे उसके हटने से जो जगह खाली हो उसी काम पर इसे लगा दो।”

जमादार ने कहा—“साहब बिना कारण के किसके पेट पर साठ मारूँ। किसकी रोमी को बिना रोप के लो दू। इस प्रकार का अनुचित कार्य मेरे द्वारा होना असम्भव है।”

जमादार का उत्तर सुनकर कमिस्तर साहब को मन में बहुत संकोच हुआ और उसने अपने मन में सोचा कि इस जमादार की यात्रा एवं विचार मेरे से कहीं उच्च हैं।

यदि बिना कारण किसी को हटाकर इस व्यक्ति को काम पर लगा दिया जाता तो कितना अनर्थ एवं अनुचित कार्य होता और उस निर्दोष व्यक्ति की आत्मा को कितना कष्ट होता? इस प्रकार के विचार मन में आने से कमिश्नर साहब को बहुत गर्मिन्दा होना पड़ा और उस दिन से उन्होंने उस जमादार को आदर की दृष्टि से ही देखा ।



सन्त की शान्ति



समानक हो एक दिन एक सत की में सुस्तान से हो गई। सत बोला— 'भारि समी को संयम एवं नियम से जीवन व्यतीत करना चाहिए और इसी नीति के अनुसार सांसारिक कार्यों को चलाना चाहिए जिससे कि मनुष्य कमी भी स्वार्थी एवं पापारमा की श्रेणी में न गिना जाय।

सत की इस बात को सुनकर सुस्तान बहुत ही खेचित हुआ और उसने सत को मार डालने का आदेश दिया।

कधीर बोला— 'हे मित्र डेर मत कर। जसो से जसो मुझे अस्माह के पाम भेज दे। परन्तु याद रख—हितकारी और सत्य बचन सर्वदा निर्मयतापूर्वक कहना—यही उच्च जीवन का मुख्य मन्त्र है।'

कधीर धाये बोला— 'मैंने यह उपदेश लेकर अपना कर्तव्य पूरा किया है। मैंने बिना प्रयोजन यह प्रिया भी है यदि इसका फल मुझे मृत्यु-पूर्वक मिलेगा तो सर्व्व संहत करूँगा।'

इस पर राजा को कुछ ज्ञान हुआ और उमने सत के सामने आत्म-समर्पण कर दिया और अपनी भूल की क्षमा माँगी ।



मिथ्याभिमान



ग्रीस देश के घाटिका नामक ग्राम में घास्कि विवादिश नाम का एक भीमन्त रूढ़ता का । उसे अपनी पन-रोल्लत बगल बाय-बयीचे घादि का बहुत घमिमान का ।

एक दिन घहुंकार बस मुकराठ (सोर्जेंट) के सामने अपने बैमब की प्रशंसा करने लगा । तब मुकराठ ने मन्से के सामने ले बाकर उससे कहा—“बरा इस मन्से में घाटिका ग्राम कहीं है बतलाइयेया ?” घाटिका ग्राम बहुत छोटा था इसलिये बहुत ही सूक्ष्मता से लिखा था । इसी कारण बस उसे खोज करने में बेर समी । जब ग्राम का नाम मिन गया तो मुकराठ ने पूछा—“घब यह हूँ को कि घापकी बमीन-बायबाब कहीं है ?”

घास्कि विवादिश ने उत्तर दिया—“यह पता लगाना भी कठिन है और इस मन्से में यह भी हुई भी नहीं है । चूँकि मेरी बमीन बहुत कम है, इसलिये उसका उल्लेख इसमें नहीं है ।”

मुकराठ बाने—“सेठ साहब घापकी कितनी बड़ी घूम है । समस्त घूमबल पर एक छोटा-सा देश घीत हो और उसमें घाप ?”

का छोटा-सा गाँव आटिका हो, जिसको ढूँढने में भी बहुत समय लगता हो और उसमें भी इतनी आपको जमीन, जिसका पता भी नहीं लग सकता हो। अब आप स्वयं ही समझ लीजिए कि कहाँ तक अपना अभिमान करना ठीक है।”

ससार में अपना सच्चा स्थान कहाँ है ? इसका विचार किया जाय, तो मनुष्य में मिथ्याभिमान उत्पन्न हो ही नहीं सकता है।



मिथ्याभिमान



वीस रोज के घाटिका नामक ग्राम में घाटिक बियादिस नाम का एक श्रीमन्त रहता था। उसे अपनी धन-शौचत ब्रह्मसे भाव-बन्धीये घादि का बहुत सम्मान था।

एक दिन महंकार बघ सुकराठ (सोर्बेटिस) के सामने अपने बेमब की प्रशंसा करते लया। तब सुकराठ ने लकी के सामने ले जाकर बतसे कहा—“बरा इस मन्धे में घाटिका ग्राम कहीं है बतलाइयेमा ?” घाटिका ग्राम बहुत छोटा था इसलिये बहुत ही सुकमता से लिखा था। इसा कारण बघ उसे धोख करने में रेर लगी। जब ग्राम का नाम मिस पया तो सुकराठ ने पुछा—“बब यह हुंको कि भापकी बमीन-बापराह कहीं है ?”

घाटिक बियादिस ने उत्तर बिया— यह पठा लगाना भी कटिन है धीर इस मन्धे में यह की हुई भी नहीं है। बुकि येरो बमीन बहुत कम है, इसलिये उसका उस्तैस इसमें नहीं है।”

सुकराठ बोले—“सेठ साहब भापकी किरानी बड़ी बूम है। समस्त सुमंइल पर एक छोटा-सा रेश वीस हो धीर उसमें भाप

भी मालूम नहीं है कि कौन-सा आम खट्टा है और कौन सा मीठा ?”

इब्राह्म हस कर बोले—“आपने मुझे वगीचे की रक्षा के लिये रखा है । फल खाने का अधिकार नहीं दिया है । विना अधिकार के मैं यहाँ के फल किस प्रकार खा सकता हूँ और जब तक खाऊँगा नहीं, तब तक खट्टे-माठे का ज्ञान किस प्रकार हो सकता है ।”

सेठ जी सत की बात को सुनकर चुप हो गये और विचार में पड गये । सेठ जी बोले—“क्या आपने अभी तक कोई फल इस वगीचे से नहीं खाया । सत ने कहा —“आज तक मैंने कोई फल नहीं खाया है । सत के ये वाक्य सुनकर सब आश्चर्य-चकित रह गये ।



संत इनास का अस्तेय-व्रत



एक समय सठ इनास बेस-बिबेस में भ्रमण करते हुए एक सेठ के बगीचे में माकर ठहरे। सेठ ने इनास को घपने बगीचे की रक्षा के लिये उपयुक्त समझ कर मासी के काम पर नौकर रख लिया।

इनास ने मासी का काम करना प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार कर लिया। सेठ के बाग के शान्त वातावरण को अपनी मर्ति साधना के लिये उपयुक्त समझ कर ही इनास ने मासी का काम करने की स्वीकृति दी थी।

एक दिन सेठ जी घपने मिर्चों सहित बगीचे में भ्रमण हेतु धा निकसे। घाम के देह पर पके घाम लटक रहे थे। सेठ जी ने इनास को कुछ घाम तोड़कर खाने की माखा वा। घाम तोड़कर साथे लये।

सेठ जी तथा उनके मिर्चों ने घाम खड़े लो माखूम पड़ा कि घाम लट्ट है। इस पर सेठ जी ने कोष के साथ कहा—“तुम्हें बगीचे में इतने दिन काम करते हुए हो लये परन्तु घसी तक यह

भी मालूम नहीं है कि कौन-सा आम खट्टा है और कौन सा मीठा ?”

इब्राह्म हस कर बोले—“आपने मुझे वगीचे की रक्षा के लिये रखा है । फल खाने का अधिकार नहीं दिया है । बिना अधिकार के मैं यहाँ के फल किस प्रकार खा सकता हूँ और जब तक खाऊँगा नहीं, तब तक खट्टे-माठे का ज्ञान किस प्रकार हो सकता है ।”

सेठ जी सत की बात को सुनकर चुप हो गये और विचार में पड गये । सेठ जी बोले—“क्या आपने अभी तक कोई फल इस वगीचे से नहीं खाया । सत ने कहा —“आज तक मैंने कोई फल नहीं खाया है । मत के ये वाक्य सुनकर सब आश्चर्य-चकित रह गये ।



पत्थर से भी सीख लो !



बोपदेव बसिष्ठ के भावन बंसी राजा महावेश के समा-वर्द्धित थे। पर वे श्याकरण का अध्ययन कर रहे थे तो उन्हें स्मरण नहीं रहता था। इसीलिये उनको अध्ययन धर्मिय ब कठिन लगता था।

स्मरण न होने के कारण ही बुर भी उनसे बहुत ही अप्रसन्न रहते थे। इस प्रकार पाठशाळा में उनका सदा अपमान होता था।

एक बार पाठ याव न होने के कारण बुर भी ने उनको बहुत पीटा। बोपदेव निराश होकर एक कुँए के पास जाकर चिन्ता-मग्न अवस्था में बैठ गये।

कुछ समय पश्चात् एक स्त्री उस कुँए पर पानी भरने आई। स्त्री ने डोल कुँए में डाला तो बोपदेव ने देखाकर मन में विचार किया कि—“निरन्तर रस्सी की रमड़ से जब पत्थर भी बिस पया तो क्या यह सम्भव नहीं है कि निरन्तर परिश्रम करने से मुझे श्याकरण याव हो पाय।”

अब तो वोपदेव को दृढ़ विश्वास हो गया और उन्होंने अथक प्रयत्न करना प्रारम्भ कर दिया। वोपदेव बाद में बहुत ही प्रकांड विद्वान हुए और उन्होंने 'मुग्ध-बोध' नाम का व्याकरण तैयार किया।

“करत-करत अभ्यास के,
जड-मति होत सुजान।
रसरो आवत-जात ते,
सिल पर परत निसान ॥”



क्रोध ही बाँडाल है



एक घोड़ी नदी किनारे ध्यान में मग्न बैठा था। एक बाँडाल घास धीरे घोड़ी के निकट कपड़े धोने लगा। पानी के छूँटे जब घोड़ी पर पड़े तो उसकी घाँसे लुमी।

घोड़ी ने क्रोधित होकर बाँडाल को वहाँ कपड़े धोने से मना किया परन्तु बाँडाल अपने कार्य में एकाग्र-चित्त था इसलिए उसने मनागी की धारावाह को नहीं सुना।

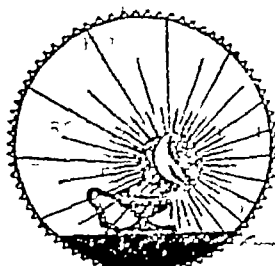
घोड़ी और अधिक क्रोध के आवेष्ट में धा मया धीरे उसने उठकर बाँडाल को चिमटे से पीटा। बाँडाल ने कहा—“माई मेरे से घनवाने में बहुत बड़ी झूल हो गई है। उसके लिए क्षमा कीजिए।

इसके पश्चात् घोड़ी को ध्यान धामा कि बाँडाल के स्पर्श से अपवित्र हो गया है, इसलिये गंगा में स्नान करना चाहिए।

घोड़ी ने मया में स्नान किया और इसके तुरन्त पश्चात् बाँडाल ने भी गंगा में स्नान किया।

योगी ने चाडाल से पूछा—“तू ने स्नान क्यों किया ? तू मेरे स्पर्श से अपवित्र थोडा ही हुआ है ।” चाडाल बोला—“आप स्वयं तो पवित्र हैं परन्तु जिस समय क्रोध आपके अन्दर प्रवेश कर गया था, उस समय आप चाडाल ही बन गए थे और उम्मी अवस्था में आपने मुझे पीटा था । आपके स्पर्श से मैं अपवित्र हो गया था, इसलिए पवित्र होने की भावना से गंगा-स्नान किया है ।”

“काम-क्रोध मव-लोभ फी,
जय लौं मन में खान ।
तव लौं पण्डित मुर्खा,
तुलसी एक समान ॥”



दयालु-हृदय



इन्नी देश में घाबिल नामक गाँव के पास का एक बहुत बड़ी नदी में बाढ़ आ गई। जिसके कारण बिमाना नगर के निकटवर्ती पुल के दोनों किनारे टूट गये।

गाँव की रसा करने की चिन्ता में बहुत से व्यक्ति नदी के किनारे पर इच्छे हो गये। उस पुल के पास एक मरीच परिवार रहता था।

पुल बरतार टूटता आ रहा था परन्तु वह बोन परिवार वही पर इस घाटा से बँध हुआ था कि पानी कम हो जायगा और हम लोग बच जायेंगे।

नदी के छट पर बड़े लोगों को पानी के बडते हुए देख से बहुत ही चिन्ता हुई। उन्होंने सोचा कि वह मरीच परिवार पानी की बचेन से घाटा आ रहा है और क्षीय ही नष्ट हो जायगा।

किनारे पर बड़े व्यक्तियों में से एक वयसु पुरुष बोला— 'जो कोई भी व्यक्ति इस परिवार को बचा कर लाएगा उसको

पाँच-सौ रुपये इनाम मिलेगा।” परन्तु मृत्यु के भय से कोई भी जाने को तैयार न हुआ।

अन्त में एक व्यक्ति माहस के साथ नाव लेकर नदी में उतरा। नाव बहुत ही सकट एव परिश्रम के पश्चात् उस दीन-परिवार के पास तक पहुँच सकी। उस व्यक्ति ने रम्सी की सहायता से गरीब परिवार के सब आदमियों की बचा लिया और सुरक्षित रूप में उनको बाहर निकाल लाया।

कुछ ही क्षणों के पश्चात् वह पुनः पूर्णतया टूट-गया। उस वहादुर एव साहसी पुरुष को जब ५००) का इनाम दिया जाने लगा, तो उसने स्पष्ट मना कर दिया।

वह बोला—“यह तो आप सब लोगों ने देख ही लिया होगा कि ५००) के लोभ से कोई भी व्यक्ति नदी में प्रवेश को तैयार नहीं हुआ। मैं स्वयं भी रुपये के लोभ से नहीं, वरन् दया के वशीभूत होकर गया हूँ। मैंने दया के कारण से अपनी मृत्यु का भी ख्याल नहीं किया।”

नदी के किनारे पर खड़े सभी लोगों ने उसकी दया, साहस, एव त्याग की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

क्रोध का इलाज



एक स्त्री अपनी पड़ोसिन से बाहर बोली— बहिन मेरा पति बहुत ही खीबो है। उसका क्रोध देखकर मुझे भी क्रोध भा जाता है और लड़ाई के कारण प्रतिदिन बान-बानावा मोचन पड़ा रह जाता है।”

पड़ोसिन बोली—“बहिन इसमें विचार करने की क्या बात है? मेरे पास एक दरवाई है बड़ा बहुत ही पक्की है और क्रोध के लिये तो रामबाण का काम करती है। लड़ते समय तुम उसको मुँह में रख लेना। इससे तुम्हारे पति शांत हो जायेंगे।

उस स्त्री ने तीन-चार दिन तक ऐसा ही उपाय किया इससे उसका पति शांत हो गया। वह स्त्री पड़ोसिन के पास गई और बोली—“तुम्हारी दरवाई बड़ी पक्की है इसलिये इसका मुस्ता मुझे बहुत ही बिलकुल इस दरवाई को तैयार रखूँ और जब प्रायश्चित्त पड़े मुँह में रखूँ।”

पड़ोसिन बोली—“बहिन यह सिवाय स्वच्छ पानी के और कुछ नहीं है। जब तक पानी तेरे मुँह में रहा तब तक तुम शांत

न सकी और इसी कारण से तुम्हारे पति स्वयं चुप हो गए। जब सामने वाले आदमी को जवाब न मिले तो वह स्वयं ही चुप हो जाता है। आखिरकार, उत्तर न मिलने के कारण वह कब तक बोलता रहेगा।”



योगेन्द्रनाथ का आत्म-त्याग



योगेन्द्र नाथ बड़े-
दाखाय कमकसा के मूर्ख साससिद्धरं बे । एक दिन बे अपने मिर्छों
सहित यगा-स्नान करने गए ।

पंथा बहुत लोकर गृह से बह रही थी । सब मित्र स्नान
करने सवे धीर ठेरना भी धारम्म किया ।

एक मित्र पानी के बेग से बोहने लया । अपने धर्म मिर्छों को
सहायता के लिए पुकारा परन्तु कोई भी मित्र मृत्यु के सब से
उसके निकट पहुँचने को तैयार न हुआ ।

योगेन्द्रनाथ से न रहा गया धीर बहुत मकेले ही तीरते-तीरते
डूबते हुए मित्र के पास पहुँच गए । डूबता व्यक्ति सहायता करने
वाले को किस प्रकार पागल की तरह से पकड़ने को नपकता है
इसको सभी जानते हैं । उनसे भी इसी प्रकार से योगेन्द्रनाथ को
पकड़ लिया ।

सहायता के लिए नाथ खेजी गई । जैसे ही नाथ उसकी
प्यार्य निकट पहुँची बेमे ही डूबने वाला व्यक्ति हट कर योगेन्द्र के

कन्धे पर चढ़ गया। वह घवराया हुआ तो था ही, शीघ्र ही योगेन्द्रनाथ के कन्धों पर सब दवाव डालता हुआ नाव में चढ़ गया। योगेन्द्रनाथ दवाव पडने से नीचे पानी में डूब गए। बहुत प्रयत्न करने पर भी उनका पता न लग सका।

“धन्य है, ऐसे महान् व्यक्तियों को जो दूसरों की रक्षार्थ अपने प्राणों की भी बाजी लगा देते हैं।”

उन्नति की कुँजी



डॉक्टर हस्टर विज्ञान के एक प्रसिद्ध डाक्टर थे। वे अपने कार्य में बहुत ही निपुण थे। उन्होंने चरीर विज्ञान में भी बहुत अच्छी खोज की थी।

एक समय एक व्यक्ति ने उनसे पूछा— 'डाक्टर साहब आपने ऐसा कौन-सा प्रयत्न किया है जिसके कारण आप इतने प्रसिद्ध हो गए हैं? ऐसा कौन-सा काम है जिसके करने से आप इतनी उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो गए हैं?'

डाक्टर हस्टर ने कहा— 'मेरा एक ऐसा नियम है जो पालन करने से मैं इस प्रकार उन्नति प्राप्त कर सका हूँ और प्रसिद्धि का भी काम मिला है। मेरा यह नियम यह है कि कोई भी कार्य किया जाए तो उसका प्रारम्भ पुरस्कर्तया विचार करके किया जाए। इसी नियम के आधार पर मैं किसी कार्य को प्रारम्भ करने से पूर्व खूब अच्छी प्रकार से विचार करके बैठता हूँ कि यह कार्य करने में मैं समर्थ हूँ या नहीं। यदि कार्य असाम्भव हो तो मैं उसे प्रारम्भ ही नहीं करता हूँ। जो कार्य विचार के

पश्चात् करता हूँ, उसे पूर्ण करने में एकाग्र-मन से सतत प्रयत्न करता हूँ।

कोई भी काम हाथ में लेने के पश्चात् में उसे छोड़ता नहीं हूँ। इसी नियम-पालन के कारण मैं उन्नति के मार्ग पर अग्रसर हो सका हूँ—“ऐसा मेरा पूर्ण विश्वास है।”

सत्य निष्ठा



रोम की राज्य-सभा में हेस बिडियस नामक एक स्वाम्य-वराधण और सत्यनिष्ठ सभासद था। सभी उसके इन उच्च विचारों से बहुत ही प्रभावित थे। यही तर्क कि बादशाह को भी उसकी सत्यनिष्ठता पर पूर्ण विश्वास था।

एक बार बादशाह सभा-भवन में एक अनुचित प्रस्ताव पारित करना चाहता था। बादशाह को ऐसा विश्वास था कि हेस बिडियस अवश्य ही इस प्रस्ताव का विरोध करेगा।

बादशाह ने हेस बिडियस को बुलाया और उससे कहा—“यदि तुमने मेरे प्रस्ताव का विरोध किया तो मैं तुम्हारा घर उड़वा दूंगा।” हेस बिडियस वास्तव में साहसी और सत्य प्रेमी था। उसने कहा—“हूबूट मैंने कब आपसे कहा है कि मैं घमर बन कर धाया हूँ? जब कभी स्वदेश और समाज के प्रति कर्तव्य-व्यसन का प्रसंग आया है, तो मैंने सदा ही सत्य का पक्ष लिया है और भविष्य में दूंगा। आपके मय से मैं कभी भी अनुचित प्रस्ताव का समर्थन नहीं करूँगा। यदि सत्य का पक्ष लेने का दण्ड आप मुझे

देना चाहे तो प्रसन्नता के साथ दे सकते हैं। परन्तु इस सत्य
 आचरण का बदला लेने के लिए आप मुझे मृत्यु-दण्ड देंगे, तो
 वर्तमान व भविष्य की जनता हम दोनों के कार्य का मूल्यांकन
 एवं फैसला अवश्य करेगी।”

नियमित समय



एक समय का प्रसंग है कि एक विद्यार्थी नियमित समय पर स्कूल पहुँचना था। अपने इस कार्य से स्कूल में वह प्रसिद्ध हो गया था।

एक दिन सब विद्यार्थी प्रार्थना के समय एकत्र हुए परन्तु वह विद्यार्थी नहीं आया। सब को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि याद वह विद्यार्थी नियम पर क्यों नहीं आया है।

मास्टर साहब ने प्रार्थना का समय हो जाने पर भी प्रार्थना कुछ विलम्ब से करने की आज्ञा दी। कुछ ही प्रतीक्षा के पश्चात् वह विद्यार्थी आ गया और अपने स्थान पर जाकर बैठ गया।

मास्टर ने उससे कहा—'तुम समय पर नहीं आये थे इस लिये याद मैंने प्रार्थना को कुछ समय के लिए स्थगित कर दिया था। मैंने समझा कि शकल स्कूल की बड़ी घाबरे बत रही होगी। विद्यार्थी ने उत्काम ही अपनी बड़ी निष्कामी तो स्कूल की बड़ी पाँच मिनट आये बत रही थी।

लिकन की दयावृत्ति :



एक समय अमेरिका के प्रेसीडेन्ट इब्राह्म-लिकन राज्य-सभा में जा रहे थे। रास्ते में उन्होंने एक सूअर को कीचड़ में फंसे हुए देखा, जो कि कीचड़ से बाहर निकलने के लिए छटपटा रहा था। किन्तु, ज्यो-ज्यो बाहर निकलने का प्रयत्न कर रहा था, त्यो-त्यो वह अधिक कीचड़ में फँसता जा रहा था।

प्रेसीडेन्ट लिकन ने जब सूअर की दयनीय दशा देखी, तो उनसे न रहा गया और उन्होंने अपनी पोशाक सहित कीचड़ में प्रवेश किया। अपने हाथों से उस सूअर को कीचड़ से बाहर निकाल दिया।

इब्राह्म लिकन समय पर उन कपड़ों सहित राज्य-सभा में पहुँचे। प्रेसीडेन्ट को ऐसे कीचड़-युक्त कपड़ों में देख कर सभा-सदों को बहुत ही आश्चर्य हुआ। सभी ने इस सम्बन्ध में जानकारी करनी चाही तो लिकन ने सब वृत्तान्त कह सुनाया।

निकल की इस बात पर सभी समासब बहुत ही प्रसन्न हुए और उनकी प्रशंसा करते हुए बोले कि— 'जब हमारे राम्य के माध्यम ने एक दुखी सुपर के ऊपर इतनी दया की है तो फिर बसता की सुख-सुविधा के सम्बन्ध में तो फिर कहना ही क्या है?'

जब प्रेसीडेन्ट ने अपनी धार्मिक प्रशंसा सुनी तो कहा— 'तुम माग मेरी भूटी प्रशंसा कर रहे हो। मैंने सुपर के ऊपर क्या दया की है? यह मेरी समझ में नहीं आ रहा है। मैंने तो कीचड़ में फँसे हुए सुपर को बेल कर, दुःख का समुद्र सिन्हा-वाली और उस दुःख को मिटाने के लिए ही उसकी कीचड़ से बाहर निकाला। इसलिए मेरे इस कार्य से स्पष्ट है कि मैंने सुपर को कोई मलाई नहीं की है बल्कि अपने दुःख को मिटाने के लिए ही उसकी कीचड़ से बाहर निकाला है।'

जब सुपर कीचड़ में बाँती उसे देखकर मेरी आत्मा को दुःख हा रहा था परन्तु देखे ही वह बाहर निकला—मेरी आत्मा का दुःख नष्ट हो गया। सब माँग ही बताए कि मैंने सुपर की मलाई की है या अपनी ?

ससार में इन्सान अपने दुःख को ही दुःख समझता है। ऐसा तो कोई विरमा ही होता है जो दूसरों के दुःख को भी अपना दुःख समझे। जो दूसरों के दुःख में सहामक हो—जब यही सहानुभूति सेवना समभाव है और यहाँ वास्तविक बर्मे है।

'राम्य है ऐसी माताओं को जो ऐसे मानव रत्न को बरम देनी है, जो अपने कर्मों से दूसरों का प्रफुल्लित करता है, और दूसरों के दुःख को अपना दुःख समझता है।'

आत्म-विश्वास : अजेय दुर्ग है :



योरूप मे स्ट्वन नाम का एक धर्म-परायण व्यक्ति हुआ है। वह अति उदार, निर्भय, न्यायपरायण और सत्यनिष्ठ था।

एक बार उमसे पूछा गया—“देश व धर्म-द्रोही पुरुष आपके ऊपर आक्रमण करें तो आप क्या उपाय करोगे ?” उसने उत्तर दिया—“मैं सुरक्षित किले मे बैठा रहूँगा।”

एक समय दुश्मन ने स्ट्वन को अकेला समझ कर घेर लिया और कहा—“अब आप वतलाइए, आपका किला कहाँ है, जिसमे आप सुरक्षित बैठ सकोगे ?” स्ट्वन ने अपनी छाती पर हाथ मारकर कहा—“यह मेरा किला है। इसके ऊपर कोई भी हमला नहीं कर सकता।”

“दुश्मन केवल इस क्षण भगुर शरीर को ही नष्ट कर सकता है, परन्तु अजर-अमर आत्मा को नष्ट करने मे कोई भी समर्थ नहीं हो सकता। आपके हथियारों को देखकर मैं डरा नहीं हूँ। मैं अपने विश्वास रूपी दुर्ग मे अब भी सुरक्षित बैठा हूँ कि—

“मास्मा को कोई मट्ट नही कर सकता । अब बतसाइए मेरा कोई क्या बिपाद सकता है ?”

स्दिबत की हठ अपूर्व निर्भंगता एवं घटम बिबिषास को हेतु कर अनु भो पकित हो गया और उसे छोड़ कर जाता गया ।

अंग्रेज कप्तान की कर्तव्य-परायणता :



एक बार जहाज का नीचे का हिस्सा समुद्र में टूट गया। सभी को डूबने की चिन्ता हो गई।

कप्तान का कर्तव्य है कि वह स्त्री, बालक तथा पुरुष आदि सभी को पहले बचाने का प्रयत्न करे और अन्त में स्वयं तैर कर बाहर निकल जाय। कप्तान ने नियमानुसार सभी को बचा लिया और सुरक्षित किनारे पर भेज दिया।

कप्तान स्वयं को बचाने के प्रयत्न में था ही कि उसे एक बालक जहाज के कोने में बैठा हुआ दिखलाई पड़ा, उसने आश्चर्य से बालक के पास जाकर पूछा—“तुम कौन हो ? इतनी देर हो गई, सब चले गए परन्तु तुम यहाँ कैसे रह गये हो।”

बालक ने उत्तर दिया—“मेरे पास टिकट के लिए पैसे नहीं थे, इसलिए मैं आप इस जहाज के कोने में बँठ गया था, जिससे मुझे कोई नुकसान न ले।”

कप्तान शीघ्र में पड़ गया—“यदि बच्चे को बचाने काऊ मा ही मरी मृत्यु सामन है और यदि मैं स्वयं घबेला तैर कर निकल पाऊ तो यह शायक वा कि समुद्र में डूबकर मर जायगा।” उस घपने शान-बर्हों का भी ध्यान आया कि यदि मैं स्वयं यहाँ डूब गया तो मैरी सभी ब बर्हों का क्या हाल होगा।

कप्तान ने माया कि—“बुद्ध भी हो पहलक के प्रत्येक व्यक्ति को बचा कर ही मुझे बचने का प्रयत्न करना चाहिए और इसी प्रकार मैं अपने कर्तव्य का पालन भी कर सकूँगा। इसके बाद उतने स्वयं तैरने का पटा उतार कर उस बायक को पहना दिया और तैरने के लिये समुद्र में उतार दिया। कुछ क्षणों के परचात् ही यह पहलक कप्तान सहित समुद्र में डूब गया।



निष्काम-सेवा :



एक समय युद्ध-भूमि में सेनाध्यक्ष सिडनी घायल होकर गिर पड़ा। उन्ही समय एक सैनिक ने सेनाध्यक्ष से लड़ने वाले शत्रु सैनिक को लड़कर भगा दिया और सेनाध्यक्ष को उठा लिया।

वह सैनिक सेनाध्यक्ष को अलग निर्भय स्थान पर ले गया और खूब सेवा की। सेनाध्यक्ष उस सैनिक से बहुत प्रसन्न व प्रभावित हुए। सेनाध्यक्ष ने उस सैनिक का नाम पूछा, तो सैनिक ने स्पष्ट शब्दों में कहा—“साहब, मैंने इनाम पाने की भावना से यह कार्य नहीं किया है, इसलिए मैं अपना नाम नहीं बतलाऊँगा। बिना नाम बतलाए ही वह सैनिक चला गया। सेनाध्यक्ष ने बहुत खोज-बीन कराई, परन्तु निस्वार्थ-भाव से सेवा करने वाले उस सैनिक का कहीं भी पता न चल सका।



दूसरों की सेवा ही सच्ची साधना है



ब्रिटेन धीरे

अमेरिका धीरे ब्रिटेन में वेदान्त का प्रचार करके भारतवर्ष वापस आने के पश्चात्, स्वामी विवेकानन्द ने निश्चय किया कि— मेरे मठ में बितने भी संत हैं, उन्हें सबको धर्म-धर्म स्थानों में भ्रमण करके भी समझ्यसु परम हृत् के उदार सिद्धान्तों का प्रचार करना चाहिये ।

स्वामी विवेकानन्द ने स्वामी विरजानन्द को पून बंगाल के ब्रह्म नगर में उपदेश करने हेतु जाने की आज्ञा दी । स्वामी विरजानन्द एकान्तवासी धीरे धान्तवृत्ति के संत थे । उन्होंने ऐसे बंगाल में पैसना उचित न समझा । उन्होंने स्वामी विवेकानन्द से कहा—“ स्वामी जो मैं कुछ भी नहीं जानता हूँ, इसलिये मुझे उपदेश देने हेतु मठ में बिये ।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा— ‘तुमको वही आकर यही उपदेश देना है कि उपनिषदों में कहा गया है ।

स्वामी विवेकानन्द की बात स्वामी विरजानन्द के गले नहीं उतरी और उन्होने स्पष्ट कह दिया—“स्वामी जी कुछ थोड़े दिन और मुझे साधना करके मुक्ति को तैयारी करने दो।”

विरजानन्द की उपर्युक्त बातों से स्वामी विवेकानन्द को बहुत क्रोध आया और वे बोले—“यदि तुम परोपकार की भावना को त्याग कर केवल अपनी ही मुक्ति को प्राप्त करोगे, तो सीधे नरक में जाओगे। मुक्ति पाने का सर्वोत्तम उपाय यही है कि दूसरो की सेवा करो, और यही सबसे बड़ी साधना है।”



दूसरों की सेवा ही सच्ची साधना है



ब्रिटेन और अमेरिका आदि विदेशों में वेदान्त का प्रचार करके भारतवर्ष वापस आने के पश्चात्, स्वामी विवेकानन्द ने निश्चय किया कि—मेरे मठ में बितने भी संत हैं, उन्हें सबको समय-समय स्थानों में भ्रमण करके भी समकृप्य परम हंस के उचार सिद्धान्तों का प्रचार करना चाहिये।

स्वामी विवेकानन्द ने स्वामी विरजानन्द को पूरब बंगाल के बार्कनगर में उपदेश करने हेतु आने की आज्ञा दी। स्वामी विरजानन्द एकान्तवासी और शान्तबुद्धि के सन्त थे। उन्होंने ऐसे बंगाल में पैदावा अभिनव न समझा। उन्होंने स्वामी विवेकानन्द से कहा—“स्वामी को मैं कुछ भी नहीं मानता हूँ, इसलिये मुझे उपदेश देने हेतु मत भेजिये।”

स्वामी विवेकानन्द ने कहा—‘तुमको वहाँ जाकर यही उपदेश देना है कि उपनिषदों में कहीं क्या है।’

आदि गुणों के कारण ही हम आपके प्रिय बन सके हैं और इन मदगुणों को हम गुरु की शिक्षा में ही ग्रहण कर सके हैं।”

सुलतान अपने अंग-रक्षकों के इन कार्य में बहुत प्रभावित हुए और भविष्य में उनको पहले से भी अधिक प्रेम-पूर्वक रखने लगे।



गुरु का सम्मान *



बेस छात्री साहब विद्यालय और सभाघरों
पुस्य थे। एक दिन वे जैसे कपड़े पहने हुए घूमने जा रहे थे।
रास्ते में बेस के मुन्तान अपने बस-रक्षकों सहित मिले। छात्री
साहब को देखकर मुन्तान के बस रक्षक उठीं और बाड़े से नीचे
उतरे और छात्री साहब के पैरों पर गिर पड़े। छात्री साहब की
कृपामता के समाचार पारि भी पूछे।

राजा (मुन्तान) बिहार में पढ़ गया कि— भिरे राज्य में
ऐसा कौन व्यक्ति है, जिसको मेरे बस-रक्षक मेरे से भी अधिक
घाबर व सम्मान बैठे हैं।

वेन साहब से बातचीत करके जब सब रक्षक वापिस
मुन्तान के पास पार ता मुन्तान ने उनसे ऐसा करने का
कारण पूछा। सब रक्षकों ने कहा— ये हमारे पिता हैं।
हमारे घर जो भी घबराईं भाप बैठते हैं वह सब उनके
मदारवश का है। फल है। तेबस्विता स्वामी मति, सत्यवादिता

आदि गुणों के कारण ही हम आपके प्रिय बन सके हैं और इन सद्गुणों को हम गुरु की शिक्षा से ही ग्रहण कर सके हैं।”

सुलतान अपने अंग-रक्षकों के इस कार्य से बहुत प्रभावित हुए और भविष्य में उनकी पहले से भी अधिक प्रेम-पूर्वक रखने लगे।



असतोप की दवा



एक समय मेला साही साहब अपनी गरीबी के ऐसे संकट-काल में फँस गये कि उनके पास पैर में पहनने को जूते तक भी नहीं रहे। नए जूते पहनने को उनके पास एक पाई तक नहीं थी। जतने में उनको मति कष्ट होता या परल्लु जूता जरीदने में असमर्थ वे इसमिए करते भी क्या ?

एक दिन के निकट की मस्जिद में गए और वहाँ देखा कि एक हीन व्यक्ति जिसके कि दोनों पैरों भी नहीं थे मस्जिद के फाटक के पास बैठा है।

मेला साही को विचार आया कि—यह मिलाठी गरीब भी है और अपने दोनों पैरों के न होने के कारण जतने-फिरने में भी असमर्थ है। इस रूप को देख कर साही साहब की मति धुप गई और उन्होंने बुढ़ा का हवा-हवा बार बन्धवार किया— 'हे गरीब परबरे ! तू मेरे ऊपर बहुत बड़ा साहसाज किया है, जिससे कम से कम मेरे दोनों पैर ही सही समाप्त हैं।'

सत्य कहा है कि गरीब को अपने से भी गरीब दिखलाई दे जाय और दुखी को अपने से अधिक दुखी मिल जाए, तो असन्तोष की मात्रा कम हो जाती है ।



असतोष की दवा



एक समय रोस छात्री साहब अपनी मरीचो के ऐसे संकट-कास में फँस गयी कि उनके पास पैर में पहनने को जूते तक भी नहीं रहे। नए जूते पहनने को उनके पास एक पाई तक नहीं थी। बचने में उनको प्रति कष्ट होता था परन्तु जूता जमीदानी में असमर्थ से इसलिए करते भी क्या ?

एक दिन वे निकट की मस्जिद में गए और वहाँ देखा कि एक हीन व्यक्ति जिसके कि दोनों पैर भी नहीं थे मस्जिद के फाटक के पास बैठा है।

रोस छात्री को विचार आया कि—यह भिलाठी मरीच भी है और अपने दोनों पैरों के न होने के कारण बचने-फिरने में भी असमर्थ है। इस हृदय को देख कर छात्री साहब की पार्श्व मुन गई और उन्होंने मुझा को हजार-हजार बार धमकाया— 'हे मरीच परवर ! तू ने मेरे ऊपर बहुत बड़ा सहसाय किया है तिमने कम से कम मेरे दोनों पैर तो बही सत्तामय है।'

सत्य कहा है कि गरीब को अपने से भी गरीब दिखलाई दे जाय और दुखी को अपने से अधिक दुखी मिल जाए, तो असन्तोष की मात्रा कम हो जाती है।



द्वेष की दवा—क्षमा



एक दिन बलीश्वर हाथ-उत रबीर का सहवाया बहुत ही श्रद्धित और धारण की प्रवस्था में पिता के पास धारा और कहने लगा कि प्रमुख सिपाही के लड़के मे मुझे बहुत पालियाँ की है। बलीश्वर ने बलीर को बुला कर कहा— मेरे लड़के का एक सिपाही के लड़के ने बहुत पालियाँ की है। इसलिए आप इस सम्बन्ध में बतलाइए कि क्या करना चाहिए।

बलीर ने कहा— सरकार! उस सिपाही के लड़के को कड़ी सजा देनी चाहिए वा सजाप-मोक्ष देना चाहिए। बलीर की बात सुनकर बलीश्वर ने अपने लड़के से कहा—“बेटा सबसे अच्छा तो यही है कि तू खुद ही उसे क्षमा कर दे और धमक इतना रहम दिन होने को तरे धमक इतना नहीं है तो तू भी उस सिपाही के लड़के को बली के बचने गाली दे दे।

प्रार्थना के साथ प्रयत्न भी आवश्यक :



एक स्कूल में बहुत ही योग्य मास्टर पढाया करता था। जब अध्यापक बच्चों से कोई प्रश्न पूछता था, तो उनमें से एक लड़का सदा ही सबसे पहले प्रश्न का उत्तर देता था।

एक दिन दूसरे विद्यार्थी ने उस विद्यार्थी से पूछा—“भाई इसका क्या कारण है कि तू अध्यापक के प्रश्न का उत्तर सबसे पहले ब ठीक देता है।” विद्यार्थी बोला—“भाई मैं सदा सरस्वती को प्रणाम करता हूँ और फिर मन में दृढ संकल्प करता हूँ कि आज का पाठ मुझे अच्छी प्रकार याद हो जाना चाहिये।”

दूसरे दिन उस विद्यार्थी ने भी सरस्वती की प्रार्थना की, परन्तु उसे पाठ याद नहीं हुआ। स्कूल में आकर वह विद्यार्थी क्रोधित हुआ और उस विद्यार्थी से कहने लगा कि—“तुमने मुझे धोखा दिया है। आज मैंने अच्छी प्रकार सरस्वती की पूजा

की है, परन्तु फिर भी मुझे पाठ याद नहीं हुआ है। मैं तो दूसरे दिनों ही अपेक्षा याद अधिक भूल गया हूँ।”

पहला विद्यार्थी बोला— मैंने सुना है धीर अनुभव भी किया है। यदि व्यक्ति प्रारम्भ से ही मक्ति-पूर्वक प्रार्थना किया करे धीर उसके साथ प्रयत्न भी किया करे, तो पाठ सरलता पूर्वक याद हो जाता है परन्तु तुम लोगों ने बिना परिश्रम के ही पढ़ित बनने का प्रयत्न किया है। प्रत्येक पुस्तक को मक्ति-प्राप्त्यना के साथ स्थिर-चित्त से पाठ भी याद करना चाहिए धीर इनका अनुसरण करने से अवश्य ही सफलता मिलनी।”



विश्वास का फल :



एक दिन विलायत के एक प्रसिद्ध वक्ता और पार्लियामेण्ट के सभासद मिस्टर फोक्स रुपये गिन रहे थे और पास में ही जिस व्यक्ति को रुपये देने थे, उसके नाम लिखा पत्र भी रखा हुआ था। उसी समय एक दूकानदार आकर रुपये माँगने लगा और रुपये का बिल फोक्स के हाथ में दे दिया।

दूकानदार ने कहा—“रुपये मुझे इसी समय चाहिये, क्योंकि मुझे एक साहूकार को देने हैं।”

मिस्टर फोक्स बोले—“रुपये मैं एक महीना बाद दूँगा, क्योंकि ये रुपये मुझे सेरिडन को देने हैं। सेरिडन से ये रुपये मैंने बिना लिखा-पढी के ही लिये थे। यदि अकस्मात् मेरी मृत्यु हो जाती है, तो उस बेचारे के पास प्रमाण-स्वरूप एक चिट्ठी तक भी मेरे हाथ की नहीं है। इसलिये मैं सबसे पहले उसका ऋण चुकाऊँगा।”

दूकानदार फोक्स की भावना को समझ गया और इसका उसके ऊपर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ा। इसी कारण उसने

की है परन्तु फिर भी पुष्पे पाठ याद नहीं हुआ है। मैं तो दूसरे दिनों की अपेक्षा मात्र अधिक घुन भया है।”

पहला विद्यार्थी बोला—“मैंने सुना है घोर अनुभव भी किया है। यदि व्यक्ति प्रारम्भ से ही मक्ति-पूर्वक प्रार्थना किया करे और उसके साथ प्रयत्न भी किया करे, तो पाठ सरलता पूर्वक याद हो जाता है। परन्तु तुम लोगों ने बिना परिश्रम के ही पंडित बनने का प्रयत्न किया है। प्रत्येक पुस्तक को मक्ति-भावना के साथ स्थिर-चित्त से पाठ भी याद करना चाहिए और इसका अनुसरण करने से भवश्य ही सफलता मिलेगी।”



अमेरिकन इंडियन की ईमानदारी :



अमरीका के मूल निवासी भी इंडियन अथवा रैड-इंडियन पुकारे जाते हैं। एक समय का प्रसंग है कि एक अमेरिकन इंडियन ने किसी अमेरिकन से तम्बाकू माँगी। अमेरिकन ने उसे मुट्टी भर कर तम्बाकू दे दिया।

दूसरे दिन वह इंडियन उस यूरोपियन के घर गया और बोला—“आपने जो तम्बाकू मुझे दी थी, उसमें एक दुअन्नो निकली है और उस दुअन्नो को देने के लिये ही मैं यहाँ आया हूँ।”

यूरोपियन बोला—“यदि तम्बाकू के साथ दुअन्नो भी तुम्हारे पास आ गई है, तो वह भी तुम्हारी हो गई है, इसमें चिन्ता की क्या बात है?” इंडियन बोला—“देखो, मेरे अन्त करण में दो भावनाएँ काम कर रही हैं। दो विचारों का युद्ध मेरे अन्त करण में चल रहा है। एक तो यह कि जैसा आप कह रहे हैं कि दुअन्नो मेरे पास आ गई तो मेरी हो गई। दूसरा

फोक्स के साथ कोई बात बिबाद नहीं किया। डूकानदार को फोक्स का इतना विश्वास हो गया कि उसके हाथ की चिट्ठी तक उठी जण मिस्टर फोक्स के सामने ही पाड़ जाती।

डूकानदार बोला— मैंने भी आपके लिये कागज के टुकड़े टुकड़े कर दिये हैं इसलिये अब मेरे पास भी दावा करने का कोई प्रमाण नहीं रहा है। अब आप जब चाहे अपनी सुविधानुसार रुपये दे सकते हैं।

डूकानदार के इस विश्वास और सौजन्य से मिस्टर फोक्स बहुत ही प्रभावित हुए और प्रसन्नतापूर्वक डूकानदार से बोले—
 'यह तो तुम ही थे स्वयं के जापो क्योंकि तुम्हारा मेरे ऊपर विश्वास के प्रतिरिक्त कारण भी पुराना है और तुम्हें इस समय वेसे की भी आवश्यकता है। मैं कैरिडम को इस सम्बन्ध में सूचित कर दूंगा और उसके रुपये कुछ समय पश्चात् दे दूंगा।



अंग्रेज बालक का विश्वास :



एक वार वर्षा नहीं हुई थी, इससे सभी लोग व्याकुल हो उठे। किसानों ने सोचा कि यदि इस वार वर्षा न हुई, तो देश के ऊपर अकाल का सकट आ जाएगा, लोग भूख से तड़प-तड़प कर जाएंगे।

एक दिन नगर-निवासी ईश्वर से प्रार्थना करने के लिये एक स्थान पर इकट्ठे हुए और वर्षा के लिये प्रार्थना करने लगे।

एक अंग्रेज का बालक भी वहाँ छाता (छत्री) लेकर आया। सब लोग उस बालक को देखकर हँस पड़े और बोले—“हम तो एक-एक बूंद पानी के लिये तरस रहे हैं और यह बालक वर्षा से इतना घबरा रहा है कि बिना वर्षा के भी घर से छाता लेकर चला है।”

अंग्रेज बालक ने, प्रभौरता से उत्तर दिया—“मैंने पहले ही सुन लिया था कि आप लोग यहाँ पर ईश्वर से वर्षा की प्रार्थना करने के लिये एकत्रित हुए हैं। परन्तु यहाँ आकर मुझे अत्यन्त

विचार है कि मैंने दुपत्ती माँगी नहीं थीर देने वाले ने मुझे ही भी नहीं बल्कि धूल से ही मेरे पास धा गई है। इसलिये यह दुपत्ती कित्ती प्रकार भी मेरी नहीं हो सकती है।”

इब्बिन ने कहा— ‘रात को मेरे मन में इन विपरीत विचारों का बराबर संघर्ष चलता रहा थीर इसी कारणवश मैं रात को सो भी न सका। रात भर प्रयत्न करने पर भी मुझे नींद नहीं आई। अतः मैं अन्धे विचारों का अनुसरण करके यह दुपत्ती वापिस करने आया हूँ, इसलिये धाप इसे से लीजिये।”



राम-नाम का विश्वास :



एक मूर्ख राजा एक दिन राज्य-सभा में बैठकर गभीरता-पूर्वक बोला—“मेरा कुत्ता जो कि वर्षों से मैंने पाला है, क्यों नहीं बोलता है ? मालूम पड़ता है कि इसकी जीभ में कोई रोग है, इसलिये राज्य-चैद्य को बुलाओ।”

राज्य-वैद्य राजा के पास आया तो राजा ने हुक्म दिया—“इस कुत्ते के गोग का इलाज करो, यदि यह कुत्ता चौदह दिन के अन्दर न बोला तो तुमको फाँसी पर चढ़ा दिया जाएगा।”

वैद्य बोला—“महाराज, यह तो बश-परशपरा है। इस कुत्ते को कोई गोग नहीं है, फिर इसका गोग में किस प्रकार मिटा सकता है, जब कि यह रोग-मुक्त नहीं है।”

राजा ने वैद्य की एक भी बात न मानी और कुत्ते को चौदह दिन के अन्दर ठीक करने की आज्ञा प्रदान की। राज्य-वैद्य ने हाथ जोड़कर राजा से १८ वर्ष का समय मागा। राजा ने १४ वर्ष का समय सत्पुत्र दे दिया।

पारबर्ष हुआ कि छाता एक के पास भी नहीं है तो क्या भाप सब लोगों को यह विश्वास है कि प्रार्थना करने पर भी पानी नहीं बरसेगा ।

बालक के इस विश्वासपूर्ण उत्तर से सभी पारबर्ष-बन्धित रह गये ।



राम-नाम का विश्वास :



एक मूर्ख राजा एक दिन राज्य-सभा में बैठकर गभीरता-पूर्वक बोला—“मेरा कुत्ता जो कि वर्षों से मैंने पाला है, क्यों नहीं बोलता है ? मालूम पड़ता है कि इसकी जीभ में कोई रोग है, इसलिये राज्य-वैद्य को बुलाओ।”

राज्य-वैद्य राजा के पास आया तो राजा ने हुक्म दिया—“इस कुत्ते के रोग का इलाज करो, यदि यह कुत्ता चौदह दिन के अन्दर न बोला तो तुमको फाँसी पर चढ़ा दिया जाएगा।”

वैद्य बोला—“महाराज, यह तो वश-परम्परा है। इस कुत्ते को कोई रोग नहीं है, फिर इसका रोग मैं किस प्रकार मिटा सकता हूँ, जब कि यह रोग-युक्त नहीं है।”

राजा ने वैद्य की एक भी बात न मानी और कुत्ते को चौदह दिन के अन्दर ठीक करने की आज्ञा प्रदान की। राज्य-वैद्य ने हाथ जोड़कर राजा से १४ वर्ष का समय माँगा। राजा ने १४ वर्ष का समय सहर्ष दे दिया।

राज्य-बैद्य कुत्तों को अपने साथ ले गया और यन्त्र के फ्लटक के सामने जाकर बैठ गया। राज्य-बैद्य प्रतिदिन तुमसी के पत कुत्त के मस्तक पर लगाता था और स्वयं स्नायु करके कुत्त के कान में 'राम-नाम' का जाप सुनाने लगा।

राज्य-बैद्य के एक मित्र ने पूछा—“इस प्रकार समय बष्ट करने से क्या लाभ ? क्या इस प्रकार कुत्तों के मस्तक पर तुमसी का पता लगाने और इसके कान में 'राम-नाम' बपने से यह बोलने लगेगा ?”

बैद्य ने उत्तर दिया— १४ वर्ष तक 'राम-नाम' का जाप करने के पश्चात् मुझे फाँसी की सजा दी जायेगी तो मुझे कोई बष्ट न होना और न फाँसी की सजा से डर ही लयेगा। और यदि १४ वर्ष की अवधि से पहले यह कुत्ता मर गया तो बुरा कुत्ता मिसैना और फिर १४ वर्ष की अवधि बढ जायेगी। यदि संयोगवत् १४ वर्ष की अवधि में राजा की मृत्यु हो गई तो यह सब मामला ही समाप्त हो जायेगा। इस प्रकार राजा ने मुझे यह काम सौंपकर मेरा कल्याण ही किया है, जिससे कि मुझे 'राम-नाम' बपने के अतिरिक्त कोई कार्य करने की विन्ता ही नहीं है।”

संत-वाणी का प्रभाव :



एक समय मारवाड़ी सेठ सूरजमल अपने परिवार सहित हरद्वार की यात्रा करने गए। जब वे गंगाजी में स्नान कर रहे थे, तो एक सत वहाँ आ निकला। सत ने समझ लिया कि यह कोई बहुत बड़ा सेठ है।

सत उस सेठ को देखकर हँस पड़ा। सेठ ने हँसने का कारण पूछा तो सत ने कहा—“यहाँ तुम पानी में डुबकी लगाकर पापों को धोने आये हो या कुछ परोपकार की भावना रखते हो ?”

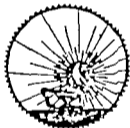
सेठ जी तुरन्त सत के पास आये और प्रणाम करके विनम्रता सहित बोले—“महाराज, मुझे परोपकार का कोई ऐसा कार्य बतला दीजिये, जिससे कि मैं वह कार्य कर सकूँ। उस कार्य के लिए मेरे लाखों रुपये भी खर्च हो जायें, तो कोई चिन्ता की बात नहीं है।”

सत ने प्रसन्नतापूर्वक कहा—“आप हरद्वार से/केदारनाथ तक सड़क बनाकर साधु-सत्तों के भोजन का स्थायी प्रबन्ध

करा दें तो तुम्हारे जैसे सेठ की यात्रा सफल हो सकती है। हाँ, यदि परीब पादमी केवल नंगा में उबरी लमा कर ही जमा जाए, तो उसके लिये तो इतना ही पर्याप्त है।”

सेठ मूरजमत ने सेठ की धारा का पालन किया और धीमे ही उपरोक्त व्यवस्था कर ही गई। यात्रा भी इन्कार में सेठ मूरजमत को धर्मशास्त्रा उनका नाम से प्रसिद्ध है।

॥ ११ ॥ ११ ॥ ११ ॥



सम्मानःपदवी से या मनुष्यता से ?



एक समय सिकन्दर ने अपने एक सूवेदार को उसके पद से अलग कर दिया। सूवेदार को किसी प्रकार का दुःख न हुआ और वह पद से अलग होने पर भी आनन्द-पूर्वक रहने लगा।

कुछ समय पश्चात् सिकन्दर ने उसे बुलाया और पूछा—
“तुमको मैंने सूवेदार के पद से अलग कर दिया है, परन्तु फिर भी तुम प्रसन्नता एवं प्रफुल्लित मन से रह रहे हो। पद से हटाने का तुम्हारी चित्त-वृत्ति में कोई भी अन्तर नहीं पड़ा, ऐसा मुझे स्पष्ट प्रतीत हो रहा है। क्या तुम मुझे बता सकते हो कि ऐसा क्यों है ?”

सूवेदार बोला—“हुजूर, आपने मुझे पद से हटा दिया है—इसका मुझे कोई रजोगम नहीं है, बल्कि खुशी है। अब मैं अपने को पहले से उत्तम अनुभव कर रहा हूँ। क्योंकि जब मैं अपने बड़े पद पर था तो उस समय मेरे पास सलाह-मशवरे के लिये सिर्फ बड़े-बड़े हाकिम-हुक्काम (आफीसर) ही आते थे,

घौर छोटे अधिकारी व सिपाही मेरे पास तक जाने में संकोच का अनुभव करते थे । लेकिन अब मेरे साथ छोटे घौर बड़े सभी हाकिम और अदना सिपाही तक आकर बातचीत करते हैं और मेरी खरियत का हानि जाने की कामना रखते हैं ।”

सिकन्दर बोला—“तुमको पर से हटा दिया फिर भी तुम अपने को पहले से कुब्र महसूस कर रहे हो और अपनी बिन्दगी को पहले से कहीं अधिक समझकर खुशी महसूस कर रहे हो ।

सूबेदार ने कहा—“सरकार घाब जानते हैं कि इस्लाम का बह्यमन और इज्जत बड़े दरजे पर पहुँच जाने में नहीं है बल्कि इसमें है कि इस्लाम को पम्बिक (बनता) का पिठना पकीत और सच्ची मुहम्बत हासिल है । पम्बिक अपारा-अबादा धारमी जिसे मुहम्बत व इज्जत की निगाह से देखने लयते हैं वस बुनिया में बही बड़ा इस्लाम है । मेरे ख्याल में इस्लाम की इज्जत बड़े दरजे पर पहुँचने से पहले होती बल्कि उसमें इस्लामियत होने से होती है । अब घाप ही बतसाइये कि इज्जत दरजे में है वा इस्लामियत में ?”

सिकन्दर सूबेदार के बिचारों से बहुत प्रभावित हुआ और प्रसन्नता पूरक उसे पुन सूबेदार का पर प्रधान कर दिया ।

इस दृष्टान्त से स्पष्ट है कि—“मनुष्यता का स्तर—अल्प समो स्तरे से ऊँचा और पूबनीय है ।

हातिमताई का परोपकार :



प्राचीन काल में समस्त मानव-जाति का हित-चिन्तक हातिमताई नामक एक राजा हुआ है। वह सदा ही मानव-जाति के हित व परोपकार के विषय में विचार किया करता था।

एक बार अरब के बादशाह ने उसके ऊपर चढ़ाई कर दी। हातिमताई ने सोचा कि यदि मैं युद्ध करता हूँ तो लाखों व्यक्तियों हत्या होगी और महान् नर-संहार अपनी आँखों से देखना पड़ेगा। आखिरकार राज्य से चुपचाप भाग जाऊँ और एक महान् नर-महार होने से बच जाय।

हातिमताई राज्य छोड़ कर भाग गये और अपना रूप बदल कर इधर-उधर छिपकर घूमने लगे।

अरब के बादशाह को इससे सतोष नहीं हुआ और उन्होंने सोचा कि 'कहीं ऐसा न हो कि हातिमताई फिर से अपनी सुरक्षा-व्यवस्था बढाकर मेरे ऊपर आक्रमण कर दे और मेरा

घोर छोटे अधिकारी व सिपाही मेरे पास तक जाने में संकोच का अनुभव करते थे। लेकिन अब मेरे साथ छोटे घोर बड़े सभी हाकिम घोर बदना सिपाही तक आकर बाठबीठ करते हैं घोर मेरी अंत्यिमता का हाम जाने की कामना रखते हैं।”

मिकन्दर बोला—“तुमको पद से हटा दिया फिर भी तुम अपने को पहले से कुछ महसूस कर रहे हो और अपनी विन्दपी को पहले से कही धम्मा समझकर खुशी महसूस कर रहे हो।

सूबेदार ने कहा—“सरकार साथ जाते हैं कि इन्सान का बहपन घोर इज्जत बड़े दरजे पर पहुँच जाने में गही है बल्कि इसमें है कि इन्सान को पम्बिक (बगता) का बितना सकीन घोर सक्ती मुहम्बत हासिल है। पम्बिक ज्वारा-ज्वारा धादमी जिसे मुहम्बत व इज्जत की निगाह से देखने मपते हैं, बस दुनिया में गही बड़ा इन्सान है। मेरे क्वास में इन्सान की इज्जत बड़े दरजे पर पहुँचने से गही होती बल्कि उसमें इन्सानियत होने से होती है। अब साथ ही बतलाइये कि इज्जत दरजे न है या इन्सानियत में ?”

मिकन्दर सूबेदार के विचारों से बहुत प्रभावित हुआ घोर प्रसन्नता पूर्वक उसे पुन सूबेदार का पद प्रदीन कर दिया।

इस हृष्टान्त से स्पष्ट है कि—“मनुष्यता का स्तर—सम्ब सभी स्तरों से ऊँचा घोर पूजनीय है।”



हातिमताई का परोपकार :



प्राचीन काल में समस्त मानव-जाति का हित-चिन्तक हातिमताई नामक एक राजा हुआ है। वह सदा ही मानव-जाति के हित व परोपकार के विषय में विचार किया करता था।

एक बार अरब के बादशाह ने उसके ऊपर चढ़ाई कर दी। हातिमताई ने सोचा कि यदि मैं युद्ध करता हूँ तो लाखों व्यक्तियों हत्या होगी और महान् नर-संहार अपनी आँखों से देखना पड़ेगा। आखिरकार राज्य से चुपचाप भाग जाऊँ और एक महान् नर-संहार होने से बच जाय।

हातिमताई राज्य छोड़ कर भाग गये और अपना रूप बदल कर इधर-उधर छिपकर घूमने लगे।

अरब के बादशाह को इससे सतोप नहीं हुआ और उन्होंने सोचा कि कहीं ऐसा न हो कि हातिमताई फिर से अपनी सुरक्षा-व्यवस्था बढ़ाकर मेरे ऊपर आक्रमण कर दे और मेरा

राज्य भी खीन से। इसलिये निम्कटक ही राज्य बना सेना बाहिये।

बादशाह ने समस्त राज्य में बोधना करा ही कि—“जो भी बादमी हातिमताई का घर काटकर मेरे सामने पेश करेया उसे पन्नास हजार रुपये का इनाम दिया जायेगा।”

जिस वन में हातिमताई अपनी पत्नी सहित निवास कर रहा था उसी स्थान के निकट एक मकड़हाणू अपनी स्त्री सहित मकड़ी काट रहा था। प्रबन्ध गर्मी पड़ रही थी इसलिये दोनों स्त्री-पुंस्य मकड़ी काटते-काटते बक गये।—हातिमताई पुनःपुनः मकड़हारे को देख रहा था।

मकड़हाणू अपनी पत्नी से बोला—‘सब कड़ी मेहनत नहीं होती है। सरीर बूढ़ हो गया है इसलिये इस भीषण गर्मी में परिश्रम करने पर पूर्णतया पेट की सूख छात्र नहीं हो पाती है। इसी प्रसंगमें मकड़हारे की पत्नी बोली—‘भयंकर पाप हम हातिमताई मिल जाय तो उसे पकड़ कर बादशाह के पास ले जाय जिससे हमारे सब दुःख दूर हो जाएँ।’

परम देवानु हातिमताई उनकी यह बातें सुन रहा था। उनकी गरीबी को देखकर और उनके बाधनाप को सुनकर हातिमताई की धाँसों में सहसा साँस छनक भाये और वे उस समय चुप न रह सके।

हातिमताई उसी समय मरीच शक्ति के सामने जा करे हुए और बोले—‘मैं हातिमताई हूँ, इसलिये मुझे पकड़ कर बादशाह के पास ले जाओ।’

बूढ़ ने उत्तर दिया—‘मेरे से ऐसा न हो सकेगा।’

इस पर हातिमताई बोले—“मेरे भाग्य मे तो मरना लिखा ही है, इसलिये कोई न कोई मुझे मौत के घाट उतार कर मेरा सर बादशाह के सामने ले ही जायेगा, तो फिर तुम भले आदमा हो और गरीब भी हो, इसलिये तुम स्वय ही मुझे क्यो न 'ले चलो ?”

एक दूसरा व्यक्ति भी हातिमताई की खोज मे वहाँ आ निकला । इन तीनों का वार्तालाप जब उस व्यक्ति ने सुना तो सोचा कि मैं ही क्यो न इसे बादशाह के समक्ष पकडकर ले चलूँ और इस प्रकार सोचकर उसने हातिमताई को पकड लिया और बादशाह के सम्मुख प्रस्तुत कर दिया । इसके पश्चात् उसने बादशाह से इनाम माँगा तो हातिमताई बोला—“महाराज, यह भूठ बोलता है और उसने सही-सही घटना बादशाह को कह सुनाई । उसने बादशाह से कहा कि—“आप इस लकडहारे को तो इनाम दीजिये और मुझे फाँसी !”

हातिमताई की इस सत्यवादिता एव महान् आदर्श से बादशाह को आँखो मे आँसू आ गये और वे उसके गुणो पर मुग्ध हो गये । बादशाह सिंहासन से उठे और कहा कि—“इस लकडहारे को मैं इनाम देता हूँ और आपको आपका राज्य ! आप जैसे दयालु को मारकर मुझे कभी भी शान्ति न मिल सकेगी, इसलिये मुझे क्षमा कीजिये ।”



गुप्तदान का महत्व *



यह विज्ञापन प्रधान सुप है। आप देखते हैं कि सब जगह विज्ञापन का ही बोलबाला है। प्रत्येक वस्तु के बोर्डे नोटिस धारि जगह जगह आपको देखने का मिलाने।

घाबकन तो राम का भी प्रचार किया जाता है। लूब होल पीटा जाना है। देते हैं वल्प मात्रा में धीर प्रचार दिन जोसकर लूब करते हैं। यदि किसी व्यक्ति ने जन-हितार्थ कोई दुर्घा धर्मघाला या एक-दो कमरा बनवा दिया तो उस पर धपमी मीहर नगाने के सम्बन्ध में सबसे पहले सोचते हैं। सर्वन धनिकाय में इस प्रकार लुवे हृप पत्थर लमे धापको मिलीमे कि धसुक व्यक्ति ने यह दुर्घा कमरा या धर्मघाला का कमरा बनवाया है। धनिकतर व्यक्ति धपमी पुष्य-कषा का लूब धार्जन करने हैं धीर समाज में धपना मूठा प्रमाध स्थापित करने का प्रयत्न करते हैं।

पुराने समय में दान का इस प्रकार प्रचार नहीं किया जाता था। लोग लाखों का दान करते थे, परन्तु फिर भी अपना नाम तक गुप्त रखने में ही गौरव समझते थे। वे लोग कहीं पर भी अपने नाम का पत्थर नहीं लगवाते थे।

ज्ञानी पुरुषों ने तो यहाँ तक कहा है कि यदि दाएँ हाथ से दान दो, तो बाएँ हाथ को पता तक भी नहीं चलना चाहिये, तभी दान का पूर्ण फल मिलता है और दिया हुआ दान सफल होता है।



महात्मा सुलेमान का जन-प्रेम



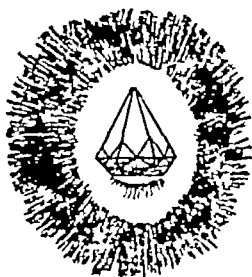
एक दिन सुलेमान अपने सैनिकों के पड़ाव के मध्य से बेश बरबनकर निकला। मार्ग में उसे एक चास वाला मिला जो कि बादशाह के यहाँ पास लेकर जा रहा था। उसके घिर पर भी चास की गठरी भी धीर गये पर भी।

छात्रे बेश में छिरेले हुए बादशाह को वह नही पहचान सका और उसने बादशाह को बुलावा धीर पकड़कर बस-गुर्बक उसके सर पर चास की गठरी रख दी। इस प्रकार गया सबसे धाये धीर फिर बादशाह चास की गठरी लिये हुए धीर उनके पीछे-र्य से बाम वाला बला।

पड़ाव के पाम पहुँचने पर सैनिकों ने बादशाह को पहचान लिया धीर वे स्तब्ध रह गए। जब चास वाले को मासूम पड़ा तो वह भा मयबरा कीपने सया धीर बादशाह क चरण पर गिर पड़ा।

महात्मा सुलेमान बोले—“भाई, तुम्हारा क्या दोष है ? मैं स्वयं ही तीन प्रकार के लाभ प्राप्त करने के लिए अपनी स्वेच्छा से वेश बदल कर निकला था । ये त्याग निम्न प्रकार हैं — १ गर्व-त्याग, २ भूठी लोक-लाज का त्याग, ३ प्रत्येक जन की स्थिति व सुख-दुःख का प्रत्यक्ष अनुभव । इसी कारण से तुम्हारी घाम उठाकर मैं यहाँ तक लाया हूँ ।”

बादशाह ने कहा कि—“आज से ही मैं सब सिपाहियों को आज्ञा देता हूँ कि भविष्य में कोई कार्य किसी से न कराया जाए, बल्कि अपना सब कार्य स्वयं किया जाए ।”



निर्धनता में अपरिग्रह अनुराग



एक बार एक सेठ किसी गाँव में एक बहुत ही गरीब की झोंपड़ी में छहरा पीर दूसरे दिन ही वहाँ से चल दिया परन्तु घूम से उसके स्पर्श की वही उसी झोंपड़ी में रह गई।

सेठ ने बेनी की बहुत खोज की परन्तु वह बह मही मिली तो उसने सोचा कि कहीं मार्ग में फिर पड़ी है और किसी ने उठा ली है।

लगभग तीन महीने के पश्चात् वह सेठ फिर से वही झोंपड़ी में आकर छहरा। झोंपड़ी के मालिक ने वह बेनी खोज की लो लाकर सेठ की के हाथ में वही और कहा—“सेठ जो यह बेनी घाय वहाँ घूम गए थे और आपने फिर इसकी खोज तक नहीं की।”

सेठ ने कहा— “मैंने इस बेनी को मार्ग में बहुत खोजा परन्तु वह नहीं मिली। इसलिये मैंने समझ लिया कि मार्ग में

से किसी ने उठा ली है। मुझे भोपडी का ध्यान तक नहीं आया कि वहाँ भी मेरी थैली रह सकती है।”

सेठ अपनी थैली को पाकर बहुत प्रसन्न हुआ और उस वृद्ध गरीब की ईमानदारी पर मुग्ध हो गया। प्रसन्न होकर वह सेठ थैली को उस गरीब को ही देने लगा तो उसने लेने से स्पष्ट मना कर दिया और कहा—“सेठ जी, मेरे पास आपका पता नहीं था, वरना मैं इस थैली को कभी भी इतने दिन तक अपने पास नहीं रखता और आपके पास सुरक्षित पहुँचा देता।”

सेठ उम गरीब की चारित्रिक दृढता से बहुत ही प्रभावित हुआ और उसके लडके को अपना हिस्सेदार बना लिया। इस प्रकार वृद्ध गरीब भी कुछ ही दिनों में धनवान् बन गया।





गुणों की परख



राजा रत्नबीर सिंह अपनी प्रजा की मनाई का बहुत ध्यान रखते थे और इसी कारण से वह प्रतिदिन रात को बेसब बदन कर घूमा करते थे।

एक दिन राजा नगर की चर्चा सुनने के लिये बैच बन कर गया। उस दिन राजा को बहुत बिर हो गई। राजा रात के समय वापिस आया उस समय कुसहाम सिंह छतरी राज भवन के पहरे पर था। उसने रत्नबीर सिंह को नहीं पहचाना।

राजा रात्रि भर दरवाजे के निकट ही बैठा रहा। सुबह हुई तो कुसहाम सिंह उसे देखने गया कि यह कौन वही जो रात्रि भर यही बैठा रहा है।

कुसहाम सिंह ने देखा कि जिस व्यक्ति को रात-भर बैचये रखा है वह तो राजा ही है कोई अन्य व्यक्ति नहीं। वह राजा को देखकर समझीत हो गया और अपनी घूम के लिए क्षमा माचना करने लगा।

खुशहाल सिंह के इस कार्य से राजा क्रोधित न हुए, बल्कि उसके इस कर्तव्यपरायणतापूर्ण कार्य से बहुत ही मुग्ध और प्रसन्न हुए। राजा ने उसे अपना अग-रक्षक बना लिया।

खुशहाल सिंह ब्राह्मण जाति का था। १६ वर्ष की अवस्था में ५) मासिक की नौकरी पर सेना में भरती हुआ था, और धीरे-धीरे अपने गुणों के कारण राजा का अग-रक्षक बन गया।



सच्चो दृष्टि



दृष्टी के पारसी को कई बार बहुत से संकटों का सामना करना पड़ा। संकटों एवं कष्टों का सामना करते हुए भी उनके मन में कभी निराशा को स्थान नहीं मिला।

जब कोई व्यक्ति उसको बटु-बचन भी करता था तो बं सदा ही हंस कर उत्तर देते थे और अपनी मूडुबाणी से उसे हपोस्तित कर देते थे।

एक बार उनसे किसी ने पूछा—“आपके सम्भर ऐसी दिव्य-शक्ति कहाँ से आई ?”

पादरो ने उत्तर दिया—“मैंने अपनी दृष्टि का यथासाम्य उपयोग करके ही ऐसी शक्ति प्राप्त की है।”

प्रश्नकर्ता ने पूछा—“मन का दृष्टि के साथ क्या सम्बन्ध है ?”

पादरो माहुर बोले—“जब मैं ऊपर की ओर देखता हूँ तो विचार आते हैं कि मुझे ऊपर जाना है वही ऐसा न हो जाए कि मेरे कर्म ऐसे हो जाएँ जिससे मैं ऊपर न जाकर नीचे ही

पढा रहूँ। जब मैं नीचे देखता हूँ, तो यह विचार आता है कि सोने-जागने, उठने-बैठने आदि के लिये बहुत थोड़ा पृथ्वी का भाग चाहिये। यदि आस-पास में देखता हूँ, तो बहुत से ऐसे व्यक्ति दृष्टिगोचर होते हैं, जो कि मेरे से भी अधिक कष्टमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं।”

“इस प्रकार मैं अपनी दृष्टि को शुद्ध विचारों की ओर आकर्षित करता हूँ, जिससे कि मेरा मन प्रसन्न और शान्त रहता है और इसी कारण से मैं दुःख में भी सुख का अनुभव करते हुए अपनी जीवन-यात्रा हर कदम आगे बढ़ा रहा हूँ।”



काजी का न्याय



राज देव का बादशाह छिपकर प्रजा की रक्षा जानने के लिये बेप बरस कर घुमा करता था। वह प्रत्येक स्थान का गुप्त रूप से निरीक्षण किया करता था परन्तु उसकी भेंट काबो से नहीं हो पाई थी इसीलिये वह काजी को नहीं पहचानता था और न काजी उसे पहचानता था।

एक दिन बादशाह गुप्त रूप से बोड़े पर जा रहा था। मार्ग में उसने जब एक लंगड़े व्यक्ति को असहाय स्थिति में देखा तो उसे बचाया था। बादशाह ने उसे अपने साथ बोड़े पर बैठा लिया और उसके नीचे तक पहुँचा दिया।

गाँव में पहुँच कर उस लंगड़े व्यक्ति के विचारों में परिवर्तन हो गया और वह बोड़े से नीचे उतरने को तैयार न हुआ। वह बोला कि यह बोड़ा तो मेरा है मैं इससे नीचे क्यों उतरूँ। इस प्रकार वह बादशाह से सम्झका करने को तैयार हो गया।

दोनों ही न्याय के लिए काजी की कचहरी में पहुँचे और न्याय की प्रार्थना की। काजी जी ने कहा—“आप लोग कल आना, तब आपका न्याय किया जायेगा।”

दूसरे दिन बादशाह तथा वह लंगड़ा व्यक्ति दोनों ही काजी की अदालत में पहुँचे। काजी जी ने दोनों में से एक को घोड़ा खाल कर लाने को कहा और दूसरे को बाँधने को कहा।

जब कार्य पूर्ण हो गया तो काजी जी ने लंगड़े आदमी को १० कोड़ों की सजा दी और बादशाह को उनका घोड़ा दे दिया।

बादशाह को काजी के इस न्याय पर बहुत ही आश्चर्य हुआ। तब बादशाह ने अपना भेद खोल दिया कि मैं गुप्त वेष में इस देश का बादशाह हूँ। बादशाह को अपने सामने देख कर काजी जी सम्मान पूर्वक खड़े हो गये।

बादशाह ने काजी जी की प्रशंसा करते हुए पूछा—“आपने किस प्रकार पहचान लिया कि यह घोड़ा मेरा है?”

काजी जी बोले—“जब आप घोड़े के साथ चले तो घोड़ा खुश होकर आपके साथ चल दिया, परन्तु जब वह लंगड़ा व्यक्ति लेकर चलने लगा, तो घोड़ा डर के कारण से ही उसके साथ चला। वस, इसी आधार पर मैं इस नतीजे पहुँचा कि घोड़ा उसका नहीं, आपका है।”



धमिमान का फल



‘क्या कर्म का फल है’ पत्र युक्त धमिमान।
 एक ब्राह्मण बहुत ही कठिन तपस्या किया करता था।
 साप हो जाने इस बात का धमिमान भी बहुत था कि मेरे जैसे
 तपस्वी इस ससार में कोई दूसरा नहीं है।

एक बार नारद मुनि उधर था निकसे तो तपस्वी ब्राह्मण
 पहंकार कर उनके सम्मान हेतु उठ्य तक भी नहीं। और अपने
 घासन पर बैठे-बैठे ही नारद जी से बोला— ‘यदि आप भगवान्
 के पास जा रहे हो तो पूछ लें कि मेरी मुक्ति कब होगी।
 नारद जी बोले— ‘मैं अभी वापस जा ही रहा हूँ।’

सुमोक परिभ्रमण के बाद नारद जी भगवान् के पास पहुँचे
 और पृथ्वी का परिचय देते हुए ब्राह्मण की मुक्ति के सम्बन्ध में
 पूछा— ‘उस तपस्वी ब्राह्मण की मुक्ति कब होगी?’ भगवान् ने
 मुक्ति के योग्य व्यक्तियों की सूची नारद मुनि के सामने रख दी।

नारद जी ने मुक्ति पाने वाले व्यक्तियों की सूची को कई
 बार देखा परन्तु उन्हें उस तपस्वी ब्राह्मण का नाम नहीं मिला।

इस पर वह आश्चर्य में पड़ गए कि वह ब्राह्मण तो बहुत ही कठिन तपस्या करने वाला है, फिर उसका इस सूची में नाम क्यों नहीं ।

नारद जी ने इस सम्बन्ध में भगवान् से पूछा—“उस तपस्वी ब्राह्मण का इस सूची में नाम न होने का क्या कारण है ?”

भगवान् बोले—“तपस्वी ब्राह्मण तप तो बहुत करता है, परन्तु उसे अपनी तपस्या का बहुत अहंकार है, इसलिये उसकी वह तपस्या साथ ही साथ अहंकार की अग्नि में स्वाह हो जाती है ।”

नारद जी जब वापिस भूलोक आये तो तपस्वी ब्राह्मण को सब कुछ कह सुनाया । और अंत में यह भी कहा

“दया—धर्म का मूल है,

पाप—मूल अभिमान ।

जब लों हृदय दया नहीं,

तब लो कैसे मिले निशान ॥”



भगवान् से प्रेम



नारद मुन को अपने ज्ञान और भक्ति के साधारण यह अभिमान था कि मेरे जेसा कोई दूसरा भक्त नहीं है। एक बार नारद भगवान् के साथ बन-बिहार करत रहे। वही देखा कि एक व्यक्ति सूखे पत्त का रहा है। नारद जी ने उससे पूछा—“तुम सूखे पत्त क्यों का रहे हो ?”

वह व्यक्ति बोला—“हरे पत्तों में पीच होते हैं इसीलिए सूखे पत्त ही का रहा है।”

नारद बोले—“यदि तू इतना धार्मिक है, तो यह कमर में तमबार क्या पीच रखी है ?”

उसने उत्तर दिया—“भगवान् के तीन बहुत बड़े सन् हैं, उनका मारने के लिये ही मैंने यह तमबार अपने पास रखी है।”

नारद जी ने पूछा—“भगवान् के तीन सन् कौन-कौन से हैं ?”

वह व्यक्ति बोला—“प्रथम तो अर्जुन है, जिसने अपना रथ भगवान् को सारथी बनाकर चलवाया । दूसरा द्रौपदी है, जिसने भगवान् से झूठी पत्तले उठवाई । तीसरा नारद मुनि है, जो कि हर समय इधर-उधर की बातें बनाकर दुःख दिया करता है ।’

नारद जी अपने सम्बन्ध में उस गरीब व्यक्ति की बात सुनकर आश्चर्य-चकित हो गये और तत्काल ही उनको कोई उत्तर स्मरण नहीं आया । प्रयत्न करने पर मन ही मन में सत कबीर दास जी का यह पद याद आ गया —

“पढ़ पढ़ कर पत्थर भये,
पड़ित भया न कोय ।
ढाई अक्षर प्रेम का,
पढ़ें सो पड़ित होय ॥”



अशोक का प्रजा-प्रेम



सम्राट् अशोक ने एक बार अपने सम्मेलन के उपलक्ष में सब राज्यों के सूबेदार को बुलाया। सभी राज्यों के सूबेदार अशोक के सम्मुख उपस्थित हुए।

अशोक ने सूबेदार सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए कहा था— 'समा सूबेदार अपने कार्य के सम्बन्ध में बतलायें कि उन्होंने क्या-क्या अच्छे कार्य किये हैं? जिसका भी कार्य सभो लभ हुआ या उसे उचित इनाम दिया जायेगा।

सम्राट् की बात सुनकर पूर्व-प्रदेश का सूबेदार बोला— 'मैंने सरकारी कोष में पहले की अपेक्षा तीन गुना वृद्धि की है।' पश्चिम प्रदेश का सूबेदार बोला— 'मैंने स्वर्ण में पहले से दुबना नाम प्राप्त किया है। उत्तर-प्रदेश का बोला— 'मैंने धर्मस्त वनता को अनुसामम में रहने के लिये तैयार किया है इसलिये सब बिजोही उत्थान करने का साहस नहीं करेगे। मध्य-प्रदेश के सूबेदार ने कहा— 'मैंने राज्य-कोष में कोई वृद्धि नहीं की है बल्कि उससे बर्च किया है—संकट-काल में प्रजा को जाने के

लिए सहायता दी। शिक्षा-प्रसार के लिए स्कूल बनवाये, यात्रियों के लिये घर्मशालायें बनवाई, रोगियों के लिए औषधालय खुलवाए, अनाथो और निराश्रितो के लिए अनाथालय बनवाए—क्योंकि प्रजा के सुख में ही राज्य की सफलता है।”

सभी सूवेदारो की बातों को सुनकर अशोक ने अन्तिम सूवेदार (मध्य-प्रदेश) की बहुत प्रशंसा की और उसे उचित इनाम दिया। अशोक ने कहा—“मुझे राज्य-कोष में वृद्धि नहीं चाहिये, बल्कि प्रजा के सुख में समृद्धि चाहिए। राज्य-कोष तो प्रजा की ही धरोहर है, राजा तो उसका एक प्रहरी मात्र है। मुझे प्रजा से धन संग्रह करके क्या करना है।”

प्रजा के हित के लिये कार्य करना और उसकी सुख-सुविधा का ध्यान रखना ही राजा के श्रेष्ठ कार्य है। परमात्मा ने राजाओं को प्रजा का रक्षक बनाया है, भक्षक नहीं। इसलिये राजा का कर्तव्य है कि प्रजा के धन को प्रजा के ही हित के लिये ही व्यय करे।

प्रजा-पालन के निमित्त एक लोकप्रिय राजा के कर्तव्य के सम्बन्ध में यह लोकोक्ति कितनी उपयुक्त है।

“जा सुराज प्रिय प्रजा दुखारी,
सो नृप अथसि नरक अधिकारी।”



सिद्धराज की बुद्धिमत्ता



सिद्धराज गुजरात के^१ अपने
 बाले थे इसीलिये उनके नाम से ही सिद्धपुर नामक नगर प्रसिद्ध
 है सिद्धराज के पिता करसुसिंह उसको तीन वर्ष का ही छोड़
 कर स्वयं सिंघार गये थे। इसलिये सिद्धराज का पालन-पोषण
 माता के द्वारा ही हुआ।

एक बार सिद्धराज को बिस्मी के बादशाह ने दरबार में
 बुलाया। बादशाह के द्वारा इस प्रकार लड़के को दरबार में
 बुलाने का कारण से उसकी माता बहुत मयमत्त हो गई। बाद
 शाह के मजस से सीधे ही लड़के का बिस्मी दरबार आने के लिये
 तैयार कर दिया और जब सिद्धराज चलने को तैयार हुआ
 तो उसे माता ने बहुत ही समझाया कि बादशाह ऐसा प्रश्न पूछे
 तो इस प्रकार उत्तर देना और प्रश्न पूछे तो ऐसा बतार
 देना।

जब सिद्धराज को समझाया जा रहा था तो वह बीच में ही
 बोला— 'माता जो यदि बादशाह से इनमे से कोई भी प्रश्न न

पूछा और अन्य ही कोई प्रश्न पूछ लिया, तो क्या उत्तर दूँ ?”
माता ने उत्तर दिया—“फिर अपनी बुद्धि से काम लेना ।”

माँ का आशीर्वाद लेकर सिद्धराज दिल्ली दरवार में पहुँच गया । बादशाह ने क्रोधित होकर उसके दोनों हाथ पकड़ लिये और पूछा—“अब बतलाओ, तुम्हारा रक्षक कौन है ?”

सिद्धराज ने उत्तर दिया—“आप ही मेरे रक्षक हैं ।” बादशाह ने पूछा—“मैं किस प्रकार तुम्हारा रक्षक हूँ ?”

तो सिद्धराज बोला—“यदि कोई व्यक्ति स्त्री को एक हाथ पकड़ कर लाता है तो जीवन के अन्तिम क्षणों तक उसकी रक्षा करता है, फिर आपने तो मेरे दोनों हाथ पकड़ लिये हैं, इसलिये अब मुझे क्या चिन्ता है ।”

बादशाह सिद्धराज के उत्तर को सुनकर शान्त हो गया और उसकी बुद्धि से प्रसन्न होकर उसे छोड़ दिया ।



प्रेम में पागल



एक स्त्री अपने प्रिय प्रेमी के प्रेम में मस्त थी। एक बार उसका प्रेमी परदेस जाता गया तो वह स्त्री उसके बियोग में बेचैन हो गई। बियोग में उसका धीरे-धीरे क्षीण होने लगा और इसी कारण से वह बहुत ही दुर्बल हो गई।

बहुत समय के पश्चात् उसका प्रेमी वापिस लौटकर आ गया। जब यह सब उस स्त्री को मालूम हो तो वह धानन्द-विभोर हो गई और प्रेमी से मिलने के लिये सभी समय बतल गई।

रास्ते में एकबार बादशाह ममाज पद रूढ़ था तो वह स्त्री बादशाह के ऊपर हाकर ही प्राप्त कर गई। बादशाह को उसके इस कार्य पर बहुत ही कोप ध्याया परन्तु ममाज में जीव करना ठीक नहीं इसी विचार से वे उस समय कुछ नहीं बोले।

बादशाह के बाद में उस स्त्री को दरबार में बुलाया और उनकी उक्त प्रसिद्धता का कारण अनुशासनार्थक डंड से पूछा। तब वह स्त्री बोली—“बादशाह सलामत! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है, क्योंकि मैं अपने प्रेमी के प्रेम में पागल हो रही थी

और उससे मिलने के लिये इस आतुरता के साथ जा रही थी, कि मुझे यह भी मालूम नहीं पड़ा कि मार्ग में कौन बैठा है। परन्तु आप तो उस समय खुदा की इबादत में लीन थे, फिर आपने मुझे कैसे देख लिया ?”

बादशाह स्त्री की बात को सुनकर धरमा गया और सोचने लगा कि वास्तव में व्यक्ति को भी खुदा के प्रेम में भ्रन्वा बन जाना चाहिये, तभी इस मार्ग में सफलता मिल सकती है।”



आत्मा और परमात्मा

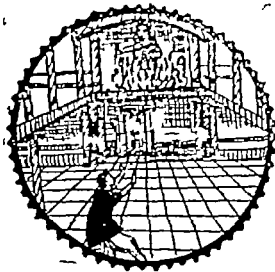


एक भक्त ने सुठ से पूजा—“मेरी और ईश्वर की आत्मा तो एक ही है, फिर ईश्वर ही सर्वज्ञ क्यों है, मैं क्यों नहीं ?” महात्मा ने कहा—“मैं तुम्हारे प्रश्न का उत्तर समीं देता हूँ ।

महात्मा ने उस भक्त से गंगा बल सोटे में भर साने को कहा तब वह व्यक्ति गंगा बल सोटे में भर साना और महात्मा जी को दे दिया ।

महात्मा जी ने कहा—“देखो गंगा में भी बल है और इस सोटे में भी गंगा का बल है इसलिये आप इस सोटे के बल में नाव बना कर दिसलाइये ? गंगा में तो नाव बसती ही है फिर हम साने के बल में क्यों नहीं बल सकती ? कारण स्पष्ट है कि बल की मात्रा कम है इसलिये इसमें नाव नहीं बल सकती । गंगा में पानी अधिक होता है इसलिये उसमें भली प्रकार नाव बल सकती है ।

इसी प्रकार ईश्वर के अन्दर प्रकाश व शक्ति अधिक मात्रा में है, इसलिये वह सब पदार्थों को देखने में समर्थ है। चूँकि तुम्हारा हमारा ज्ञान सीमित है, इसलिये हम सकुचित सीमा के अन्दर ही कार्यरत हो सकते हैं। वस, यही आत्मा और परमात्मा का भेद है और इसी कारण से ईश्वर सर्वज्ञ है।



सच्चा प्रेम



राजपूताने में करनसिंह नाम का राजा हुआ है
त्रिगभीमारी कलावती नामक बीर कन्या के साथ हुई थी।

एक बार अनाउरीग ब्रह्मजी ने राजाघों पर बड़ाई की तो
राजाघों ने उनका बीरता-युर्वक सामना किया।

अनाउरीग ने राजा करनसिंह के ऊपर विष-मुक्त बाल
झाड़ा। त्रिगके धापात से राजा अश्वेत व्यवस्था में पुष्पी पर बिर
पड़ा। कलावती को जब अपने पति की व्यवस्था की खबर पड़ी,
तो उस बीर राजाणी का मुक्त उसी समय जाल हो गया और
उगके लरीर में गुन घोलने लगा। सुभाएँ रक्त-भूमि के बिने
फड़फड़े लगी और वह बीरताका उसी समय रक्त-स्वत पर
पहुंची। वहाँ उगने अपने पति की व्यवस्था को देखते ही अना-
उरीग के बिरुद्ध युद्ध प्रारम्भ कर दिया और कुछ ही क्षणों में
अनाउरीग को पराजित किया।

राजा करनसिंह जहरीले वाण लगने के कारण से अचेत अवस्था में पड़े थे। किसी ने रानी से कहा कि यदि कोई व्यक्ति इसका जहर अपने मुख से चूस ले, तो यह अच्छा हो सकता है।

रानी ने सोचा कि यदि पति की रक्षा के लिये मेरी मृत्यु हो जाय, तो इससे सुन्दर एवं उपयुक्त अवसर कौन-सा होगा। उसने उसी क्षण अपने पति का विष मुख द्वारा चूस लिया और इस प्रकार पति को जीवन-दान देकर स्वयं स्वर्ग सिंघार गई।

राजा करनसिंह को मित्र एवं परिचितों ने दूसरी शादी करने के लिये बहुत ही आग्रह किया, परन्तु वे इसके लिये तैयार नहीं हुए। राजा करनसिंह ने कहा—“जब मेरी पत्नी ने मुझे जीवित करने के लिये स्वयं प्राण त्याग दिये, तो क्या मैं इतना भी नहीं कर सकता कि विषय-वासना को भी त्याग दूँ।” इस प्रकार राजा करनसिंह ने पत्नी की मृत्यु के पश्चात् दूसरी शादी न करके सबके सम्मुख पत्नी-प्रेम का एक महान् आदर्श प्रस्तुत किया।



जीवन की सार्थकता



एक बंद की दुकान में गुलाब के फूल बोटे जा रहे थे। एक सहृदय पुष्प बहाना था निकला, तो फूलों को बूटले-पीसले बेसकर उसे बचा भा गई। उस व्यक्ति ने फूलों से पूछा—“पापमे ऐसा क्या अपराध किया है जिसके कारण पापका ऐसी असह्य बेचना सहन करनी पड़ रही है ?”

कुछ प्रभुस फलों ने उत्तर दिया—“दुमेच्छा ही हमारा सबसे बड़ा अपराध है। हम सहसा कित उडे धीर इस प्रकार हमार हंसना न देना जा सका। दुनिया कुन्ही एवं कीकितों को बेसकर न बेचना प्रकृत करती है धीर बचा ना भाव प्रदर्शित करती है। परन्तु मुन्ही को बेसकर हियाँ करती है धीर उसे मट्ट करमे का पुर्ण प्रयत्न करती है। कम यही दुनिया का स्वभाव है।”

मेघ फलों ने भी उत्तर दिया—“दूसरों के लिये मर मिटना—यही तो जीवन की सार्थकता है।”

मन में कपट



एक बुढ़िया गठरी लिए हुए बा रही थी।
मार्ग में जब वह बक गई, तो विधाम के लिये बैठ गई।

एक बुढ़-सवार उधर से निकला तो बुढ़िया ने उससे कहा—
“जैसा मेरी यह गठरी अपने बोड़े पर रख जो मैं घाबे बलकर
बाप से इसको ले लू थी। बूँकि मैं बहुत बक चुकी हूँ इसलिये
इस गठरी को घाबे ले बलने में असमर्थ हूँ।”

बुढ़-सवार झुक कर बोला— “ज्या मैं तेरे बाप का लीकर
हूँ जो तेरी गठरी अपने बोड़े पर रख लूँ।” यह कहकर वह
बोड़े पर बैठ गया घाबे वह गया और बहुत दूर निकल गया।

मार्ग में चलते-चलते उसे ध्यान आया कि यदि उस बुढ़िया
की गठरी को मैं बोड़े पर रख लेता तो अपनास ही मुझे गठरी
मिल जाती और मैं उसे सीधा घर ले जाता। गठरी को न लेकर
मैंने बहुत बड़ी सून की है। गठरी यदि मैं बुढ़िया को नहीं देता
तो वह मेरा क्या कर लेती।

यह ध्यान आते ही वह वापिस लौट पडा और घोडे को दौडाता हुआ शीघ्र ही बुढिया के पास आया । अब वह बडे मधुर स्वर से बोला—“मैया, लाओ यह तुम्हारी गठरी घोडे पर रख लूँ, इसमे मेरी क्या हानि है । अच्छा है, तुमको थोडी दूर आराम मिल जायेगा । इस गठरी को मैं तुम्हारी आज्ञानुसार प्याऊ पर देता जाऊँगा ।”

बुढिया बोली—“नही बेटा, वह बात तो बीत गई । जो तेरे दिल मे कह गया है, वही मेरे कान मे भी कह गया है । अब मैं स्वयं गठरी को लिए धीरे-धीरे पहुँच जाऊँगी ।”

घुड-सवार का मनोरथ पूरा नही हुआ, तो वह अपना-सा मुँह लेकर चलता बना ।



महान् त्यागी



एक बार एक साहूकार की माता ने कहा—
 'बेटा तुम लाखों का भेन-वेन करते हो परंतु मैंने अभी तक
 एक लाख रुपये एक ही स्थान पर रखे हुए नहीं देखे हैं। एक
 लाख रुपया एक ही स्थान पर रखने से कितना बड़ा फायदा
 बनता है ? यह मैं देखना चाहती हूँ और उस पर बैठकर भी
 देखना चाहती हूँ ।

साहूकार ने अपनी माता के लिये एक लाख रुपये रखकर
 फायदा बनवा दिया और माता को उस पर बैठवाया । साहूकार
 की माता एक लाख के फायदे पर बैठे और फिर कुछ धान न
 करे यह कैसे हो सकता है ? यह सोचकर साहूकार ने साहूकार
 की बुलवाया ।

साहूकार ने माता को धान देने के लिये कहा तो माता को
 उस समय कुछ अभिमान सा मया । यह साहूकार से बोली—
 'पचित्त की बातें तो बहुत देखे हूँ परन्तु ऐसे बातें नहीं
 मिये होंगे ।

पडित जी दान लेने अवश्य गये थे परन्तु स्वभाव से भिक्षुक वृत्ति के नहीं थे। पडित जी का स्वाभिमान जाग उठा और वे जेब से एक रुपया निकाल कर और उस लाख रुपये के चवूतरे पर डाल कर बोले—“तुम्हारे जैसे दातार तो बहुत मिल जायेंगे परन्तु मेरे जैसे त्यागी विरले ही मिलेंगे, जो कि एक लाख को ठोकर मारकर कुछ अपने पास से मिलाकर चल देते हैं।”



मूर्ख ईर्ष्यालु



एक मनुष्य की पुत्रा से प्रसन्न होकर देवी ने स्वयं प्रसन्न होकर उसे प्रसन्न रूप एक संस्र दिया और कहा—
“जो भी तुम चाहोगे वही इस संस्र के बजाने से प्राप्त हो
जायेगा। परन्तु इस बात का ध्यान रखना कि पत्नीसियों को
तुमसे बूना भिसेना।

सस्र प्रसन्नता पूर्वक बना गया। उसने यह संस्र अपने घर
पर जाकर बजाया और कहा कि हमारा मकान बहुत ही मध्य
घोर सुन्दर बन जाय। सस्र के बजते ही पुराने बहुत ही सुन्दर
मकान बनकर ऊड़ा हो गया। पत्नीसियों के जैसे ही हो महल बन
गये। सस्र को यह बहुत बुरा लगा कि मेरा एक ही महल बना
घोर पत्नीसियों के दो बन गये।

ईर्ष्यालु व्यक्ति दूसरे की सन्तान किस प्रकार बैस सकता है
उसने धमकाता से यह संस्र एक कोने में डाल दिया। परन्तु कुछ
समय पश्चात् उसे कुछ रप्यों की बहुत आवश्यकता हुई। इसलिये

उसने विवश होकर शख को बजाया तो उसे जो धन मिला, उससे दूना पडोसियो को भी मिल गया ।

भक्त इस कार्य से बहुत ही क्रुद्ध हो उठा और ईर्ष्याविश कहा कि मेरे घर मे चार कुएं खुद जाएं । शख के बजते ही चार कुएं उसके यहाँ और आठ-आठ पडोसियो के यहाँ खुद गये । इससे भक्त को बहुत आनन्द का अनुभव हुआ और उमने ईर्ष्याविश कहा कि मेरी एक आँख फूट जाय, तो उसकी एक आँख फूट गई, परन्तु पडोसियो की दोनो ही फूट गई ।

अन्वे हो जाने के कारण से सब पडोसी कुएं मे गिर कर मर गये । पडोसियो को कुएं मे गिरते देख कर उस मूर्ख ईर्ष्यालु को बहुत प्रसन्नता हुई, यद्यपि उसकी भी एक आँख तो फूट ही चुकी थी ।



मूर्ख इंजिनियर



एक मनुष्य की पूजा से प्रसन्न होकर देवी ने स्वयं प्रगट होकर उसे प्रसाद रूप एक शंख दिया और कहा—
“बो भी तुम चाहोगे वही इस शंख के बजाने से प्राप्त हो पायेगा। परन्तु इस बात का ध्यान रखना कि पक्षीसियों की तुमसे बूना मिलेगा।

मत्त प्रसन्नता पूर्वक बना गया। उसने वह शंख अपने घर पर बाहर बजाया और कहा कि हमारा मकान बहुत ही बम्ब और सुन्दर बन जाय। शंख के बजते ही तुरन्त बहुत ही सुन्दर मकान बनकर खड़ा हो गया। पक्षीसियों के जैसे ही दो महल बन गये। मत्त को यह बहुत बुरा लगा कि मेरा एक ही महल बना और पक्षीसियों के दो बन गये।

इंजिनियर स्वच्छि बूरे की भलाई किस प्रकार देख सकता है उमने पश्रदा से वह शंख एक कोने में डाल लिया। परन्तु कुछ समय परचात् उसे कुछ स्पर्शों की बहुत यावस्मकता हुई, इसलिये

कहने का तात्पर्य यह है कि जितने अश्रु मे दान किया जाय उतने ही अश्रु मे वह अधिक प्राप्त होती है और जितना सग्रह करो उतनी ही वह दूर भागती है । देखिये, नीचे के पद्य से भी यही स्पष्ट होता है —

“भागती फिरती थी दुनिया,
जब तलब रखते थे हम ।
जब हमे नफरत हुई,
वह बेकरार आने को है ॥”



त्यागी से लागी रहे



एक सेठ जागड़ा पर १०-१० १९७ के पीकवान में बार-बार बुकठे थे। वहाँ पर एक सक्मी का उपासक भी बस हुआ था और वह इस इस्प को देख रहा था।

उस उपासक से यह सब नहीं देखा गया तो वह उठा और पीकवान में साठ मारकर बोला— 'बेचम सक्मी यहाँ बुकवाने में भी नहीं सज्जा जाती है और मैं बगम भर तेरी पूजा करते करते बक गया फिर भी तू मेरे पास तक नहीं घाई।'

सेठ साहब हँसते हुए बोले— 'माई सक्मी की उपासना करने से सक्मी नहीं घाती है। सक्मी को ठुकरा देने वाले बीठ राय प्रभु की उपासना करने से ही सक्मी तो गया तीन सोक का का गम्य भी पात्र बनने समठा है। सक्मी की जितनी पूजा की जाय उतनी ही वह दूर भागती है और जितनी भाजा में ठुकराई जाय उतनी ही भाजा में निफ्ट घाती है।'

सुदा के बन्दों को सेवा



एक बार एक परोपकारी बन्धु के पास एक बेव धाया घोर उसने उसेसे पूछा—“मैं उन व्यक्तियों की सूची बना रहा हूँ जो कि सन्धे रिम से सुदा की बन्धनी करते हैं। धाप भी बताएँ कि धापका नाम इस सूची में लिखू या नहीं।”

परोपकारी बन्धु ने कहा—“माई, मैं तो सुदा के बन्धों की सेवा करता हूँ, सुदा की नहीं। हाँ यदि सुदा के बन्धों की सेवा करने वालों की कोई डायरी धापके पास हो तो उसमें मेरा नाम लिख लीजिये।

बेव बोला— माई, तुम ऐसा क्यों करते हो कि सुदा को छोड़कर उसके बन्धों की मरिक्क व सेवा करते हो ? इसमें तुम्हारा क्या नाम है ?

परोपकारी व्यक्ति बोला—“मेरे धन्तर्मम में कोई बलिक्क तुम्हें इस कार्य की धोर उम्मुक्त होने की सतत प्रेरणा दे रही है

और इसी कारण से मैं इस कार्य में सलग्न हूँ।” उसी समय उसे एक शायर की यह उक्ति भी याद आ गई —

“खुदा के बन्दे तो हैं हजारों,
बन्दों में फिरते हैं मारे मारे।
मैं उनका बन्दा बनूँगा,
जिनको खुदा के बन्दों से प्यार होगा ॥”



दृष्टिका भेद



महर्षि व्यास के पुत्र सुकदेव संसार में रहते हुए भी उससे विरक्त रहते थे। एक बार वे प्रात्म-व्यास की माचना से प्रेरित होकर वर से वंश की शीर बस दिये।

महर्षि व्यास पुत्र की इस वैराग्य-वृत्ति से बहुत चिन्तित हुए और वे पुत्र-मांह में इतने फँस गये कि पुत्र की वर से बाधा हुआ देखकर स्वयं भी उसको वापिस लाने के लिये उसके पीछे-पीछे बस दिये।

मार्ग में नदी के तट पर कुछ स्त्रियाँ स्नान कर रही थीं। व्यास देव को देखकर सब ने बड़ी तत्परता से उचित वस्त्र लपेट लिये और इस प्रकार अपने सम्पूर्ण धर्मों को बस्त्रों से प्राग्गन्धित कर लिया।

महर्षि व्यास बोले— बहियो जब मेरा सुबक पुत्र सुकदेव तुम्हारे पास होकर जा रहा था तब तुम नदी में स्नान करती रही और नम्र अवस्था में भी तुमने उससे संकोच नहीं किया परन्तु जैसे ही मैं बृहत् व्यक्ति तुम्हारे पास होकर जा रहा हूँ

तो तुमने सकोच किया और तुरन्त ही अपने वस्त्र शरीर पर लपेट लिये। यह रहस्य मेरी समझ में नहीं आ रहा है।”

स्त्रियाँ बोली—“शुकदेव युवक होते हुए भी युवकोचित विकार से रहित है। वह स्त्री-पुरुष के अन्तर से भी परिचित नहीं है और उसके मन को विषय-वासना की गंध ने छुआ तक नहीं है, इसलिये उसकी दृष्टि में समस्त विश्व एक समान है। सासारिक भोगोपभोग के सम्बन्ध में वह एक बालक के समान अबोध है। परन्तु देव, आपकी ऐसी स्थिति नहीं है, इसलिये आपकी दृष्टि से छिपाने के लिये ही हमने वस्त्र शरीर से लपेट लिये और अपने अंगों को आपकी कुदृष्टि से बचाया। महर्षि व्यास उन वीरागनाओं के शूल के समान चुभते हुए वाक्यों को सुनकर बहुत ही लज्जित हो गए और तुरन्त ही वहाँ से नीची गर्दन करते हुए खिसक गए।



दुर्जन के साथ भी सज्जनता .



हजरत मुहम्मद प्रति बिन नमाज पढ़ने के लिये मस्जिद में जाया करते थे। रास्ते में एक बुढ़िया प्रतिदिन उनके ऊपर कूड़ा डालकर उनको तंग किया करती थी। इसलिये हजरत मुहम्मद प्रतिदिन खुदा से प्रार्थना किया करते थे कि इस बुढ़िया को सरसुखि हो और इस प्रकार मन में निश्चार करते हुए वे नमाज पढ़ने जते जाते थे।

एक दिन मुहम्मद साहब उठकर से निकले तो उस दिन उनके ऊपर कूड़ा नहीं डाला गया। मुहम्मद साहब ने दरवाजा खोलकर मामूम किया तो पता चला कि आज बुढ़िया बीमार पड़ी है।

हजरत मुहम्मद अपना सब काम छोड़कर बुढ़िया के पास गये। बुढ़िया उनको अपना घोर पाठे बैसकर बबरा गई और अपने मन में सोचने लगी कि आज प्रतिदिन के कुकृत्य का सबस्य फल मिलेगा। वरन्तु मुहम्मद साहब बदला लेने के बजाय उसकी सेवा में लय गये तो उस हृदय को बैसकर बुढ़िया का हृदय उमड़

आया और उसे इस्लाम धर्म पर इतना विश्वास हो गया कि उसने स्वयं भी इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया ।

हजरत मुहम्मद के जीवन में कितनी ही ऐसी भूलकियाँ हैं जिनसे स्पष्ट विदित होता है कि सज्जन एवं सुधारकों के पथ में कितनी विघ्न-बाधाएँ आती हैं और उन सब को पार करने के लिये विरोधियों को भी अपना मित्र बनाना पड़ता है और इसमें उन्हें कितना प्रेममय जीवन बनाना पड़ता है ।

विरोधियों को नीचा दिखलाने से या हिंसक भावनाओं से उनको अपना नहीं बनाया जा सकता है, और न वे इस प्रकार के व्यवहार से सन्मार्ग पर ही आ सकते हैं । कुमार्ग पर भूला-भटका व्यक्ति प्रेम एवं मृदु व्यवहार से ही सन्मार्ग पर आ सकता है ।



धन के द्रुस्यी



पुनाम बंसीय नासिखीन बादशाह पर्यन्त सञ्चरित और सामिक धृति के सासक थे। बादशाह होते हुए भी उन्होंने कभी एक पाई राज्य-काय से नहीं ली और अपना बाबन निर्वाह पुस्तकों लिखकर ही किया करते थे।

माण्डवर्ष का इतना बड़ा बादशाह होने पर भी उसने धन्य मुनक्त खासकों की मर्ति एक से अधिक शाही नहीं की और बन्म मर एक पत्नी-रन का पालन किया। बरेषू कार्यों के धन्य रक्त मोबनादि बनाने का कार्य भी बेगम साहिबा को ही करना पड़ता था।

एक समय का प्रसंग है कि मोबन बनाते समय बेदम का हाथ बस गया तो बेदम रसोई बनाने में असमर्थ हो गई। बेदम ने बादशाह से कुछ दिन के लिये एक रसोइया रखने का प्रस्ताव किया परन्तु बादशाह उसके इस विचार से सहमत नहीं हुआ और ऐसा करने के लिये साफ मना कर दिया।

बादशाह ने कहा—“मेरा राज्य-कोष पर कोई अधिकार नहीं है, वह तो प्रजा की धरोहर के रूप में मेरे पास है, तो फिर मैं किस प्रकार उस कोष से रुपया खर्च कर सकता हूँ। और जब मैं राज्य-कोष से रुपया खर्च नहीं कर सकता, तो किस प्रकार एक रसोइये को नौकर रख सकता हूँ, क्योंकि मेरी आय केवल अपना जीवन चलाने मात्र के लिये ही कम पड़ती है अर्थात् अपनी आय से मैं अपना तथा परिवार का निर्वाह ही कठिनाई से कर पाता हूँ।”

बादशाह ने आगे कहा—“यदि मैं राज्य-कोष से रुपया लेता हूँ, तो यह तो श्रमान्त में खयानत है। इस प्रकार का कार्य मेरे द्वारा सम्भव नहीं है। जो बादशाह स्वयं स्वावलम्बी न होगा तो उसकी प्रजा किस प्रकार आत्मनिर्भर हो सकती है ?

अन्त में बादशाह ने बेगम से रसोइया रखने में स्पष्ट असमर्थता प्रकट कर दी और राज्य-कोष से एक पंसा लेना भी उचित न समझा। इस प्रकार बादशाह ने अपने इस कार्य से सत्कार के सम्मुख एक महान् आदर्श प्रस्तुत किया।



नादिरशाह का आदर्श



नादिरशाह एक बोन घौर साधन-हीन परिवार में जन्म लेकर भी एक महान् विजेता हुआ है। वह घोपतियों की बोर में पलकर घौर-कुल-बाग़िज के हिजोले में मूलकर ही बाद में एक बड़ा विजेता एवं घौर पुस्य के नाम से प्रसिद्ध हुआ है।

बिजय तो नादिरशाह के बोड़े के पैर के साथ ही बसती थी। वह एक स्वाबलम्बी घौर बहलुर सेनामी बा घौर इन मुणों के द्वारा ही वह प्रसिद्ध सेनापतियों की बेंली में पिला जाता है।

नादिरशाह स्वयं एक पराक्रमी एवं हड़-बतिज पुस्य बा घौर घात्म-बिदशास तो उसमें हूट-हूट कर मरा हुआ बा। वह प्रत्येक कार्य को करने की स्वयं धमता रखता घौर किसी कार्य के बिबे भी दूसरों का मुन नहीं देखता बा। वह दूसरों की महायना पर घानी उपनि का ध्येय कभी नहीं बनाता बा।

सुख कहाँ ?



एक योगी अपनी योग-सामना में मस्त था।
इसपर उभर से कुछ लोग भी योगी से कुछ पूछने के लिये
घाते थे।

एक दिन योगीराज के पास चार व्यक्ति घाये और अपनी-
अपनी कष्ट-कथा सुनाने लगे। जब योगी ने उनसे पूछा—
“घाय लोग क्या-क्या चाहते हैं?” तो चारों ने इस प्रकार जवाब
प्रकट की—

पहला व्यक्ति बोला—“मुझे यश की बहुत इच्छा है।”
दूसरा बोला—“मुझे पुत्र की इच्छा है।” तीसरे ने वन की
प्राप्तिकता प्रकट की। चौथे ने कहा—“मुझे सुन्दर स्त्री की
इच्छा है।”

योगी ने चारों को इच्छा पूर्ति का आशीर्वाद दिया तो
चारों व्यक्ति प्रसन्नता पूर्वक अपने-अपने और आनन्द-पूर्वक जीवन
अधीन बन लगे।

कुछ समय पश्चात् चारो व्यक्ति फिर योगी के पास आये । पहले ने कहा कि यश तो मिला परन्तु प्रतिस्पर्धा का दुःख नहीं जाता है । दूसरे ने कहा कि पुत्र तो बहुत हो गये परन्तु आज्ञाकारी एक भी नहीं है । तीसरे ने कहा कि धन तो बहुत एकत्रित हो गया है परन्तु खाना खाने तक को समय नहीं मिलता है और धन की रक्षा करना भी मेरे लिये एक समस्या बन गई है । चौथे ने कहा कि स्त्री तो बहुत सुन्दर मिली है, परन्तु उसके अति सहवास से एक विषम रोग लग गया है ।

चारो ही योगीराज से कहने लगे—“महाराज, हम तो पहले से भी अधिक दुःख का अनुभव कर रहे हैं । तब योगी ने कहा—“जहाँ तक वास्तविक सुख और शान्ति का प्रश्न है, वह सासारिक भोगोपभोग से प्राप्त होने वाली नहीं है । वह तो सतोष और त्याग से ही सम्भव हो सकती है ।”



महात्मा ईसा का भादर्श



एक समय महात्मा ईसा बैठे हुए बीन-बुद्धियों एवं पीड़ित व्यक्तियों के उत्थान के सम्बन्ध में विचार कर रहे थे। उसी समय उनके कुछ अनुयायी एक स्त्री को पकड़ कर लाये और बोले कि इस स्त्री ने दूसरे पुरुष से अप्सिन्धार कर लिया है। इसलिये इस निन्दनीय कार्य के लिये उसे मृत्यु-दण्ड देना चाहिये। अनुयायियों ने पत्थर मारकर उसकी मृत्यु करने का निश्चय किया।

महात्मा ईसा ने जब अपने अनुयायियों का यह निर्णय सुना तो उनको दया का भाव मई और वे मरे हुए पत्थर से बोले—“आपने जो एक स्त्री को इतना घबराकर दंड देने का निश्चय किया है, थाव भीम स्वयं अपने सम्बन्ध में कुछ समय के लिये विचार कीजिये।”

ईसा ने आगे कहा—“वही इस स्त्री को मारने का कार्य करे जिसने कभी भी किसी दूसरी स्त्री को कुदृष्टि से नहीं देखा है और न किसी दूसरी स्त्री के साथ अप्सिन्धार ही किया है।”

महात्मा ईसा का आदेश सुनकर सब लोग शांत हो गये और परस्पर एक-दूसरे का मुख देखने लगे । उन सब के नेत्र नीचे की ओर झुक गये । इससे ईसा को पता लग गया कि उनमें से एक भी ऐसा व्यक्ति नहीं था जिसने कभी पर-स्त्री गमन न किया हो ।

ईसा ने कहा—“अत्याचारियो, दुष्टो, दुराचारियो और कुमार्ग पर चलने वालो ! पहले स्वयं अपने को देखो कि आप कितने सत्य-धर्मी व सयमी हैं ? आप लोगो को दूसरो के दोष देखने से पूर्व स्वयं अपने दोषो की ओर दृष्टि दौडानी चाहिये ।”

सभी पुरुषो ने लज्जावश सिर नीचे कर लिये और उस स्त्री को मुक्त कर दिया ।



राज्य-वैभव और त्याग



सिकन्दर महात् के शासन-काल में एक साम्राज्यनिष्ठ नामक रक्षणी व्यक्ति हुआ है। उसे न परिग्रह से काम था और न किसी प्रकार की कोई कामना ही थी। वह हर समय प्रयुक्तित एवं ध्यान-विमोह रहता था।

सिकन्दर ने जब उसकी ख्याति सुनी तो उससे भेंट करने की इच्छा हुई। दरबार में सभी व्यक्ति यह मन्त्री प्रकार जानते थे कि वह तो एक फक्कड़ भावमी है। इसीलिये वह वादवाह की भी कोई परवाह नहीं करेगा और अपने विचारों में ही मस्त रहेगा। इसी कारण से लोग उसे भीयनी कहते थे। इन कारणों से कोई भी व्यक्ति इस कार्य के लिये तैयार नहीं हुआ कि उसे वादवाह के दरबार में बला कर में पावे।

अन्त में सिकन्दर स्वयं ही उससे मिलने के लिए गया। साम्राज्यनिष्ठ उस समय रूप में पारस से लेटा हुआ था और वह सिकन्दर ने पहुँचने पर भी लेटा ही रहा। उस महात् सम्राट

स्वाभिमानी वीरांगना :



श्रामेर के विख्यात महाराज जयसिंह का विवाह कोटा की राजकुमारी के साथ हुआ था। राजवाला का स्वभाव, आचरण और देश भूपा अत्यन्त सरल और आडम्बर-रहित था। परन्तु समृद्धशाली श्रामेर के रनवास में रहने वाली अन्य रानियाँ अत्यन्त मूल्यवान् आभूषणों से अपना शृङ्गार करती थी। कोटा की यह राजकुमारी विलास-प्रिय न होकर वीर-स्वभाव की थी। वह सदैव स्वच्छ और सादगी से रहती थी।

एक बार महाराज जयसिंह ने कहा कि कोटे की राज-रानियों की अपेक्षा तो यहाँ की नीच जाति की स्त्रियाँ भी अच्छे व सुन्दर वस्त्र व आभूषण पहनती हैं और अपना शृंगार करती हैं।

कुछ समय के पश्चात् महाराज जयसिंह एक काँच का टुकड़ा लेकर रानी के पहने हुए वस्त्रों को काटने लगे और उसे सुन्दर वस्त्र धारण करने का उपदेश देने लगे। परन्तु उस वीर वाला

सद्व्यवहार



सिकन्दर के प्रतिद्वन्द्वी पोरस को युद्ध-क्षेत्र में पकड़ लिया गया और उसे सिकन्दर के सामने लाया गया। सिकन्दर ने क्रोध-पूर्वक उससे पूछा—“बटारण, पर तुम्हारे साथ कैसा व्यवहार किया जाय ?”

पोरस ने बीरता के साथ उत्तर दिया—“जाप वैसा व्यवहार कीजिए जैसा किसी एक बारघाह को दूसरे बारघाह के साथ करना चाहिये।”

सिकन्दर पोरस की बात को सुनकर स्तब्ध रहा गया और उसके इस बुद्धिमत्ता-पूर्वक उत्तर एवं साहस से इतना प्रभावित हुआ कि उसे उसी क्षण मुक्त कर दिया।

जो पोरस सर्वप्रथम संकट के सामने भी कभी शत्रु के सामने नहीं झुका वही सिकन्दर के इस सर्वव्यवहार से इतना प्रभावित हुआ कि सदा के लिये उसका सेवक बन गया।

स्वाभिमानी वीरांगना :



आमेर के विख्यात महाराज जयसिंह का विवाह कोटा की राजकुमारी के साथ हुआ था। राजवाला का स्वभाव, आचरण और देश-भूषण अत्यन्त सरल और आडम्बर-रहित था। परन्तु समृद्धशाली आमेर के रनवाम मे रहने वाली अन्य रानियाँ अत्यन्त मूल्यवान् आभूषणों से अपना शृङ्गार करती थी। कोटा की यह राजकुमारी विलास-प्रिय न होकर वीर-स्वभाव की थी। वह सदैव स्वच्छ और सादगी से रहती थी।

एक वार महाराज जयसिंह ने कहा कि कोटे की राज-रानियों की अपेक्षा तो यहाँ की नीच जाति की स्त्रियाँ भी अच्छे व सुन्दर वस्त्र व आभूषण पहनती हैं और अपना शृङ्गार करती हैं।

कुछ समय के पश्चात् महाराज जयसिंह एक काँच का टुकड़ा लेकर रानी के पहने हुए वस्त्रों को काटने लगे और उसे सुन्दर वस्त्र धारण करने का उपदेश देने लगे। परन्तु उस वीर-वाला

ने इस कृत्य को अपनी धारम-प्रतिष्ठा धोर स्वामिमान का प्रत्यक्ष समर्थ धोर तत्काल ही उसने पास में रखी हुई तलवार उठा ली ।

वह गरज के साथ बोली— 'मैंने जिस बंध में जन्म लिया है, वह राम्य-बंध कस्यापि इस प्रकार की पूर्ण धीर उपहास के योग्य नह है । धाय इस बात का स्मरण रखिये कि स्त्री धीर पुरुष में पारस्परिक-प्रेम सम्भाव सम्मान होने से ही साम्यत्व सुख ही नहीं मयितु धर्म की रक्षा भी होती है ।

धीर सत्ता जी ने गरज के साथ धाये कहा— "महाराज यदि बिनासिना चाहते हो तो बेरवर्षों के मही बने जाओ या युगलों के चरण्य जूमो । मैं एक धीर बासा हूँ धीर उसी कारण से मैं नीर-बेध पहनना चाहती हूँ धीर एण का साथ सखाना चाहती हूँ । तलवार के हाथों से मैं सजु का मुकाबला करने में भी समर्थ हूँ इसलिये धाय मेरे सामने जाओ जिससे धाय सभी प्रकार समझ सके कि धामेर के राजकुमार काँच के दुकनों को बलाने में इतने चतुर नहीं हैं जितनी कि कोटा की राजकुमारी तलवार में हाथ बलाने में निपुण है ।"

जिसासी महाराज मह हस्त बेलकर पुपचाप लड़े रह गये । धीर-पत्नी का नीर रूप देखकर उनकी बिनासिता गल्ट हो गई । वह चरणों में मिर गया धीर बोला— 'क्षी क्षमा करो ! मैं तुम्हें समझने से घूस की हूँ । वास्तव में तुम्हारे बेसी चारागनामों से ही आज धार्य-जाति का नीरव स्थिर है धायवा हमारे जैसे बिनास-प्रिय शक्ति तो इस जाति को रक्षात्मक में ल या चुके होते ।

दीवान सागरमल का न्याय :



सिखों के शासन-काल में मुलतान नामक सूबे में फारूक नाम के दीवान थे। वे बड़े प्रजा-पालक थे और उनके शासन-काल में कोई भी किसी प्रकार के राजकीय दुःख का अनुभव नहीं करता था। उनकी मृत्यु के पश्चात् उनका लड़का सागरमल दीवान के पद पर आसीन हुआ। वह भी अपने पिता के समान ही प्रजा-पालक और न्याय-प्रिय था।

एक बार एक बूढ़ी विधवा की जमीन कुछ व्यक्तियों ने अनुचित रूप से दवा ली। दीवान जी को विश्वास हो गया कि वास्तव में जमीन तो बुढ़िया की है, परन्तु इसे असहाय समझ कर ही इन लोगों ने इसकी जमीन दवा ली है।

एक दिन स्वयं दीवान न्यायाधीश के रूप में उस जमीन में स्थित कुएँ में पानी लेने गये। सभी लोग बुढ़िया के कुएँ पर न्यायाधीश को पानी भरते देखकर आश्चर्य में पड़ गये।

कुछ समय के पश्चात् ग्यायाधीश ने सब लोगों को बुलवाया और कहा— बेटो इस कुर्र में मेरी घंटी गिर पड़ी है इसलिये घाय इसका ध्यान रखना कि कोई उसे निकालने न पावे। मैं स्वयं कुछ समय पश्चात् उसे निकालवा सू गा। परन्तु यदि घेरी घंटी नहीं मिली तो घाय लोगों को तीन हजार रुपये इस घंटी की कीमत देनी पड़ेगी। वहाँ उपस्थित सभी व्यक्ति पबरा गये और बोले—“इस कुर्र पर हमारा कोई अधिकार नहीं यह तो बुद्धिमा का कुर्मा है। तब ग्यायाधीश बोले— ‘क्या यह तुम लोग सत्य कहते हो कि यह बुद्धिमा का कुर्मा है?’”

सब लोगों ने एक स्वर से कहा—“हम सत्य ही कहते हैं कि यह कुर्मा बुद्धिमा का है, हमारा इस कुर्र पर कोई अधिकार नहीं है।”

ग्यायाधीश ने कहा— ‘जब घाय लोगों का इस कुर्र पर कोई अधिकार नहीं है तो किस कमीन में यह कुर्मा बना हुआ है उस पर तुम लोगों का किस प्रकार अधिकार हो सकता है?’

ग्यायाधीश की इस बात को सुनकर वहाँ उपस्थित सभी व्यक्ति एक-दूसरे का मुँह बन्द करने लगे और चुपचाप अपने-अपने पर मोट गये।



धन-बड़ा या विद्या :



मिश्र देश में एक धनवान् सेठ के दो पुत्र थे। सेठ ने एक पुत्र को विद्याध्ययन कराया और दूसरे को मिश्र का कोषाध्यक्ष बनवाया।

एक दिन कोषाध्यक्ष ने अपने विद्वान् भाई से कहा कि—“देख, मैं बिना पढ़ भी कितने बड़े पद हूँ और सम्पूर्ण देश की धन सम्पत्ति मेरे हाथ में है, और तू विद्याध्ययन करके भी जैसा का तैसा ही रह गया है।”

विद्वान् भाई ने उत्तर दिया—“प्रभु की मेरे ऊपर बहुत बड़ी कृपा है, जो मुझ को विद्या रूपी धन दिया है। विद्या रूपी धन कभी भी कम नहीं होता है और जितना दान करो उतना ही बढ़ता है। इस धन की देवता भी इच्छा करते हैं।”

शिक्षित भाई ने आगे कहा—“आप मिश्र देश के कोषाध्यक्ष की उस गद्दी पर बैठे हैं, जिस पर अब तक बहुत से आदमी बैठ चुके हैं और बहुत से उस पद से उतार भी दिये गये हैं। फिर कोषाध्यक्ष बनने से ही यह राज्य कोष आपका थोड़ा ही हो

खुशामदी भक्ति और खुदा :



एक समय एक फकीर किसी राजा के यहाँ ठहरा। भोजन का समय हुआ तो राजा ने फकीर को सम्मान-पूर्वक भोजन कराया, परन्तु फकीर ने भोजन तो बहुत कम खाया और नमाज बहुत लम्बे समय तक पढ़ी। राजा ने फकीर को बहुत ही त्यागी और सयमी समझा और उसके प्रति राजा की श्रद्धा हो गई।

फकीर राजा से विदा लेकर अपने घर गया, तो उसने घर पहुँचते ही भोजन माँगा, क्योंकि भूख तेज लगी हुई थी और वह भूख से व्याकुल हो रहा था। घर वालों को यह जानकर आश्चर्य हुआ कि राजा के यहाँ ठहर कर भी इतनी भूख क्यों ?

फकीर ने उत्तर दिया—“राजा के यहाँ भोजन की तो कोई कमी नहीं थी और मैंने भोजन भी प्रेम-पूर्वक किया, परन्तु राजा की श्रद्धा का पात्र बन सकूँ, इसलिये भोजन कम खाया और नमाज अधिक समय तक पढ़ी।”

पुन ने कहा—“यदि यह स्थिति है तो जब चाप पेट भरकर भोजन भी कीजिये और नमाज भी पढ़िये क्योंकि वहाँ के दिवाबंदी भोजन से बँसे आपका पेट नहीं भरता और सतम प्राप्त नहीं हुआ, उसी प्रकार बाघवाह का कुछ करने के लिये भी कई नम्वी नमाज से कुछ भी कुछ नहीं हुआ होगा।”

पुन और मजन एक-दूसरे के प्रतिद्वन्द्वी हैं। इस सम्बन्ध में सन्त कबीर की उक्ति किठनी सार्थक है :—

“कजिरा कृषा है कुरी,
 करत मजन है बध ।
 या जो दुकड़ा मारि के
 मजन करे निरुधध ॥”



परिश्रम ही सच्चा संतोष :



अरब मे हातिमताई नामक एक महान् वादशाह हुआ है। उदारता और दान मे उसे अरब का हरिश्चन्द्र कहा जा सकता है। वह प्रजा की प्रत्येक सुख-सुविधा का ध्यान रखता था और प्रत्येक सम्भव सहायता के लिये सदैव तत्पर रहता था।

एक दिन कुछ लोगो ने वादशाह से पूछा—“अपने से भी योग्य और अच्छा आदमी आपने कभी देखा है या सुना है ?”

वादशाह ने उत्तर दिया—“मैंने अवश्य देखा है। एक दिन मैंने नगर के सभी निवासियों को भोजन का निमंत्रण दिया और सयोगवश उसी दिन मुझे जंगल मे कार्यवश जाना पडा। जंगल मे एक गरीब लकड़हारा लकड़ी काट रहा था, परिश्रम के कारण उसके सब कपडे पसीने मे भोग गये थे और वह बहुत थक चुका था। लकड़ी का गट्ठा बाँधकर वह चताने ही वाला था कि मैं उसके पास पहुँच गया और उससे पूछा—भाई !

घात्र ना हासिमनाई के घरी मगर की मर जमना का निमंत्रण है घात्र मगर के नमी माव वही पर घबड़े से घगगा भोजन करने फिर तुम घटी पर क्या मही गये ? क्या तुम्हें कोई सुचना मही मिला ? यदि घात्र नू हासिमनाई के घरी घात्रन करने जाना ना बहन घबड़ा घीर स्वासिट भोजन गाने का विषय ।

मरहट्टारा प्रगलना-गुरिठ बापा—“आ ध्वनि घाने बट्टेर परिषद घीर मरध वमाने की बमाई का रागी गाने में ही मरान का घनुमद बगना ही बह रात्रा घीर मरहगनाघों के ब बह म रात्र बग हाव पगारने जान ?”

बाइशा ने बानाता—“मरहट्टारे के रग उत्तर मे ही बहन प्रमत्र हूया घीर मीन घान मरध घन से उम घपन से भी घधिठ मुगा घोर मगाना मयमा ।”



दयालु सेठ :



एक वर्ष भयंकर अकाल पडा और नदी-नाने सभी सूख गये । प्रजा को अन्न तो क्या, पानी तक मिलना भी दुर्लभ हो गया ।

एक सेठ के पास अन्न का बहुत बडा सग्रह था, ऐसे समय मे उसने सभी देशवासियों की सेवा की और सभी को यथायोग्य अन्न जीवित रहने के लिये दिया । परन्तु वह सोचने लगा कि मेरा भंडार तो समाप्ति पर है, अब मैं किस प्रकार अपने देशवासियों को अन्न दे सकूँगा ? इस चिन्ता मे वह कमजोर हो गया और जब उसका अन्न समाप्त हो गया तो वह और भी गहरी चिन्ता मे डूब गया ।

एक दिन सेठ के एक मित्र ने पूछा—“ आप इतने कमजोर कैसे हो गये हैं ? आपको किस वस्तु की कमी है ?” मित्र की बात सुनकर सेठ की आँखो मे पानी भर आया और वह बोला—“मेरी यह स्थिति मेरे निजी दुखो के कारण नहीं हुई है, बल्कि इस दुष्काल मे भूख से तटपते देशवासियों की दशा को

देखकर ही हुई है और इस दुःख के कारण मेरा हृदय फटा
जा रहा है ।

मित्र सेठ की इस बयानुता पर बह व्यक्ति मुग्ध हो गया
और सर्वत्र उसकी प्रशंसा की ।

देखिये एक शायर भी इस सम्बन्ध में कह रहा है —

“करो बरोपकार तब, मरे बाद खोने जिनका,
नाम जिनका जिनका रहे कलका तो करना क्या है ?
कहीरों की बजारी बर, कर्बे हर बर्ब केने
बर्ब बर मरने बान्हीं का प्यो बान्हीं किया होना ।”



सन्तोष और निष्काम भक्ति :



प्राचीन समय में राजा नाम का एक गरिब मजदूर था। उसकी पत्नी का नाम था वीणा। दोनों पति-पत्नी प्रतिदिन जंगल में जाया करते थे और लकड़ी काट कर लाया करते थे। उनमें जो कुछ भी श्राव होती थी, उसी में अपना निर्वाह करते थे।

एक दिन नारद मुनि ने भगवान् ने कहा—“एक दिन-दुनियाँ का दुःख दूर करो।”

भक्तप्रसन्न भगवान् बोले—“इसका दुःख दूर करने के लिये कुछ दिया भी जाय, तो कोई उपाय नहीं है।”

नारद जी बोले—“उपाय क्यों नहीं है ! आपकी इच्छा ही नहीं है, ऐसा प्रतीत होता है।”

भगवान् ने कहा—“अच्छा, देवों ! जिस रास्ते से दोनों पति-पत्नी जा रहे हैं, उस रास्ते पर एक मोहर की थैली डाल दो।” भगवान् की आज्ञा से मार्ग के बीच में थैली डाल दी गई।

पति-पत्नी घा हो रहे थे। पति घाये या घोर पत्नी पीछे। पति ने वह बेसी देखी तो उसने सोचा कि कहीं पत्नी का मन न ललचा जाय इसलिये उस बेसी के ऊपर मिट्टा डाल ही घोर घाये बड़ गया परन्तु बकिा ने उन कार्य को देख लिया घोर समझ गई। वह बोली—“घापने बूल क्यों डालो? बूल पर बूल डालने की क्या धारस्यकता है? बूल घोर साने में घभी घपको कोई मेह प्रजोत होडा मामूम पड़ता है!”

घपनी पत्नी की बात को सुनकर रींछा बहुत ही प्रसन्न हुआ घोर उमझी झुरि-झुरि प्रसंसा की। उसे पूर्ण बिरवास हो गया कि मेरी पत्नी मेरे से भी अधिक त्याग की भावना रखती है।

घह नारद जी समबानु से बोले—“इनके लिये लकड़ी इकट्ठी कर हा ब्रिमसे इनको परिष्कम न करत पड़े घोर ये उनको बेच कर घन प्राण कर सकें ”

भगवान् बाले— इन कार्य के करने से भी कुछ होने वाला नो है। फिर भी नारद जी ने लकड़ियाँ एकत्रित कर ही परन्तु गगन दम्पति ने उन लकड़ियों को छुभा तक नहीं। दम्पति ने साधा कि ये लकड़ियाँ किसी ने घपने लिये एकत्रित की हैं इसलिये उ-हाने उनसे हास भी गहो सपाया। यहाँ तक कि उस हर न पास पडा हुई लकड़ियों को छुभा तक नहीं।

उम दिन दरींघ दम्पति को अधिक परिष्कम करना पडा। लपलगा ब्रिमने न देखकर नारद ने भयबानु से कहा—“घाप इनका बर्षन रोबिए घोर जो इनकी इच्छा हो, मापने को बहा।”

भगवान् ने राकाँ और वाँका को दर्शन दिये और वरदान माँगने को कहा । गरीब दम्पति बोला—“हम तो आपके भक्त हैं, आपकी भक्ति से अधिक हमें कोई वस्तु प्रिय नहीं है । आप स्वयं ही बताइये, हम क्या चीज माँगें ? आपकी भक्ति के अतिरिक्त हमें कोई वस्तु नहीं चाहिये ।”

देखिये, शायर ने इस सम्बन्ध में क्या ही अच्छा कहा है —

“जन्म से कोई नीच नहीं,
जन्म से कोई महान् नहीं ।
करम से बढ़कर किसी मनुष्य की,
कोई भी पहचान नहीं ॥”



प्रभु को प्रेम ही प्रिय है



मियाच सीगों का मुक्तिपा भीरामचन्द्र को का परम मल्ल था। भविक पकान-मिच्छा न होने के कारण वह रामचन्द्र जी को 'तू' कहकर पुकारता था परन्तु रामचन्द्र जी इस बात पर कोई ध्यान नहीं देते थे और इसके विपरीत उसको भविक प्रेम करते थे।

एक बार मन्मथ उस पर इस प्रसन्नता के लिये बहुत बोधित हुए और उसे मारने के लिये तैयार हो गये। उसी समय रामचन्द्र जी बोले—“मन्मथ तुम किसकी मारने को तैयार हो? कुछ और सख प्रभु के कारण ही तो यह तुझे 'तू' कहकर पुकारता है तुम इसे अपराध मठ समझे। इस प्रकार पुकारने से तो उल्टा मरा इसके ऊपर प्रभु बढ़ता है।”

श्री रामचन्द्र जी बोले—“प्रभु के कारण से ही तो गदाय भी तुझे अपना बना सकता है और प्रेमार्पित बाह्यल मन्मथभक्त बने किसी का काम नहीं है। मेरे प्रति जिसकी भक्ति इनका से उसका नामा हुआ मपूण भी मेरे लिये बिय के समान था।”

मालूम पडती थी, परन्तु क्योकि अब मैं ऊंचा चढ आया हूँ, इसलिये अब नीचे का सब प्रदेश सम लगता है।”

“आध्यात्मिक जीवन मे उच्च अवस्था प्राप्त हो जाने पर व्यक्ति का हृदय इतना विशाल एव व्यापक हो जाता है कि वह सभी धर्मों को समान दृष्टि से देखता है और मत-मतान्तरो के झगड मे नही पडता है।”



सर्वधर्म समन्वय



जिसके पवित्र हृदय में ज्ञान का दिव्य प्रकाश निघमाना रहता है ऐसे महान् व्यक्ति को बाद-विवाद एवं मत-मतान्तरों के वर्णन में कोई झगद नहीं आता। ऐसा व्यक्ति सदा-सबदा प्रत्येक धर्म को समान दृष्टि से देखता है।

एक बार ब्रह्म-समाज के प्रसिद्ध उपदेशक प्रतापचन्द्र मजूमदार साहिब महर्षि देवेन्द्रनाथ ठाकुर से मिलने गये। उनकी बैठक पर उन्होंने विभिन्न धर्मों के बहुत-से ग्रन्थ दिये। प्रतापचन्द्र मजूमदार भसी-भाँति जानते थे कि महर्षि कई धर्मों को निष्कारणपूर्ण दृष्टि से देखते हैं फिर इन धर्म-ग्रन्थों का संग्रह क्या है? इस प्रकार सब की उनके घर पर इन ग्रन्थों को बैठाकर बहुत ही आश्चर्य हुआ।

सब ने महर्षि से पूछा—‘आपकी देखिक पर ये पुस्तकें कैसे आ लयी?’ महर्षि ने उत्तर दिया—‘जब मैं बीजे प्रवेश में प्रमत्त करता था तब मुझे छोटी-छोटी पहाड़ियों की ऊँचाई भी नीची

मालूम पडती थी, परन्तु क्योकि अरब में ऊंचा चढ आया है, इमलिये अरब नीचे का सब प्रदेश सम लगता है।”

“आध्यात्मिक जीवन में उच्च अवस्था प्राप्त हो जाने पर व्यक्ति का हृदय इतना विशाल एव व्यापक हो जाता है कि वह सभी धर्मों को समान दृष्टि से देखता है और मत-मतान्तरो के भ्रष्ट में नही पडता है।”



धन दोष-मूलक है



राजा परीक्षित बहुत ही ध्याय-प्रिय और दयानु राजा था। वह अपनी प्रजा की सुख-सुविधा का सदा ध्यान रखता था और इसी कारण वह जन प्रसिद्ध हुआ।

एक समय कमिषुम को खूने के लिये कहीं भी उपयुक्त स्थान नहीं मिला तो वह परीक्षित के दरबार में गया और इच्छित स्थान की माँग की।

राजा ने कहा—“मेरे राज्य में तुमको खूने के लिये कोई स्थान नहीं है। परन्तु कमिषुम ने स्थान के लिये दुबारा प्रार्थना की तब राजा ने दयाभाव से कहा—“वहाँ पर थोड़ी बुझा जागड़ और बेस्वा हो वहाँ पर तुम खू सकते हो। जिस स्थान पर भी ये चारों तुमको मिला जाएँ वहाँ पर तुम खूना प्रारम्भ कर जा।

कमिषुम ने कहा—“ये चारों एक ही स्थान पर मिल जाएँ यह बहुत कठिन है। इसलिये मुझे तो ऐसा स्थान बतनाहिये जिसमें कि ये चारों एक ही स्थान पर उपलब्ध हो जाएँ।

कलियुग की बात सुनकर राजा ने उसे एक स्वर्ण का गोला दिखलाया और कहा कि इस गोले में उक्त चारों पदार्थ मिल जाते हैं।

“वास्तव में घन मनुष्य को सत्मार्ग से कुमार्ग की ओर चलने के लिये प्रेरित करता है और इन्सान को हैवान बनाने के लिये कोई लोभ सवरण नहीं करता। घन से ही चोरी, जुआ, धाराब, वेश्यागमन आदि दुर्गुणों को-प्रोत्साहन मिलता है और मनुष्य मनुष्यता से नीचे गिर जाता है।”

देखिये, शायर भी सकेत कर रहा है —

“मौत कभी भी मिल सकती है,
लेकिन जीवन कल न मिलेगा।
भरने वाले ! सोच समझ ले,
फिर तुम्हको यह पल न मिलेगा ॥”





भाग की तृप्ति, भोग में नहीं



प्राचीन काल में एक राजा हुआ है। जब वह बूढ़ हो गया तो उसका शरीर बहिनियाँ बहुत क्षिप्त हो गईं परन्तु उसके मन से काम-वासना नहीं गई।

एक समय वह बैठे हुए था तो उसे विचार आया कि बूढ़ावस्था आ गई परन्तु काम-वासना शांत नहीं हुई। इसलिये उसने मन्वान् से पुनः शक्ति और यौवन प्राप्त करने के लिये प्रार्थना की।

जब राजा के मन्त्रक को विद्या की काम-विपाठा की शक्ति पड़ी तो उसने अपना यौवन विद्या की रिया और उसकी कथावस्था स्वयं ले ली। इस प्रकार राजा यौवन को पाकर बहुत प्रसन्न हुआ और अनेक प्रकार के भोग-विभोग करता हुआ यौवन ध्यानीत करने लगा। इस प्रकार भोगों में निष्ठ हुए उसे बहुत दिन ध्यानीत हो पड़े परन्तु भोग-निष्ठा बरा भी कम नहीं हुई।

किसी प्रकार राजा को कुछ चेतना आई और उसने विचार किया कि जब अनेक वर्ष भोग भोगने पर भी मन को शान्ति नहीं मिली और भोग की इच्छा का अन्त नहीं हुआ, तो आगे होना भी सम्भव नहीं है। इस प्रकार उसको पूर्ण विश्वास हो गया कि भोग भोगने से इच्छा शान्त नहीं होगी, अतः उसने अपने पुत्र को बुलाकर उसका यौवन वापस कर दिया और कहा—“भोग भोगने से यह लालसा कम होने वाली नहीं है, इस प्रकार के कार्य से तो यह और भी बढ़ती है। इमलिये मनुष्य चाहे जितना सासारिक सुखो को भोगने का प्रयत्न करे, परन्तु इच्छा शान्त होने के वजाय बढ़ती ही जाती है। इमलिये मैं अब इसका पूर्ण त्याग करूँगा।”

राजा ने ईश्वर का स्मरण करने का निश्चय किया और सुख-दुःख को समान दृष्टि से देखता हुआ जीवन व्यतीत करने लगा। सामारिक भोगोपभोग से उदासीन होकर और निर्मल चित्त से ससार रूपी सुन्दर वगीचे में विचरण करने लगा। इस प्रकार उसने अपनी सभी इच्छाओं को विलीन होते देखा और जीवन में सच्चे सुख-शान्ति का अनुभव किया।

देखिये, समय रहते सावधान होने वालों के प्रति शायर भी कह रहा है —

“कल का दिन किसने देखा है,
आज दिन हम खोएँ क्यों ?
जिन घड़ियों में हँस सकते हैं,
उन घड़ियों में रोएँ क्यों ?”



मुनि जी बोले—“ठीक है, आज इसीलिये सेठ ने कहा था कि आवश्यक कार्य वश देर हो गई है।”

मुनि जी ने आगे कहा—“धन्य है ऐसे भक्त को, जो इतने भयकर एवं कष्टदायक समय मे भी प्रभु-भक्ति को नही भूला और अपूर्व धैर्य एव साहस का परिचय देकर धर्म-स्थान मे आया। वास्तव मे प्रभु-भक्ति के बिना मनुष्य मे इतना धैर्य नही आ सकता है।”

जब मुनि जी ने सेठ से इस सम्बन्ध मे बातचीत की तो सेठ ने कहा—“महाराज, ससार मे कौन किसी का है ? पुत्र मेरा होता तो मेरे पास रहता और मुझे छोड कर क्यों जाता ? महाराज, यह ससार तो एक प्रकार का सम्मेलन है, जहाँ मिलन हुआ और विच्छुड गये।”

सेठ के इन विचारो को सुनकर सभी उपस्थित जन बहुत प्रभावित हुए और सेठ को धन्य-धन्य कहने लगे।



दान और भावना



किसी विशेष अनुदान (ईना) के सम्बन्ध में एक भारतीय सिष्टमंडस (डेप्युटेसन) सन् १९२३ में ग्युन गया था। उस समय वहाँ पर किसी चीनी परिवार के यहाँ ठहरने का व्यवहार था।

उस चीनी गृहस्थ को डेप्युटेसन ने भारत की स्थिति रचनात्मक कार्यों का विवरण तथा राष्ट्रीय शिक्षण का महत्व समझाया। चीनी सख्त-गृहस्थ उनकी बातों से बहुत ही प्रसन्न हुआ और डेप्युटेसन को एक हजार रुपये का बैंक प्रदान किया। परन्तु बैंक देते समय वह भी स्पष्ट कह दिया कि हमारा नाम दानदाता-सूची में न लिखा जाय और न हमारा नाम किसी को इस सम्बन्ध में पठसाया ही जाय।

डेप्युटेसन को अपने कार्यबद्ध तीन पार चीनियों से सम्पर्क साधन का व्यवहार था तो उन्होंने भी अपाप्तकित दान दिया परन्तु अपना नाम नहीं लिखाया। जब उन व्यक्तियों के नाम न लिखवाने का कारण पूछा गया तो उन्होंने कहा—

“हमारे धर्म-ग्रन्थो लिखा हुआ है कि धर्म के लिये या दान हेतु यदि शुभ सकल्प आया है, तो उसे तुरन्त पूर्ण करना चाहिये। धर्म का ऋण एक घडी भी अपने पास नहीं रखना चाहिये। जितना समय धर्म का ऋण देने मे लगता है, उतना ही अधिक पाप सर पर चढता है। हमारे यहाँ गुप्त-दान का बहुत महत्त्व है।”

शिष्टमडल के सभी सदस्य चोनियो की वातो से चकित हो गए और उन्होने सोचा कि अपने देश मे तो बहुत बडे-बडे धनवान् पडे हैं, जो दान लेने वालो को या तो लताड देते हैं या कुछ देते भी हैं, तो बहुत ही कृपणता के साथ। यहाँ तक कि देने से पहले दानदाता-सूची मे नाम भी पहले लिखाते है और पीछे रुपया निकाल कर देते हैं। इतना ही नही, सम्भव हो सके, तो वे अपने नाम का पत्थर भी लगवाने के सम्बन्ध मे पहले ही निर्णय कर लेते हैं।

चोनियो की धर्म-निष्ठा और दान के प्रति निस्पृह उदारता को देखकर भारतीय शिष्टमडल बहुत ही प्रभावित एव प्रफुल्लित हुआ, किन्तु साथ ही भारतीय धनिको की धर्म के प्रति सकीर्ण मनोवृति पर खेद भी अनुभव किया।

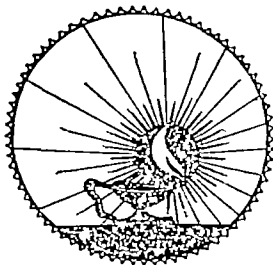


लान होता है तो चुपचाप धन को अपनी तिजोरी में रख लेते हैं।

कुछ समय के पश्चात् तम्बाकू का भाव बढ़ा और लाखों रूपयों का मुनाफा हुआ, तो मुनीम ने वे सब रुपये सेठ जी को दिये, परन्तु सेठ जी ने रुपये लेने से मना कर दिया और कहा—“इस लाभ के हकदार आप ही है। मुझे धन का लालच नहीं है, मैं यह चाहता हूँ कि जो मैंने एक बार कह दिया है उसका पालन अवश्य हो। तम्बाकू लेते समय मैंने यह सौदा तुम्हारे ही नाम लिख दिया था, इसलिये इसके लाभ-हानि के तुम ही जिम्मेदार थे। भाग्यवश तुमको लाभ हो गया, तो प्रसन्नता की ही बात है। यदि मैंने लालच में आकर ये रुपये ले भी लिये, तो वचन भंग होगा, इसलिये इन रूपयों को लेकर मैं चरित्र-भ्रष्ट नहीं बनना चाहता। इस प्रकार सेठ ने लाभ का सब धन मुनीम को ही वापिस कर दिया।



जब ब्राह्मण का पुत्र घर गया तो उसने अपने पिता से सब घटना कह सुनाई। ब्राह्मण ने सेठ से पूछा—“मैंने अपने पुत्र को सदा सत्य बोलने की शिक्षा दी है, इसलिये सत्य की मर्यादा हेतु ही वह सत्य बोला और भविष्य में भी वह सत्य का ही आचरण करेगा, ऐसी मुझे सम्भावना है। जिसने अब तक असत्य से बचाया है, वही इस अन्न और आजीविका के सकट से भी बचायेगा।” और इस प्रकार कह कर ब्राह्मण अपने घर वापिस चला गया।



फ्रेंक्लीन और समय का मूल्य



वेम्बामिन फ्रेंक्लीन

पुस्तक की दुकान करते थे और दुकान के साथ-साथ एक छाया-ना घेन भी था।

एक दिन कोई सज्जन उनकी दुकान पर पुस्तक खरीदने के लिये आया। उस समय दुकान पर नीकर बैठा हुआ था। प्राहक ने उगने एक पुस्तक की कीमत पूछी। नीकर ने उस कीमत बतला दी परन्तु उसे विश्वास नहीं हुआ और उसने फिर से कीमत पूछी तो नीकर ने कहा—“एक पुस्तक की कीमत एक डाकर है इससे कम नहीं हो सकती है।”

प्राहक ने कहा—“मानिक को बुझा दो।” दुकान का स्वामी बर्तौ आया तो उसने प्राहक से बिलय-सूचक पुस्तक की कीमत के सम्बन्ध में पूछा।

फ्रेंक्लीन ने कहा—“इस पुस्तक की कीमत सवा डाकर है। प्राहक ने कहा—“आपके नीकर ने तो इसकी कीमत एक

डालर ही वतलाई थी, इसलिए आप सच वतला दीजिये कि इस पुस्तक की असली कीमत क्या है ?”

फ्रेक्लीन ने हँसते हुए विनय-पूर्वक कहा—“अब इस पुस्तक की कीमत डेढ़ डालर होगी ।”

ग्राहक समझ गया कि इतना समय व्यर्थ में ही अपना भी और दूकानदार का भी नष्ट किया, इसी कारण से यह कीमत बढ़ाई जा रही है ।

ग्राहक के मन में सकोच हुआ और क्षमा माँगते हुए डेढ़ डालर देकर पुस्तक खरीदी और घर चला गया ।



जापानी महिला का प्रेम



एक और जापान के बीच एक दुःख का साक्षात्कार बन रहा था उस समय एक का एक विवाही जापान के योकोहामा शहर के एक नरक भण्डा अपने वयस्कमान शहर एक मरदुखी के साथ लौट आ रहा था। वह अपनी पत्नी से बोर्डिंग शुरू नहीं करना था। वह एक लड़की ही नहीं बल्कि जो जिसे वह अपनी पत्नी के साथ अपना था और एक बच्चा था वह पूर्ण ध्यान रखा था कि कभी नहीं एक बच्चा का जन्म ले।

एक दिन उसकी पत्नी को बुला करे हो गया कि देना कि एक एक को बुद्ध बना रही विपत्तिया है। पत्नी को एक ही देना को बचाने हो रही और अपने एक बच्चे का बच्चे के लिए अपने बच्चे का एक ही विचार। एक ही विचार के साथ वह एक ही देना के साथ हो गई।

एक ही एक के जो देना बना कि देना कि एक का एक का दुःख था कि और जापान के सभी मरदुखन एक ही के देना है।

पति-प्रेम से भी अधिक स्वदेश-प्रेम रमणी के हृदय में प्रवाहित हो गया और फलस्वरूप एक दिन उस पत्नी ने अपने पति को शराब पिला दी और पेटो के सभी कागज पुलिस के सुपुर्द कर दिये। जब उसके पति को इस सम्बन्ध में जानकारी हुई तो वह उसी समय जापान छोड़ कर रूस चला गया, क्योंकि वह समझ गया कि अब मेरी पत्नी को मेरा सब भेद मालूम हो गया है।

“धन्य है ऐसी वीरागनाओं को जो देश-प्रेम के लिये अपना सासारिक भोगोपभोग भी त्याग देती हैं और नारी समाज का मस्तक ऊँचा करती हैं।”



राजा चन्द्रपीठ की उदारता



काश्मीर में चन्द्रपीठ नामक एक राजा हुआ है। वह बहुत ही सद्गुणी धार्मिक और मोक्ष-प्राप्तक था। काश्मीर के इतिहास 'राज-तरंगिणी' में लिखा है कि वह राजा सतयुग के राजाओं के समान धर्म सिद्ध था।

एक बार राजा किसी स्थान पर अश्व-मठ बनवाना चाहता था। उसके लिये स्थान की सोच हुई। जिस स्थान को पसन्द किया गया उसके निकट ही एक जमार की भोंपड़ी थी।

राज्य के कर्मचारियों ने जमिनदार को बहुत समझाया कि वह इच्छानुसार पत्त जैवर मध्यकी का स्थान दे दे परन्तु वह ऐसा करने के लिये तैयार नहीं हुआ।

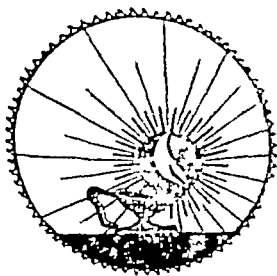
राज्य-कर्मचारी जब धन कार्य में अग्रसर रहे तब उन्होंने राजा के पास जमिनदार के विरुद्ध पत्र लिखा। राजा ने इस पत्र के लिये कर्मचारियों का बहुत ही लताड़ा।

अन्त में वह चर्मकार इस बात पर सहमत हो गया कि यदि राजा स्वयं आकर भोपडी का स्थान मंगे, तो दे सकता हूँ।

जब राजा स्वयं चर्मकार के घर गया और उससे भोपडी की याचना की, तो उसने सहर्ष भोपडी दे दी और राजा ने उसे भरपूर कीमत देकर सन्तुष्ट कर दिया।



ध्यान दिया। उसके हृदय के शुद्ध भावों के प्रति तुमने उपेक्षा दृष्टि रखी। मुख से शुद्ध उच्चारण और हृदय के शुद्ध भाव— इन दोनों में बहुत बड़ा अन्तर है। शुद्ध उच्चारण की तुलना में मन्चे हृदय की भक्ति ही श्रेष्ठ होती है।”



चात की करामात



कमरना घर में अचानक बाप का एक पत्र आया था। बुद्धिमान एवं चिन्तकण्ठ था। संदेशों का भी उसको बहुत समझ था।

उसको किसी प्रकार के पत्रों की भी कायम समझ थी। उसको यह पत्र आया था। वह यह कि अतिदिन पत्रों की लंबे। इस कार्य के अन्त में उसका सम्मान कम होने लगा।

एक दिन के आने वालीने अचानक अचानक की अचानक अचानक आने के भी अचानक एक कारीगर की बुद्धिमान और अचानक की अचानक के अन्त में। माप ही यह भी यह दिया कि एक कार्य को पत्र ही अचानक कर देना चाहिये।

कारण के अन्त में— पत्र ही ही अचानक अचानक कार्य करने आया अचानक अचानक ही अचानक अचानक का अचानक का अचानक है।

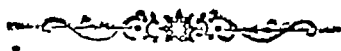
अचानक अचानक ही— अचानक अचानक अचानक ही अचानक अचानक

कारीगर बोला—“वावू जी, मैं शराब थोड़े ही पीता हूँ जो वायदे के अनुसार कार्य न करूँ। मैं तो जो वायदा करता हूँ, उस कार्य को समय पर पूरा ही कर देता हूँ ?”

स्वरूप वावू ने पूछा—“क्या, शराब पीने वाले ही झूठ बोलते हैं।”

कारीगर बोला—“शराब पीने से मनुष्य की मनुष्यता नष्ट हो जाती है, इसलिये उसे अपने द्वारा कहे हुए और दूसरो के द्वारा कहे हुए शब्दों का कुछ भी ध्यान नहीं रहता है।”

कारीगर के इन वाक्यों को सुनते ही स्वरूप वावू की आँखें खुली और उनके हृदय में चेतना का संचार हुआ। तब उनको स्वयं यह समझते देर न लगी कि शराब मनुष्य को मनुष्यता से नीचे गिरा देती है। स्वरूप वावू ने उसी समय अपने मकान से शराब की बोतलो और प्यालो को बाहर फेंक दिया और इस बात का प्रण किया कि भविष्य में शराब नहीं पीऊँगा।



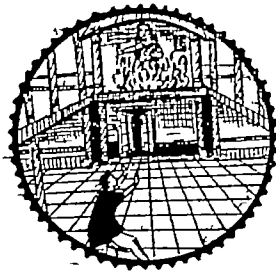
और हँसने लगा। राजा को बहुत आश्चर्य हुआ कि यह युवक ऐसी विपन्न परिस्थिति में भी हँसता है। राजा ने उस युवक से हँसने का कारण पूछा।

युवक बोला—“सन्तान माता-पिता का प्रिय धन है। यदि सन्तान के प्रति कोई अन्याय करे, तो वह माता-पिता के पास जाता है। यदि माता-पिता कोई ध्यान न दें, तो वह काजी के पास जा सकता है, और यदि काजी भी कोई सुनवाई न करे तो अन्त में राजा के पास जाता है। यदि राजा भी स्वार्थ की दृष्टि से देखे और अन्याय करे, तो मेरी दृष्टि सहसा ऊपर उम परम पिता परमेश्वर की ओर उठ गई, जो बादशाहों का भी बादशाह है।”

युवक की बात सुनकर राजा को दया आ गई और उसने सोचा कि इस निरपराधी युवक की मृत्यु से तो मेरी ही मृत्यु हो जाय, तो उचित है। राजा ने युवक को धन्यवाद दिया और प्रसन्नता पूर्वक छोड़ दिया। इस पुण्य-कर्म से राजा की आत्मा को इतनी शान्ति मिली कि उसी दिन से राजा के स्वास्थ्य में सुधार होने लगा और कुछ ही दिनों के पश्चात् राजा पूर्ण-रूप से स्वस्थ हो गया।



उन्होंने अन्त कहा—“जो सुख, त्याग और सयम में है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। इसलिये मनुष्य को अपना जीवन त्यागमय एवं सात्त्विक बनाना चाहिये, तभी उसे वास्तविक शान्ति का अनुभव हो सकता है।”



इन विश्वास के कारण से ही वह रण-क्षेत्र में भी निर्भय होकर अपूर्व उत्साह के साथ लड़ता था। युद्ध-क्षेत्र में जब भी विघ्नों की गोली उसके कान के पास से समनाहट करती हुई निकलती थी, तो उसे यह आभास होने लगता था कि उसकी माता पृथ्वी पर घुटने रखकर प्रभु से पुत्र की जीवन-रक्षा के लिये प्रार्थना कर रही है।



मातृ भक्ति और ईश्वर निष्ठा



बेरिबास्डी जिसने कि इटली की स्वतंत्रता के लिये महान् कार्य किया था बहुत ही मातृ भक्त और ईश्वर में निष्ठ रहने वाला उत्साही युवक था। बेरिबास्डी के उच्च चरित्र-निर्माण में उसकी माता का ही पूर्ण हाथ था और उसकी माता ने अपने पुत्र के जीवन को उन्नति की ओर प्रवृत्त करने के लिये कोई भी कमी न रखी थी।

बेरिबास्डी ने अपनी धारम-कथा में लिखा है—“मेरे पसा-चारण साहस को देखकर जो लोग विस्मय करते हैं और कुछ-कुछ में भी मेरे पास ईश्वर-शक्ति होने का अनुमान करते हैं इन सब का मूल कारण ही ईश्वर-भक्त पर मेरा पूर्ण विश्वास है। मेरा हृदय विश्वास है कि जब तक सत्त्व का प्रारब्ध रूप और ईश्वर के समान मेरी माता मेरे शत्रुओं की रक्षा ईश्वर की उपासना एवं धारणना में संलग्न रहेगी तब तक मेरे जीवन की पूर्ण रक्षा होगी।”

इन दिवसान के कारणा ने ही यह रण-क्षेत्र में भी निर्भय होकर प्रभु उपाह के साथ लड़ता था। युद्ध-क्षेत्र में जब भी विरोधियों की गोली उनके कान के पास से मगनाट्ट करनी हुई निराशरी हो, तो उसे यह आशान होने लगता था कि उसकी माता पृथ्वी पर पृथ्वी स्पर्शकर प्रभु से पुनः पुनः जीवन-रक्षा के लिये प्रार्थना कर रही है।



फकीर के प्रश्नोत्तर



विभी मुक्क के एव फकार के निम्न
विनिमय मान प्रश्न विचे —

१— विरार की गला मरव है और बरुन म्यक्ति की
गला ही बरुने है परन्तु मैं उसकी देण क्यों नहीं मरता हूँ ?

२— मनुष्य का उमर पाद-कर्मों के फल-फलान्न दण्ड क्यों
दिया जाता है जब कि मनुष्य जो कुछ करता है वह सब ईश्वर
का प्रेरणा से ही करता है ?”

३— ईश्वर लीलात को मरणात्मि के शानकर उमे हरित
का करता है जब कि लीलात मरवें अस्मि-मरकत है फिर
अस्मि के ऊपर अस्मि का निम प्रचार प्रभाव है मरता है ?”

फकीर के मुक्क के लीलों प्रश्न मधीयता-मुक्क मुक्क एक
दण्ड उगारा और मुक्क के मर के मार दिया। मुक्क के फकीर
के विरार कात्रों के मरी शानकर म्याव की प्रार्थना की।

फकीर के फकीर का बुनाया और मुक्क के मर के दण्ड
मारने का कारण कुछ ही फकीर के उगार दिया—“एन मुक्क

ने मुझ से तीन प्रश्न पूछे थे, इसलिये मैंने इसके सर मे पत्थर मार कर ही तीनों प्रश्नों का उत्तर दे दिया है।” काजी ने क्रोध पूर्वक पूछा—“किस प्रकार से आपने पत्थर मार कर उत्तर दिया है?”

फकीर बोला—“इस युवक के सर मे जो पत्थर लगने से दुख हुआ है, क्या वह दुख मुझे दिखला सकता है? यदि यह मुझे अपना दुःख दिखला दे तो मैं इसे ईश्वर दिखला सकता हूँ। जिस प्रकार इसका दुःख मुझे दिखलाई नहीं देता है, इसी प्रकार इसे भी ईश्वर नहीं दिखलाई दे सकता है। वह सत्ता तो आन्तरिक अनुभव द्वारा ही देखी जा सकती है।”

दूसरे प्रश्न का उत्तर यह है—“जा कुछ मैंने किया वह ईश्वर प्रेरणा से किया है, इसलिये यदि इसके सर मे पत्थर लगा, तो इसमे मेरा क्या दोष?”

तीसरे प्रश्न का उत्तर यह है—“इसका शरीर भी मिट्टी का बना है और पत्थर भी मिट्टी का ही बना है, फिर मिट्टी का मिट्टी पर क्या प्रभाव हो सकता है?”

फकीर के तीनों प्रश्नोत्तरो को सुनकर युवक भी चकित हो गया और काजी ने उसे सहषं छोड़ दिया।



१०६

ग्रामीण का अटुमुत ज्ञान

३४१

कुछ ही दूर चलने के पश्चात् न्यूटन ने देखा कि सूर्य बादलो से ढकता जा रहा है और देखते ही देखते बहुत ही वेग से वर्षा भा होने लगी। न्यूटन वर्षा के पानी से भोग गया।

अब न्यूटन को गडरिये की बात याद आ गई और उसे बहुत ही आश्चर्य हुआ कि गडरिये ने किम प्रकार यह जानकारी प्राप्त कर ली थी कि वर्षा शीघ्र ही होने वाली है।

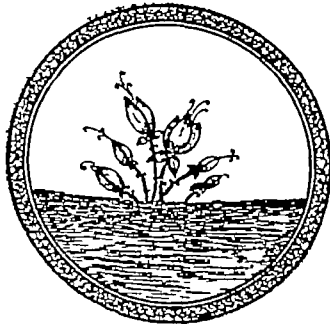
न्यूटन शीघ्र ही गडरिये के पास गया और एक गिन्नी उसे देकर उससे पूछा कि उसने बिना बादलो के किस प्रकार पता लगा लिया कि शीघ्र ही वर्षा होने वाली है।

गडरिये ने उत्तर दिया—“देखिये, सामने झाड़ी मे गीदडी अपने वचाव के लिये जगह ढूढ रही थी और अब भी वह झाड़ी मे छिपी हुई है। इसी से मैं समझ गया कि शीघ्र ही वर्षा होने वाली है।”

न्यूटन ग्रामीण के इस प्रकार के ज्ञान से बहुत ही प्रसन्न हुआ और उसे सहर्ष धन्यवाद देकर अपनी यात्रा पर चल पडा।



पद्मलोचन के इस आदर्शमय त्याग को देखकर अधिकारी बहुत ही प्रसन्न हुए और उसकी इच्छानुसार साथियो का उचित वेतन बढा दिया गया ।



तब उस अग्रज युवक ने कहा—“बस, इस समय मेरा भी यही विचार है। यह तूफान भगवान् के हाथ में है और भगवान् पर मेरा पूर्ण विश्वास है कि वह मेरा कभी भी अहित नहीं करेगा। इसी कारण मैं निश्चिन्त एव शान्त बैठा हुआ हूँ।”

जिस साधक की ईश्वर के प्रति दृढ निष्ठा है, ईश्वरीय प्रेरणा सदैव उसके कल्याण के लिए प्रेरित होती रहती है। इस शाश्वत तथ्य की पुष्टि में निम्नलिखित पद कितना सार्थक है—

“जाफो राखे साईयाँ,
मार सकं ना कोय ।
बाल न बांका करि सकं,
जो जग वंरो होय ॥”



महात्मा गांधी और चूमा

१०
४
↑

दक्षिण अफ्रीका में मंगल-
द्वय के समय बंग में लोग महात्मा गांधी के विचरित हो गये
व सो इस कारण बंग में लोगों के महात्मा का पर प्राण
पान्त पाठफल हो गया था।

एक समय मैं तो बड़ी मुश्किल में रहा था— 'मैं तिनका
कारण है कि उनका जो श्रेण में गये था है। पालन के
कारण गुरुत्व के कारण है जो पालन में है। इसलिये वह
पाठक है जो हमारा गुरुत्व है ही पालन है।

एक दिन गांधी जी गंगा बंग में घूमने जा रहे थे तो
उन समय में गांधी जी के बंगला उनका उद्गम घटित होया
हो उनमें गांधी जी का गुरुत्व निवा उनमें गांधी जी को
बन-गुरुत्व का ही एक गांधी जी पालन दिया। वह दुःख ही
काय का गुरुत्व ही गांधी जी पालन है। गुरुत्व ही गांधी जी का
पालन है।

गांधी जी जब नियत समय पर अपने स्थान पर नहीं पहुँचे, तो जनता में स्वाभाविक व्याकुलता पैदा हो गई और वे गांधी जी को ढूँढने के लिये इधर-उधर निकल पड़े। एक व्यक्ति अचानक उधर आ निकला और उसने गांधी जी को नाली में पड़े हुए कहाते देखा। गांधी जी को इस दुर्वस्था में देखकर उसने उनको तुरन्त उठाया और उसी समय अस्पताल में तात्कालिक चिकित्सा के लिये ले गया।

पुलिस महात्मा जी के बयान लेने के लिये अस्पताल पहुँची तो महात्मा जी ने यह कह कर मना कर दिया कि मैं अपने एक स्वदेश बन्धु के विरुद्ध कोई कानूनी कार्यवाही करने को तैयार नहीं हूँ। पुलिस निराश होकर चली गई।

इस घटना के सम्बन्ध में महात्मा जी ने कहा—“अपने स्वदेश बन्धुओं के हाथ से मार खाना जिसके भाग्य में लिखा हो, वह बहुत बड़ा भाग्यशाली व पुण्यवान् है। मेरे उस बन्धु के विचार में मैं दोषी था, इसीलिये उसने अपने विचारों का अनुसरण करके मुझे दण्ड दिया है, अतः मैं उमका दोष किस प्रकार निकालूँ ?

जब यह समाचार उम पठान को मालूम पड़ा और उसने गांधी जी के विचार सुने, तो वह अपनी भूल पर पश्चात्ताप करने लगा और गांधी जी के पास आकर उनके चरणों में गिर गया और अपने अपराध की क्षमा माँग ली। तभी से वह पठान गांधी जी का सच्चा भक्त बन गया।

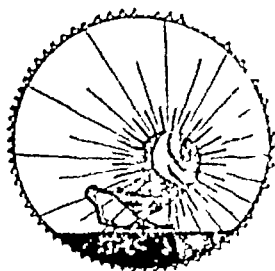


११०

जीवन का मौन्द्य नियम-शासन

६३

अपना नियम-पालन करने व अपना कार्य एकाग्र-चित्त में करने के कारण जब अन्य निपाहियों को उसके सम्बन्ध में सूचना मिली, तो उनका अन्य निपाहियों पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। उस निपाही के नाम में फड एकत्रित किया गया और उसकी स्मृति में एक स्मारक की स्थापना की गई।



अपनी प्रजा के इस अनुदार एव निष्फुर व्यवहार से राजा को बहुत ही कष्ट हुआ। अन्त मे वह निराश होकर अपनी राज-धानी को वापस चला गया। मार्ग मे राजा को एक भोपडी दिखलाई पडी, वह उस भोपडी के पास गया और बन्द दरवाजे को खट-खटाया। किसान ने दरवाजा खोला और सम्मान-पूर्वक राजा से उनके आने का कारण पूछा।

राजा ने कहा—“मैं बहुत थका हुआ हूँ। मार्ग मे जा रहा था, अब रात्रि हो गई है, इसलिये चलने मे असमर्थ हूँ। कृपया आप विश्राम के लिये स्थान दे दीजिये।”

किसान बहुत ही प्रसन्न हुआ और बोला—“यह कौन-सी बडी बात है ? आइये, अन्दर आइये और पूर्ण विश्राम कीजिये, इसमे पूछने की क्या आवश्यकता है। आप आराम से बैठिये और पूर्ण विश्राम कीजिये। आप कुछ देर से आये हैं, यदि कुछ ही समय पहले आ जाते तो भोजन तैयार था। अब थोडा भोजन शेष है, वह मैं लाकर आपको देता हूँ। किसान ने आगे कहा — “मेरी पत्नी बीमार है, इसलिये ठीक प्रकार से अतिथि सत्कार तो मैं नही कर सकता, परन्तु फिर भी जहाँ तक हो सकेगा आपकी सेवा करके अतिथि-सेवा का कर्त्तव्य पूरा करूँगा।”

किसान ने राजा को घास की गद्दी पर ही बैठा दिया और स्वयं उसके आदर सत्कार मे लग गया।

कुछ समय के पश्चात् वह किसान राजा से बोला—“आप भोजन कीजिये और इसी घास पर विश्राम कीजिये। मैं अपनी पत्नी की देख-रेख करने जा रहा हूँ, क्योंकि वह बीमार है। मैं लौटने के बाद आपकी सेवा करके अतिथि-सेवा का कर्त्तव्य पूरा करूँगा।”

कुछ दर क परवान् बहु विमान अपने एक बच्चे को लिये हुए रात्रा क पान घाया घोर बोला—'कम इस बच्चे का नामकरण मन्वार है। अगल हो यदि पाप कम तक टूटे रह।'

रात्रा ने बच्चे का प्रसन्नपूर्व घोर में बैंगवा घोर घायी बाँट देन हुए कहा—'यह बालक भाष्यगामी है। अतिवि का इस दुःख अविध्यगामी का मुनकर विमान बहुत ही प्रसन्न हुआ।

मन्वार होने ही रात्रा ने विमान के बचने को घाया घायी घोर कहा—'इस बच्चे का नामकरण मन्वार तक तक न करे जब तक कि मैं घायी गौर में गौर कर बापिन न पा जाऊँ। मैं मन्वार गौर के ही बापिन लोभने का प्रयत्न करूँगा।

विमान ने इसका कारण पूछा तो रात्रा ने कहा—'मेरे 'य' में बग एक बचवान् मित्र रहता है उसी में मुझसे हुए घायी-मन्वार को बाप बनोगा घोर मुझसे मेरे बापक का अर्थ-गला बचने का आग्रह भी बचता। अगलसे कुछ मुझे बचन ही कि जब तक मैं बापिन न पा जाऊँ तब तक कुछ इस बच्चे का नामकरण मन्वार न कराये।'

रात्रा की अर्थना गौरवार करते विमान ने बचन दे दिया। विमान के आग्रहजन ने रात्रा 'मन्वार-पूर्व नामवादी को बना गया।

अब लीन के का मन्वार अर्थ न हो गया तो विमान को विन्या है कि वह अर्थिन मन्वार तक बापिन न पाया है।

उसने बच्चे को गिरजाघर में ले जाने की तैयार की, तो उसी समय घोड़ों के आने की ध्वनि उसे सुनाई पड़ी।

किसान ने देखा कि राजा के अग-रक्षक आ रहे हैं। देखते ही देखते कुछ ही क्षणों में वे किसान के पास आ पहुँचे। राजा अपना घोड़ागाड़ी से नीचे उतरा और किसान के पास जाकर बोला कि—“मैं अपनी प्रतिज्ञा का पालन करने के लिये आया हूँ। मैं वही अतिथि हूँ जो कि रात्रि को तुम्हारे यहाँ विश्राम करने के लिये ठहरा था।”

इस अनोखे दृश्य को देखकर और राजा की बात सुनकर किसान आश्चर्य में पड़ गया और एक शब्द भी उसके मुख से नहीं निकला। वह भयभीत होकर राजा की ओर देखने लगा।

राजा ने कहा—“मैं तुम्हारे अतिथि-सत्कार से बहुत प्रसन्न हुआ हूँ और उसी के फलस्वरूप उसका बदला देने के लिये आया हूँ। आज से तुम्हारा यह बच्चा मेरी देख-रेख में रहेगा। यह कहकर राजा ने मुस्कराहट के साथ किसान से पूछा मेरी भविष्यवाणी सही हुई न ?”

सरल स्वभावी किसान सब बातें समझ गया और उसने अपने बच्चे को लाकर राजा की गोद में रख दिया। राजा उस बच्चे को घर ले गया और अपने ही बच्चे के समान उसका पालन-पोषण किया। किसान के लिये भी भोपड़ी के स्थान पर एक सुन्दर भवन बनवा दिया गया अब किसान आनन्द पूर्वक रहने लगा और अपने मन में सोचने लगा कि मेरी एक छोटी-सी सेवा के लिये राजा ने मुझे कितना बड़ा व्यक्ति बना दिया है।

सर्वश्रेष्ठ दान शिक्षा प्रदान

८०
००
१

जब रामकृष्ण मिशन में सर्वप्रथम मंत्र निवारण का कार्य मुंबईबाजार त्रिसे में प्रारम्भ किया तो उस समय स्वामी विवेकानन्द का एक पत्र आया। स्वामी जी ने बहुत रामकृष्ण मिशन को ही लिखा था। मिशन का सम्बन्ध है कि उहीन या मुमाच निरा का बहुत विषय प्रसार है।—

घर साय जयन्ता के मंत्र निवारण हेतु जी कायन्त मा रानी का निवारण कर रहे हो इसी मंत्र निवारण को सम्बन्ध का इन सम्बन्ध मंत्री है। घरा निवारण तक इन प्रसार दान कायन्त मंत्रिये दानु सम्बन्ध है कि घरा में घरा साय ही पीरि इट कार्य। मीवने कानों को कभी भी कभी न जागी कर्वीकि भाग्य देगे देग में मीवने कानों को कोई कभी नहीं है।”

गठानता देने के साथ-साथ यदि घरा साय निवारण देने का भी कार्य करें तो बहुत कार्य आया कि लोग हाया और इनके कर्म कर्म सायद निचा दान करके फिर के मीवने काने घने हाया की कर्मा का परिणत दान कायन्त मंत्रिये।

“आप लोगो को ऐसे भी अनेक व्यक्ति मिलेंगे जो अपनी आजीविका चलाने में समर्थ होने से पूर्व ही शादी कर लेते हैं और वे जीवन-पर्यन्त भुखमरी व गरीबी के शिकार बने रहते हैं।”

“आप लोग सहायता या दान के रूप में जो कुछ भी वितरण कर रहे हैं, उससे तो बहुत-से व्यक्ति गरीब बनकर अनुचित लाभ उठा सकते हैं। आशा है आप मेरे सकेत को भली प्रकार समझ गये होंगे और अन्य सहायता व दान के साथ-साथ विद्या-दान भी करोगे, जो कि अपना मुख्य कार्य है। अन्न-दान से तो एक-दो दिन का कष्ट एव सकट ही दूर कर सकोगे, परन्तु विद्या-दान से तो उनके जीवन-पर्यन्त का सकट समाप्त किया जा सकता है।”



ध्यान, भजन और ज्ञान



एक बार स्वामी विवेकानन्द व मरानन्द जी घाने कुछ दिव्यों सहित रेल-यात्रा कर रहे थे। इनमें पूर्व स्वामी जी अवस्था के भी "समस्त भारत घानन्द" के प्रचार हेतु भगवत् हो बर्ग तक प्रयाण कर चुके थे। उन्होंने घाने गुरुदेव की यात्रा का नामन पूर्ण सम्भवता से किया था।

एक समय स्वामी जी को एक सम्बन्ध में बहुत दुःख हुआ कि घाने सिध्द और गुणवर्मा: सदेव रूप में विद्या एव अनुभवी नहीं है। इसी कारणवश वे कभी-कभी अर्थ भी हो जाने थे।

दिली सिध्द के अनुविन बार्ड ने स्वामी जी बोधित हो सके और दुःख घानाघट का लय करते रहने लगे—“तुम लोग यह व्यवहन घार्डि दुःख भी जाने में अक्षर्य हो। हमारे व्यवहन अवन का बार्ड घोर कर बुझीलीरी (मरतुरी) जाने लगे। इनके अर्न्तल एव लय वृत्त भी नहीं कर लाने हो।”

गुप्त महाराज स्वामी जी के सम्मुख हाथ जोड़ कर खड़े हो गये और कहने लगे कि—“स्वामी जी, पठन-पाठन के लिये तो आपने ही मना किया था।”

इसके उत्तर में स्वामी जी बोले—“मैंने तुमको पठन-पाठन के लिए ही मना किया था, तो इसके बदले में भजन और ध्यान के लिये तो कहा था, इसमें आपने कितनी उन्नति की है ?”



रामकृष्ण परम हंस को अपनी प्रशंसा का कितना आघात हुआ ? यह सब कुछ इस लघु दृष्टान्त से स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है ।

एक दिन वे घूम रहे थे, तो उनके मन में यह विचार आया कि—“बहुत से व्यक्ति मुझे मान-सम्मान देकर अभिमानी बना देते हैं, उनमें से एक केशवचन्द्र सेन भी निकले । क्या ही अच्छा होता यदि मैं उनको अपने पास बैठने का अवसर ही न देता ।”

उन्होंने यह भी सोचा कि—“जो व्यक्ति त्याग व समय के सत्-मार्ग पर चलने को तत्पर है, उसे इस प्रकार के सासारिक मान-सम्मानों की क्या आवश्यकता है । ऐसे व्यक्तियों को अपनी प्रसिद्धि की कामना नहीं करनी चाहिये ।”



संत कनकदास और आत्मज्ञान



मन कनकदास अपने प्रारम्भिक जीवन में निकार भेजने में बहुत ही प्रसिद्ध थे और इसी कारण शक्ति-विद्या में जो पूर्ण निपुणता प्राप्त कर चुके थे। यही तब कि उनके समय में कोई भी शक्ति बनाने में उनकी सहायता का माहम नहीं करता था।

शक्ति बनाने में निपुण होने के कारण ही उनको एक रात्रि के पहाई शिवार्ति का पद भी मिल गया था। इस पद पर रहकर उन्होंने सब एक प्रतिष्ठा का भरण करने किया।

तब हीम सुद्ध करने समय कनकदास के मन में यह विचार आया कि—“बड़ा मेरे जीवन का यही उद्देश्य है कि रात्रि की शक्ति-विद्या के लिए दूसरों का मन बाधना और और पहाई शक्ति-मापना का माहम बनूँ।” इस ध्येय-प्राप्ति में प्रयास में उनको कुछ दिनों की शक्ति हासिल हुई कि उनके ध्येय-प्राप्ति में यह उपाय-विधि हुई कि—“इस ध्येय-प्राप्ति का उद्देश्य और शक्ति-विद्या का माहम-प्राप्ति के मार्ग में रहकर एक शक्ति-प्राप्ति का माहम और

दास बन जा । मच्चे वीरो का लक्षण यही है कि जीवन मे महान् परिवर्तन करते-करते एक दिन ऐसी स्थिति आ जाती है कि फिर उनको मन से अधिक सघर्ष नहीं करना पडता है ।”

इस पवित्र विचार के प्रभाव से उन्होने सेनापति का प्रतिष्ठित पद भी छोड दिया और सामारिक माया-मोह के फंदे से भी निकल कर विहार के लिये निकल पडे । विजयनगर मे उनको गुरु भी मिल गये और उन्होने माव्व सम्प्रदाय की दीक्षा ले ली । इसका फल यह है कि आज सत कनकदास का नाम दूर-दूर तक प्रसिद्ध है ।



जब कनकदास से पूछने का नम्बर आया, तो सब ने देखा कि केला उनके हाथ में ही ज्यो का त्यो था। उसने उत्तर दिया — “मैंने जहाँ भी एकान्त स्थान ढूँढा वहाँ व्यक्ति तो कोई नहीं था, अर्थात् मुझे व्यक्ति-रहित स्थान तो मिल गया, परन्तु ईश्वर-रहित स्थान नहीं मिला। इमलिये मुझे कहीं भी एकान्त स्थान नहीं मिला कि जहाँ पर ईश्वर मुझे न देख सके। इसी कारण से आपकी आज्ञा का पालन करने हेतु यह केला मेरे हाथ में सुरक्षित है।”



ब्रह्मचर्य-व्रत और स्मरण-शक्ति



अधिकतर व्यक्तियों की स्मरण-शक्ति प्रायः वृद्धि के साथ ही साथ कम होती चली जाती है परन्तु स्वामी विवेकानन्द की स्मरण-शक्ति बड़ बचपना तक एक-सी बनी रही।

एक समय का प्रसंग है कि एक पुस्तकालय के लिए ब्रिटैनिका विश्व-कोष (Encyclopedia of Britannica) खरीदने का प्रश्न आया। स्वामी जी का स्वास्थ्य उस समय ठीक नहीं था और उनका उपचार चल रहा था। इस प्रकार उपचार के समय कठिन परहेज के कारण वे बहुत ही दुर्बल हो गये थे।

पुस्तक खरीदने के कुछ दिन परचान् एक सद्युक्त स्वामी जी के पास आया तो उसने वहाँ पर बहुत-सी सुन्दर सुन्दर पुस्तकों का ढेर देखा और कहा— 'स्वामी जी जीवन में इतनी पुस्तकों का पढ़ना बहुत ही कठिन कार्य है ?'

उसने स्वामी जी से प्रश्न तो पूछा लिया परन्तु उसे इस बात का स्वप्न मे भी विचार नहीं था कि स्वामी जी ने इन सब ग्रन्थों का अध्ययन कर लिया है ।

उस व्यक्ति की बात सुनकर स्वामी जी ने वहाँ रखे किसी भी ग्रन्थ मे से प्रश्न पूछने को कहा । गृहस्थ ने प्रश्न पूछे तो स्वामी विवेकानन्द ने प्रत्येक का उत्तर दिया । यहाँ तक कि कुछ प्रश्नों के उत्तर मे तो उस ग्रन्थ की भाषा तक ही प्रमाण स्वरूप कह सुनाई । स्वामी जी की इतनी विशाल स्मरण-शक्ति को देखकर वह व्यक्ति आश्चर्य मे पड गया ।

स्वामी जी उस व्यक्ति को आश्चर्य-चकित अवस्था मे देखकर बोले—“देख लिया, आपने कि केवल एक ब्रह्मचर्य-व्रत पालन करने से ही सर्व विद्याएं स्मरण हो जाती हैं । ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन न होने के कारण ही हमारे देश का पतन हुआ है ।”



हाजी महमूद की सहृदयता



हाजी महमूद धरबी घोर
 आरगा घादि भाषाओं के बहाने बड़े विद्वान् के घोर इनके साथ
 ही एक महान् मरानारी भी थे ।

हाजी महमूद का उनका माना-विना से बहुत बड़ी सम्पत्ति
 मिली थी परन्तु उस सम्पत्ति एवं सब प्रकार में समर्पण ही हुए
 भी उन्मत्त बर्मी को धरना आसन गुण ज्ञानि ने धरनीय नहीं
 किया । वही एक ही उन्होंने महमूद जोवन अविवाहित रूप में
 ही धरनीय किया ।

उन्होंने ज्ञानाचार्यन तथा पशुपकार में अपने समस्त जीवन
 का समर्पण रखा । आदि-अद का उनका मन में कभी विचार तक भी
 नहीं आया घोर राज दुर्गी अस्तिथों के लिए उन्होंने अपना
 धरान मान लिया ।

राजि का के केवल बहाने का धरनीयों को भौंती में आया
 करने घोर उनही बहाने तथा नुस्तर उनके बहाने को निवारण
 करने का दुर्ग प्रयत्न करने थे ।

एक दिन वे गुप्त जेब में एक दोन व्यक्ति की नौपटों में गये और वहाँ उन्होंने देखा कि एक गरीब माता अपनी गतान की भव निराशा करने में आसब हाँके के कारण अपने भूखे बच्चों का शिक्षा दे रही है और बानक भूख के कारण रो रहे हैं।

हाजी महमूद को यह सब कुछ देखकर बहुत ही दुःख हुआ और उसी दिन में उन बच्चा के पालन-पोषण का भार अपने ऊपर ले लिया।



मालिक और नौकर



हाजी महसूब अपने नौकरों के प्रति बहुत ही प्रेम रखता था और कदा कदा उनके साथ समानता का व्यवहार करता था।

एक दिन महसूब को यह मामूला हुआ कि उसके एक नौकर की बहिन बीमार है और जब नौकर ने भी इस बात की सत्यता प्रकट कर दी तो महसूब ने महर्ष उस नौकर को घर आने की स्वीकृति प्रदान कर दी। इतना ही नहीं महसूब ने अपने पास से एक बच्चा की पुर्किया भी दे दी और कहा कि यह बच्चा तुम्हारी बहिन के लिये है।

हाजी की इस सहानुभूति को देखकर नौकर बहुत ही प्रसन्न एवं प्रभावित हुआ और साथ में उसके घर के सब व्यक्ति भी बहुत ही मानन्द-विभोर हो गये। सभी के सामने वह बच्चा की पुर्किया धोनी बैठी तो उसमें से बच्चा के साथ कुछ रुपये भी निकले जो हाजी ने नौकर की सहायता के संकट समय के लिये रखा दिये थे।

कालिदास और रूप :



एक वार किसी राजा ने कालिदास से कहा—“तुम इतने विद्वान् और महान् पंडित हो, यदि इतना ही अधिक तुम्हारा रूप भी होता, तो कितना अच्छा होता ?”

राजा की यह बात कालिदास को खटक गई और उसने सोचा कि राजा को अपने सौन्दर्य का अभिमान है। इसी को ध्यान में रखते हुए उसने राजा के गर्व को निवारण करने के लिये एक युक्ति सोची।

कुछ ही समय के पश्चात् जब कालिदास ने सोचा कि राजा अब उस बात को भूल गया होगा, तो कालिदास राजा के पास गए और बोले—“महाराज, आज बहुत ही भयकर गर्मी है, इसलिये प्यास लगी हुई है—कृपा करके शीतल जल की व्यवस्था कीजिए।”

राजा ने अपने सेवक से मिट्टी के बर्तन का शीतल जल मंगवाया और उसके साथ ही एक स्वर्ण गिलास भी लाया

गया। कालिदास ने ठंडा पानी पीकर संतोष व्यक्त किया और राजा ने भी पानी ठंडा होने से प्रशंसा की।

कालिदास ने उस ठंडे पानी को स्वर्ण के गिलास में भरकर रख दिया और कुछ देर के पश्चात् फिर उस स्वर्ण गिलास का पानी पीने के लिये मँगा। कालिदास ने बुबाघ पानी पीया और राजा की ओर देखकर हँसने लगा।

जब राजा ने इसका कारण पूछा तो कालिदास बोले—
 "देखिये महाराज कितना ठंडा जल इन स्वर्ण-पात्र में भरा था किन्तु इसके बाह्य सौन्दर्य के प्रभाव से घन्वर का ठंडा जल उष्ण परम हो गया है और उस रूप रहित मिट्टी के पात्र में जल कितना ठंडा था।"

राजा कालिदास की बात को समझ गया और समन्वित हो गया।



ईर्ष्यालु का कष्ट :



एक वार किसी व्यक्ति ने एगिस से पूछा—“अमुक व्यक्ति आपकी सम्पत्ति को देखकर बहुत ही ईर्ष्या करता है।” इसके उत्तर में उन्होंने कहा—“ऐसा करने से उसका सताप दो गुना हो जाता है।”

एगिस ने आगे कहा—“एक तो उसे मेरे धन से बहुत कष्ट होता होगा, और दूसरे वह स्वयं निर्वन है, इसका भी उसे महान् दुःख होता होगा।

“जो व्यक्ति निर्धनता के कारण से या अन्य कारण से दूसरे व्यक्ति के ऐश्वर्य को देखकर ईर्ष्या करता है, वह स्वयं अपनी आत्मा को कष्ट देता है। ऐसे व्यक्ति को जीवन में कभी भी सुख-शान्ति नहीं मिल पाती है। कभी-कभी तो यदि ईर्ष्यालु के पास भी धन हो जाय, तब भी वह ईर्ष्या की भावना को नहीं त्यागता और जीवन में सुख को त्याग कर दुःख को जान-बूझकर निमग्न करता है।”

पुत्री को पिता की सीख



हमारे देश में जब पुत्री को समुराज मेवा जाता है, तो माता-पिता उसे कुछ सिखा देते हैं। इसी प्रकार रमाबाई को भी उसके पिता ने सिखा ही भी जो कि निम्न प्रकार है —

“देखो बेटी जब तुम समुराज जा रही हो। मैंने तुमको बहुत प्यार से पाला है। इनसिये मन तो नहीं चाहता कि तुम को अपनी से अलग कर दूँ परन्तु सभार के नियम बन्धन नोकानार एवं तुम्हारे सांसारिक सुख के लिये ही मुझे यह सब करना पड़ा और आज तुम अपनी उस परिवार को छोड़ कर जिसमें कि तुमने जन्म लिया और इतनी बड़ी अवस्था तक जीवन व्यतीत किया छोड़कर एक नये परिवार में जा रही हो — और आज ही यह भी है कि आज के बाद तुम्हारे अन्तर हमारा इतना अधिकार भी न रहेगा जितना कि समुराज बामो का।

“जिस परिवार में तुम जा रही हो, वह बहुत बड़ा है और इसके अतिरिक्त बहुत से आश्रित व्यक्ति भी उस घर में रहते हैं, इसलिये तुम बहुत ही नम्र बन कर रहना और सब के साथ प्रेम का व्यवहार करना। तुमको चाहे जितना कष्ट हो, उसको सहन करने की शक्ति बढ़ाने का प्रयत्न करना और कभी भी किसी की झूठी बात इधर-उधर मत कहना। कभी-कभी चुगली कुटुम्ब को तो क्या, बड़े-बड़े साम्राज्य को भी नष्ट कर डालती है।”

“यदि तुमने मेरी इस सीख पर ध्यान दिया तो तुम अपने घर को स्वर्ग बना सकोगी और उस परिवार के साथ तुम्हारा जीवन सुख-शान्ति के साथ व्यतीत होगा। इस प्रकार तुम्हारा भी हित है, परिवार का भी हित है और साथ में मैं भी अपने को धन्य समझूँगा कि मेरी सुपुत्री एक सुगृहिणी बनकर अपना सामाजिक जीवन व्यतीत कर रही है। और मेरे मन को वही शान्ति प्राप्त होगी, जो एक पिता को सुयोग्य एवं आज्ञाकारी सतान को देखकर होती है।”



प्रसन्नराय का स्वातंत्र्य प्रेम



प्रसन्नराय को स्वतंत्रता से बहुत ही प्रेम था और जीवन व्यवस्था से ही उन्होंने संरक्ष किया था कि किसी का आश्रित बनकर नहीं रहूँगा। आर्थिक स्थिति ठीक न होने पर उन्होंने जीवन के प्रारम्भ में धनेक कष्टों का सामना किया परन्तु अपने संरक्ष से विचलित नहीं हुए।

एक बार वे अपने पुत्र प्रमाथ कुमुद को विनायक देखने गये तो उसी समय एक मित्र सम्बन्धी ने उनसे कहा—“तुम्हारे को ऐसी शिक्षा दिलाने का प्रयत्न करना जिससे कि बापिस स्वदेश में आकर एक अच्छी सरकारी नौकरी प्राप्त कर सके।”

बाबू प्रसन्नराय ने प्रसन्नता-पूर्वक कहा—“मैंने स्वयं बहुत से संघट्ट सहन किये हैं परन्तु नौकरी करने का स्वप्न मैं भी विचार नहीं किया तो फिर एक पुत्र को किस प्रकार इतना धन व्यय करने के परवाना मुनाम बना दूँ? यह कैसे सम्भव हो सकता है।

नेपोलियन के इस कथन से मित्र को बहुत आश्चर्य हुआ और उमने सोचा कि जिस व्यक्ति के हृदय में हजारों प्राणियों का सहार करने पर भी दया का आविर्भाव नहीं होना था, उसी व्यक्ति को आज एक पक्षी के पकड़ने मात्र से कितना दुःख हो रहा है, और आज वह पक्षी को छोड़ने का आग्रह कर रहा है। आज इसी व्यक्ति के हृदय में कितना महान् परिवर्तन हो गया है कि एक पक्षी का सामान्य दुःख भी यह सहन नहीं कर सका।

इस घटना से स्पष्ट प्रतीत होता है कि—“दया मनुष्य के स्वभाव में एक रहा हुआ सामान्य गुण है।”



वस्तु का उचित उपयोग



एक राधा के राज्य-कोष में हीरे मोती जवाहिरात आदि के बहुमूल्य जेवरों भर भरे हुए थे। जब यह सूचना बहुत से प्रजा-जनों को मिली तो उनमें से एक ने साहस पूर्वक राधा से पूछा—“महाराज आपके भंडार में जो इतने बहुमूल्य जेवरों भर भरे पड़े हैं, उनसे आपकी कितनी आय होती है ?”

महाराज बोले—“इन जेवरों से कोई आय नहीं होती है बल्कि इनको सुरक्षा और रक्षण के लिये मुझे तो बहुत सा पैसा खर्च करना पड़ता है। पहरदार और मुनीम को मासिक वेतन देना पड़ता है।”

यह व्यक्ति बोला—“महाराज इतने बहुमूल्य हीरे-जवाहिरातों से भी कोई आय नहीं होती है यह बहुत ही आश्चर्य की बात है। मेरे घर के निकट ही एक विपवा रहती है, उसने तीन रुपये में दो पारों वाली एक बकरी खरीदी है और उसमें जो भी आय होती है, उसके परिवार का खर्च धन्धी प्रकार चल

जाता है। जब एक विधवा ने तीन रुपये के पत्थरो से अपने परिवार के व्यय का प्रबन्ध कर लिया तो क्या आपके इन कीमती जेवरातो से इतनी भी आय नहीं होती है ?”

उस व्यक्ति ने विनय पूर्वक राजा से दुवारा निवेदन किया —
 “महाराज, इनसे आय होना सम्भव है, और वह इस प्रकार हो सकती है कि इन जवाहिरातो को पेट्टी से निकाल कर व्यापार आदि में लगा कर निर्धनो की सहायता की जाए या कोई उद्योग खोल कर निर्धन व्यक्तियों को रोजगार दिया जाए। इस योजना से आय भी होगी और जनता का पालन भी होगा।”



या तो इनको छिपा कर रखूँ या किसी दिन माता को ही स्पष्ट मना कर दूँ कि इस प्रकार गहने पहनना मुझे विल्कुल पसन्द नहीं है।”

एक ओर मेरे ही जैसे विद्यार्थी नौकरी करके अपना पेट भरें और उनको इस प्रकार की वस्तुओं के दर्शन भी न हो, और दूसरी ओर मैं उनके सामने गहने पहन कर अपनी अमीरी का प्रदर्शन करूँ। इस प्रकार का कार्य मेरे द्वारा कदापि सम्भव नहीं है।”

उसी दिन से रानाडे ने सब गहने उतार कर डाल दिये और भविष्य में किसी भी अवसर पर गहने न पहनने का दृढ सकल्प किया। इसी प्रकार के उच्च विचारों के प्रभाव से अपने जीवन में देश-हित के लिये अनेक कार्य किये और दूसरों को भी अपना अनुसरण करने के लिये प्रेरित किया।

समाज-सुधार के सम्बन्ध में रानाडे की धारणा आज के भाषणवादी नेताओं जैसी नहीं थी, जो 'भाषण' को ही सामाजिक समस्याओं का समाधान मानते हैं और व्यावहारिकता से उदासीन दिखाई देते हैं, बल्कि रानाडे तो 'व्यवहार' वाद के ही पक्के समर्थक थे और 'आचार' के बिना 'विचार' को कोरी विज्ञापन बाजी मानते थे। सुधारवाद के सम्बन्ध में समाज-सुधारकों के माग-दर्शन के लिये स्वर्गीय रानाडे का यह कथन कितना हृदयग्राही है, देखिए—

“समाज सुधारों को कोरी पटिया पर लिख कर ही नहीं छोड़ देना चाहिये।”



हीरानंद भट्टाचार्य अपने कर्तव्य-पालन में कभी भी आलस्य नहीं करते थे। जब उनको सर्टिफिकेट देने का कार्य सौंपा गया, तो सर्टिफिकेट देने से पूर्व उनको प्रत्येक के घर जाकर जांच करनी पड़ी कि किम व्यक्ति की क्या स्थिति है, और जो व्यक्ति सर्टिफिकेट मांग रहा है, वह वास्तव में इसका अधिकारी भी है या नहीं।



खुदा की सही बन्दगी



मुसलमान चारों के पवित्र तीर्थ-रुबाम मक्का की एक मस्जिद में एक भल्ल पानी का पड़ा मेकर लड़ा रहता था और नमाज पढ़ने से पहले बज्जु करमे के लिए जो सोय पानी माँगने के उनको उस बड़े से पानी देकर हाथ-पैर धुना देना था । इसके पश्चात् वह ध्याति वही पर सबके बूते रहे रहते के वही पर धाकर बैठ जाता था । मस्जिद में धाकर आकर उसने कमी भी नमाज नहीं पढ़ी थी ।

मुसलमानों को यह सब कुछ देखकर बहुत घातचर्य हुआ और उन्होंने सोचा कि यह कैसा फकीर है जो नमाज भी नहीं पढ़ता ? वह तो मुसलमानों में कोई धर्म ध्याति वही जाता है । नमाज न पढ़ने और बाहर लड़े रहने के कारण से स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह कोई मुसलमान है ।

ऐसा विचार करने के पश्चात् सबने उसको अरामा-बमकाया और बर्न ध्याति बतलाते हुए उसे वही से निकल जाने की धाया

दी। इसके पश्चात् उससे यहाँ तक भी कह दिया गया कि—
“खबरदार, यदि फिर इस मस्जिद में आया तो तेरी खैर नहीं।”

अन्त में डराते-धमकाते उसको मुहम्मद पैगम्बर के पास ले गये। सभी मुसलमानों की बात प्रेम पूर्वक सुन कर मुहम्मद साहब ने उस व्यक्ति से पूछा—“भाई, तू नमाज क्यों नहीं पढ़ता है?”

वह व्यक्ति बोला—“पैगम्बर साहब, मैं दीन-हीन हूँ। जो खुदा की बन्दगी करते हैं, उनके हाथ-पैर धुलाकर और उनके जूतों में बैठकर मैं अपनी जिन्दगी को कामयाब समझता हूँ। मेरे जैसे जाहिल और गरीब इन्सान के मुँह से अल्लाह की बन्दगी क्या अच्छी लगती है?”

ईश्वर के प्रति उस दीन आदमी की इतनी गहरी श्रद्धा व उसकी नम्र वाणी को सुनकर हजरत मुहम्मद गद्गद् हो गये और प्रेम-पूर्वक उसे गले लगा लिया।

इसके पश्चात् मुहम्मद साहब ने सबसे कहा—“यह इन्सान हकीकत में खुदा का सच्चा बन्दा है। इसकी इतनी नम्रता ही दरअसल में एक बहुत बड़ी बन्दगी है। तुम लोगों में ऐसे कितने इन्सान हैं, जिन्होंने दूसरों की गिदमत करने का नेक इरादा बिना गृहेज-घमड से किया है? मुबारकबाद है, ऐसे इन्सान को जो खुदा पर इतना यकीन रखता है।” और ऐसा कहते-कहते हजरत मुहम्मद साहब की आँखों में आँसू आ गये।

देखिये, शायर का भी इस सम्बन्ध में कितना अच्छा कथन है—

“गुजरने को गुजर जाती हैं,
उमरें शाद मानो में।
ये मौके कम मिला करते हैं,
लेकिन जिन्दगानी में—।।

माता के प्रमाथु

०३
४४
१

एक सुधी और बहुरी माता अपने बचपान
पिणु क पास बँधी हुई पहले विचार में निमग्न थी। वह जानती
थी कि ऐसी बार्ड खरिठ है आ कि अन्य व्यक्तियों के पास तो
है बरन्तु विपत्ता ने मुझे नहीं दी है। परन्तु वह यह नहीं समझ
बार्ड थी कि वह ऐसी कौन-गो खरिठ है।

जब वह अन्य व्यक्तियों को होठ फेरवाने तथा अन्य बार्डों
साथ बरन देवनी थी तो सोचती कि इन व्यक्तियों में सोमने
और मुनने को खरिठ है इमी कारण ने वे नाम भाव्यमाननी हैं।

माता बचपान पिणु इन खरिठों की खरिठ से खरिठ को
नहीं है यह बचपान विचार उसके मन में दुःख उत्पन्न कर
रहा था।

जब उनका बचपान गीमा पर पहुँच गया तो उसे एक
दुःख सुधी और अपने एक बड़ा पन्धर हाथ में निरा। अपने
बचपान सुधी पर पहुँच दिया। पन्धर की धारत ने बड़ा कर
दरा और उसे खान गन गया।

अब माता को पूर्ण विश्वास हो गया कि मेरा पुत्र मेरे जैसा अभागा नहीं है। उसकी आँखों में प्रेम के आँसू आ गये और नीचे पृथ्वी पर टपक गये। माता को अपने नवजात बच्चे की इस श्रवण-शक्ति से अति प्रसन्नता हुई और वह पृथ्वी पर घुटने टेक कर प्रभु से प्रार्थना करने लगी कि—“मैं स्वयं तो गूंगी और बहरी हूँ परन्तु मेरे बच्चे को तो दयालु भगवान् ने श्रवण-शक्ति प्रदान कर दी है।



माता क प्रमाथ

०३
४
†

एक नुसी घोर बहरी माता अपने मन्त्रालय के पास बँधी हुई महरे विचार में निमग्न थी। वह जानती थी कि ऐसी बड़ी शक्ति है जो कि अन्य व्यक्तियों के पास तो है वस्तु विद्याना में कुन्ने नहीं की है। परन्तु वह यह नहीं समझ पाई थी कि वह ऐसी बोन-यो शक्ति है।

जब वह अन्य व्यक्तियों का लोट करवाते तथा अन्य बार्ता लाल करने देगनी थी तो सोचनी कि इन व्यक्तियों में बोनने घोर कुन्ने की शक्ति है इनी कारण से वे नाम धाम्यमानी है।

याना मन्त्रालय तिसु इन दृष्टियों की शक्ति से रहित थी नहीं है यह गम्भीर विचार उसके मन में कुन्ने उगम कर रहा था।

जब उसका कण्ठ खरम गीमा पर बट्टेन गया तो उसे एक दुर्लभ नुसी घोर उगने एक बड़ा मन्त्र दाय में निवा। उगने का कण्ठ नुसी पर पटक दिया। पावर की साट्ट में बड़ा उर गया घोर उनी शक्त शन मवा।

अब माता को पूर्ण विश्वास हो गया कि मेरा पुत्र मेरे जैसा अभागा नहीं है। उसकी आँखों में प्रेम के आँसू आ गये और नीचे पृथ्वी पर टपक गये। माता को अपने नवजात बच्चे की इस श्रवण-शक्ति में अति प्रसन्नता हुई और वह पृथ्वी पर घुटने टेक कर प्रभु में प्रार्थना करने लगी कि—“मैं स्वयं तो गूँगी और बहरी हूँ परन्तु मेरे बच्चे को तो दयालु भगवान् ने श्रवण-शक्ति प्रदान कर दी है।



परिथम और विनोद



पीन के प्रसिद्ध पर्माचार्य कल्पसु
 शिवन एक दिन अपने मित्रों व शिष्यों सहित एक गाँव में गये ।
 किसानों का धान गेहों से सतिहान में था गया था और इसी
 कारण में किसान बड़े ही प्रसन्न-चित्तसे धानगदालसक मना रहे थे
 और अपने परिथम का उचित फल मिलने पर ईश्वर को
 धन्यवाद दे रहे थे ।

बगलुंगियम किसानों के इस धानगदालसक से बहुत ही प्रसन्न
 हुए परन्तु उनके मित्रों एवं शिष्यों को यह सब कुछ मरदा नहीं
 मना और व बोले — सीतों को इस प्रकार बिलामी नहीं होना
 चाहिये । इनको तो संभार और मान्द रहना चाहिये और ऐसे
 समय पर धरिद में जाकर ही प्रभु की धन्यवाद देना चाहिये ।”

बगलुंगियम बोला—” मादयो यह धन्यवाद भी एक प्रकार
 के प्रभु का धन्यवाद ही है । धन्यवाद देने का वैचन एक ही
 प्रकार नहीं है । धन्यवाद देने का इनका यह ठीक ही सीधा और
 सग्न है ।

उन्होंने आगे कहा—“दिन भर गभीर वनकर बैठे रहना भी उचित नहीं है। निर्दोष गाना-बजाना खेल-कूद मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए श्रेयस्कर है और विविध प्रकार के उत्सव इसी उद्देश्य को लेकर मनाये जाते हैं।

“वसन्तोत्सव, दीपावली और होली आदि त्यौहार, जो कि अपने यहाँ मनाये जाते हैं, प्रकृति के साथ हिल-मिलकर व्यक्ति अपनी थकान को कम करके फिर से नये उत्साह के साथ कार्य करने की क्षमता प्राप्त करने के लिए ही मनाता है। परन्तु इतना ध्यान रखना चाहिए कि हास्य विनोद अपनी सीमा से बाहर न जाने पाए।”



रानाडे का भाषा प्रेम



एक बार महादेव गोविन्द रानाडे को सरकारी कार्यवश कमकता में रहना पड़ा। वहाँ पर रहकर उन्होंने बंगाली सीखना प्रारम्भ किया।

एक दिन नाई की दुकान पर हजामत बनवाने के लिये गये। बंगाली सीखने की उम्रय भी इसलिये पुस्तक तो साथ रखते ही थे इसलिये उन्होंने नाई की दुकान पर ही पढ़ना प्रारम्भ कर दिया और वहाँ पर उनको बटिमाई मानूम पड़ी बही पर नाई से पूछ-पूछ कर पढ़ने लगे।

रानाडे की पत्नी निरुद के ही एक मकान की सिड़की में बँधी वह सब कुछ देख रही थी कि पतिदेव एक नाई से हजामत बनवाने समय भी पढ़ रहे हैं और नाई पाप्यों का चर्च सबभा रहा है। जब वह नाई हजामत बनाकर बाहर बट गया तो पत्नी धाई धीरे हँस कर बहल लगी—“रानाडो मास्टर तो चण्डाई हुंदा है। जो रत्त न २४ घुरघों से गिराया पाई थी उसी प्रकार

क्या आप भी अनेक गुरु बना रहे हो ? फिर तो आपको गुरुओं की सूची बना लेनी चाहिये ।”

पत्नी ने आगे कहा—“पुराने समय में शिष्य गुरुओं की सेवा स्वयं करते थे, परन्तु अब तो शिक्षा भी ग्रहण करते हैं और सेवा भी कराते हैं ।”

रानाडे ने अपनी पत्नी को सब कुछ समझाया और उसे भी बंगाली सिखलाने में सहायता दी और कहा—“भारतीयों को अपनी प्रादेशिक भाषा या मातृ-भाषा के अतिरिक्त जहाँ तक हो सके, देश की अन्य भाषाओं का भी ज्ञान प्राप्त करना चाहिये ।”

विद्या-ग्रहण के सम्बन्ध में यह लोकोक्ति कितनी सार्थक है—

“विद्या कबहूँ न छाँड़िए,
यद्यपि नीच पै होय ।
परो अपावन ठौर में,
सोना तजै न कोय ॥”



नोकरों की स्वामि भक्ति



बाइबाह् जुनियस सीजर के राज्य-काम में जेनरल नामक एक धनवान् व्यक्ति था। उम समय सुयामपीरी का बोल-बामा था। बाजार में सुयाम व्यक्ति पशुओं के समान बिकते थे और यहाँ तक कि कभी-कभी ठी बिनी और लरीद के समय उनके साथ पशुओं से भी सुलित व्यवहार किया जाता था। सुयाम-यथा को सुधारने की शीव मारते बामे यूगोव के मन्त्रक वर यह कर्मक का टीका था।

जेनरल में बनेक धनपुजों के होने हुए भी यह गुण बिद्यमान था कि वह धने मीइरों व सुयामों के साथ बहुत ही बरता व्यवहार करता था।

एक बार जेनरल को तिगो धर्मियोग में बिरफार करने की रागाया हई। यह पुनिस उणको पशुने के लिए उनके वर वर मई ठी उनके बरदार मीइरों के पता लमठे ही उनको दित्त निबा।

पुलिस आई और पूछताछ करने लगी, परन्तु जब कोई पता न लगा, तो पुलिस ने नौकरो को ही पीटना प्रारम्भ कर दिया। नौकरो को बहुत पीटा गया व अनेक प्रकार के कष्ट दिये गये, परन्तु उन्होंने अपने स्वामी के वहाँ होने की सूचना नहीं दी।

प्लेनकस छिपा हुआ यह सब कुछ देख रहा था। उससे नौकरो का निर्दोष पीटना नहीं देखा गया और वह स्वयं बाहर निकल कर आ गया और पुलिस से कहा—“आप लोग इन निर्दोष नौकरो को छोड़ दो, मैं मृत्यु-दंड तक सहने को तैयार हूँ।”

जब यह बात राजा को ज्ञात हुई, तो राजा का हृदय दया से भर गया और उन्होंने यह सोचकर कि जिस मालिक के प्रति नौकरो का इतना प्रेम है, उसका जीवन नष्ट करना एक प्रकार का अत्याचार है, और इस प्रकार नौकरो के प्रेम के कारण प्लेनकस का मृत्यु-दंड भी माफ कर दिया गया।



काजी सिराजुद्दीन और बादशाह



हिस्सी का बादशाह श्यामुद्दीन बनुविषा में बड़ा ही निपुण था। एक दिन जब वह बनुविषा का अभ्यास कर रहा था तो एकस्मात् तीर छूट गया और एक लकड़े के छरीर में जा मगा। वह सड़का और सड़के ही तुरन्त मृत्यु को प्राप्त हो गया।

सड़के की माँ बहुत मरीच थी। उसने काजी सिराजुद्दीन से इस सम्बन्ध में खरिदार की। कर्णध्वज-नरायण काजी ने बादशाह को इस खरिदार की सूचना दी और कचहरी में उपस्थित होने की आज्ञा दी।

निश्चित समय पर बादशाह एक छोटी तसवार को कपड़े में छिपाकर कचहरी पाया। काजी ने घबराहट का सम्पूर्ण सम्मान कायम रखा और धमियुक्त रूप में बादशाह को किसी भी प्रकार का सम्मान नहीं दिया। बादशाह को साधारण धमियुक्त की भाँति बटहरे में लड़ा किया गया और उसके बिछड़ फैसला दिया गया।

बादशाह ने भी स्वयं अपराध स्वीकार कर लिया और उस गरीब विधवा से क्षमा माँगी। यहाँ तक कि बादशाह ने बुढिया को प्रसन्न करने के लिये कुछ धन भी दिया। बादशाह को अभियोग से मुक्त कर दिया गया।

इसके पश्चात् काजी अपनी कुर्सी से उठकर नीचे आये और बादशाह को सम्मान पूर्वक सलाम किया।

बादशाह ने कपडे मे गुप्त रखी हुई तलवार को निकाला और कहा—“काजी साहब, तुम्हारी आज्ञा का पालन करने के लिये और कुरान शरीफ के फायदे को इज्जत देने के लिये ही मैं यहाँ इस अदालत मे हाजिर हुआ हूँ। मैंने अपनी आँखो से यह अच्छी प्रकार देख लिया है कि तुम अपने न्याय के मार्ग से विचलित नही हुए। वास्तव मे यदि तुम न्याय-मार्ग से विचलित हो जाते, तो मैं इस तलवार से तुम्हारा सर उडा देता। मेरे राज्य मे ऐसे ही न्यायाधीशो (काजी) की आवश्यकता है।”

काजी ने अपने हाथ मे वेंत लेकर कहा—“मैं भी खुदा को हाजिर-नाजिर करके कहता हूँ कि अगर आप अदालत के अन्दर मेरे हुक्म को स्वीकार न करते, तो आपकी इस वेंत से ही खबर लेता।”

वहाँ उपस्थित जन-समुदाय इस वार्त्तालाप को सुनकर दग रह गया। जनता की दृष्टि मे बादशाह व काजी दोनो ही अपनी परीक्षा मे सफल रहे।



प्रिंस एल्बर्ट का मित्र प्रेम



एक बार प्रिंस एल्बर्ट ने अपने एक मजेदार मित्र को भोजन के लिए आमंत्रित किया। वह गरीब मित्र वास्तविकता में प्रिंस से बहुत ही प्रेम करता था। प्रिंस भी अपने इस बंधन के समय में उन मित्र को भूलने नहीं दे।

प्रिंस का मित्र गाँव का निवासी था इसलिए वह नगर की मम्बरा से अनभिज्ञ था। विमायल में सभी गिरित्तु म्प्रीड गाणा लुरे या कश्चि घबरा होनों के हाग गाते हैं। परन्तु प्रिंस के मित्र का बचन लुरे के ही गाणा गाने का सम्बन्ध था।

प्रिंस एल्बर्ट ने मित्र को घासी मैत्र पर ही गाने के लिये बंधाया। अपने उसी घासीलु बद्धि में भोजन करना प्रारम्भ किया। प्रिंस ने भी मित्र का एक प्रकार गाणा गाते देग लिया परन्तु कुछ ही मीने बड़ा घोर स्वयं भी घासीलु मित्र को लख ही गाणा घाने लग।

पास में बैठे अन्य व्यक्तियों को प्रिंस के इस कार्य से बहुत आश्चर्य हुआ और वे हँसने लगे। प्रिंस ने कुछ गभीर मुद्रा में सकेत द्वारा सब को शान्त कर दिया।

मित्र के चले जाने के पश्चात् जब अन्य व्यक्तियों ने इसका कारण पूछा तो प्रिंस ने उत्तर दिया—“यदि मैं अपने मित्र को ठीक प्रकार से खाने की शिक्षा देता, तो वह सकोच करता और उसके मन में हीन-भावना प्रवेश कर जाती। घर आये मित्र को मैं किसी प्रकार की शिक्षा देकर अपमान नहीं करना चाहता था, जिससे कि वह मुझे देखकर सकोच न करने लगे, इसलिए मैं भी उसी की तरह से भोजन करने लगा। इस कार्य से उसे भी कोई कष्ट न हुआ और मेरी भी कोई हानि नहीं हुई।

प्रिंस के इस सच्चे मित्र-प्रेम से वहाँ उपस्थित सभी व्यक्ति बहुत ही प्रसन्न और प्रभावित हुए।



राजा जनक और विदेह



एक बार मंत्री ने राजा जनक से पूछा—“महाराज आप बेहचापी होते हुए भी विदेह क्यों कहलाते हैं ?”

महाराज ने उत्तर दिया—“आपके प्रश्न का उत्तर मैं कुछ समय पश्चात् दूँगा।”

कुछ दिन के पश्चात् राजा ने मंत्री को भोजन के लिये आमंत्रित किया और भोजन के समय से पहले नगर में डिडोरा पिटवस्या कि आज मंत्री को पत्नी पर चढ़ाया जायेगा। डिडोरा पीटने वाले से यह भी कह दिया गया था कि मंत्री के भोजन के सामने पौर और से बिस्माकर डिडोरा पीटना जिससे कि मंत्री सफ़टी प्रकार मुक्त हो।

मंत्री ने राजा के डिडोरा की गुला और राजा के घर पर दर के कारण से भावन करने भी गया। राजा के यहाँ जितने भी प्रकार के भाग्य-पर्याप्त होने से उनमें से किसी मंत्री जनक विष्णुम नहीं जाता गया था।

भोजन करने के पश्चात् राजा ने मंत्री से पूछा—“मंत्री जी, यह बतलाओ कि आज शाक-भाजी में नमक आदि की तो कमी नहीं थी ? यदि इस प्रश्न उत्तर तुम ठीक और सही दोगे, तो तुमको मृत्यु-दंड से मुक्त कर दिया जायेगा ।”

मंत्री ने कहा—“महाराज, मुझे मृत्यु-दंड के भय से कुछ भी पता नहीं चला कि भोजन में नमक कम था या अधिक ।”

महाराज बोले—“तुमने दो वजे भोजन किया और चार वजे शाम को मृत्यु-दंड का समय निकट था । दो घंटे का समय था और तुमको कम से कम इतना तो पूर्ण विश्वास था ही कि दो घंटे के लिये जीवन शेष है । मृत्यु से दो घंटे पूर्व तुम्हारे पास यही शरीर, बुद्धि, जिह्वा, स्मरण-शक्ति आदि उपकरण विद्यमान थे, फिर भी तुमको यह पता नहीं लग सका कि भोजन में नमक कम है या अधिक ?”

राजा ने आगे कहा—“बस, तुम्हारे प्रश्न का उत्तर देने के लिये ही मैंने तुमको मृत्यु-दंड का भय दिखलाया था । जिस प्रकार मृत्यु के समय से दो घंटे पूर्व तुम्हारी यह मन स्थिति हो गई कि तुम्हें अपने देह का भी ध्यान न रहा, इसी प्रकार मेरे मन में सदा यह भय रहता है कि न जाने कब मृत्यु की घड़ी आ जाए । और इसी भय के कारण से कि न जाने कब इस ससार से विदा हो जाऊँ, मैं सदा विदेह रहता हूँ ।”

किसान और जन-सेवा



स्वैन में एक गरीब किसान रहता था। उसका नाम इमिया था। पन-बैमब से रहित होने हुए भी उसका हृदय बहुत ही उदार था। पनबानू भी अपने पन के बन् से इनको सहा नहीं कर सकता बित्तरी कि वह अपने वास्तविक प्रम में जन-सेवा किया करता था।

बहु गरीब किसान दीन-दुनियों की सहायता के लिये पूर्ण प्रयत्न करता था और प्रत्येक क लिये हर सम्भव साधन जुटाने में कोई कमी नहीं रगता था। अपने प्रयत्न से बहुत से भाइयों के लिये उनसे कुछ भी मुदबावे थे।

बहु मरा ही मैनों में जाता और पतियों को दाना गिनाया करता था। एकदा में वह प्रभु का गुण-दान भी दिया करता था।

बहु अपने बदानु स्वभाव और सहृदयता के कारण बहुत ही प्रसिद्ध हो गया था। पात्र भी बहु स्वैन में प्युडा के साथ गुवा जाता है, पी उनको मन्च व में बहुत-सी बचान प्रचलित है।

दान, परोपकार, दया, सज्जनता आदि गुणों के कारण से आज भी स्पेन के घर-घर में उसका नाम गर्व के साथ लिया जाता है।



किसान और जन-सेवा



एक बड़े एक बरीब किसान
रहा था। उसका नाम इन्द्रियों था। पन-सेवा से रतित होने
हुए भी उसका हृदय बहुत ही उदार था। पनवान् भी अपने
पन के इन में इनको नारा मदी कर मारना शिष्टनी कि वह
पाने बाग्नबिह प्र म ने जन-सेवा दिया करता था।

वह बरीब किसान दीन-मुक्तियों की सहायता के निचे पुर्ण
प्रदान करता था और प्रत्येक निचे हर मन्त्रव मापन पुर्ण
में कोई कभी नही मरता था। पाने प्रदान में बाग्न में पार्षी
के निचे उनमें कुंए भी गुन्वार व।

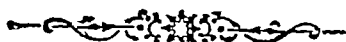
वह मन्त्र हो केरों में बाग्न और पक्षियों को शाना निभावा
करता था। पक्षियों के वह प्रभु का पुण्य-दान भी दिया
करता था।

वह पाने पानु पत्राव और मन्त्रवता के बाग्न बहुत
ही पक्षि ही मरता था। पाने भी वह मन्त्र व पाने के माप
पुन बाग्न है ही उनमें मन्त्र व के बहुत-ही मन्त्र प्र म न है।

स्वामी जी के अभिप्राय को समझ कर एक दूसरा विद्यार्थी उठा और बोर्ड के पास पहुँच कर उमने स्वामी जी की रेखा के ऊपर एक दूसरी रेखा पहली से भी लम्बी खींच दी।

इस विद्यार्थी के सामान्य-ज्ञान को देखकर स्वामी जी बहुत प्रसन्न हुए और उसको तीव्र-बुद्धि की प्रशंसा करने लगे।

स्वामी जी ने कहा—“यह दोनो रेखाएँ यह सकेत कर रही हैं कि जीवन में महान् वनने के लिये दूसरो को मिटाने का प्रयत्न मत करो, बल्कि दूसरो के महत्व की रक्षा करते हुए स्वयं उससे भी अधिक महत्वशाली वनने का प्रयत्न करो।”



महान् बनने की कला



स्वामी रामतीर्थ एक कालेज में प्रोफेसर थे। एक दिन कक्षा में उन्होंने ब्लैक-बोर्ड पर एक सम्झौता लिखा और विद्यार्थियों को सम्झौता को छोटी करने के लिये कहा।

स्वामी जी की बात को सुनकर एक विद्यार्थी उठ्य और ब्लैक-बोर्ड के पास पहुँच कर उस सम्झौता को छोटी करने के लिये एक धार से मिटाते लगा।

स्वामी जी ने उस विद्यार्थी को ऐसा करने से मना कर दिया और बोले— 'मैंने इस सम्झौता को मिटा देने के लिये नहीं कहा है, केवल छोटी करने के लिये कहा है।'

स्वामी जी की इस बात से सभी छात्र आश्चर्य में पड़ गये। किसी की भी समझ में नहीं था कि बिना मिटाए सम्झौता किस प्रकार छोटी हो पायगी ?

स्वामी जी के अभिप्राय को समझ कर एक दूसरा विद्यार्थी उठा और बोर्ड के पाम पहुँच कर उसने स्वामी जी की रेखा के ऊपर एक दूसरी रेखा पहली से भी लम्बी खींच दी ।

इस विद्यार्थी के सामान्य-ज्ञान को देखकर स्वामी जी बहुत प्रसन्न हुए और उसको तीव्र-बुद्धि की प्रशंसा करने लगे ।

स्वामी जी ने कहा—“यह दोनो रेखाएँ यह सकेत कर रही हैं कि जीवन में महान् वनने के लिये दूसरो को मिटाने का प्रयत्न मत करो, बल्कि दूसरो के महत्व की रक्षा करते हुए स्वयं उमसे भी अधिक महत्वशाली वनने का प्रयत्न करो ।”



महारीनी मेरी ओर प्रामोण



महाराणी मेरी रोषियों के प्रति बहुत ही सहानुभूति रखती थी। वह अस्पताल में भी राग-वीकृत व्यक्तियों से स्वयं मिलने जाती थीं और उनके साथ प्रेम-पूर्वक बातचीत कर उनके शांतिना देती थीं।

एक बार कोई प्रामोण नर्सकर जोमारी से प्रसिद्ध अस्पताल में पठा हुआ था। वह पढ़ा-लिखा भी नहीं था और नागरिक आचरण से भी अन्तर्मुख था। गन्ना और रामी की उसमें मात्र में कृतानियाँ तो बहुत मुनी थी परन्तु कमी दर्शन नहीं किये थे।

प्रामोण यह जानकर बहुत प्रसन्न हुआ कि प्रायः महाराणी अस्पताल में मरीजों को देखने के लिये स्वयं जा रही हैं। उसे इस समाचार से बहुत ही प्रसन्नता हुई परन्तु कुछ ही दिनों में वह मोक्ष विचार में पड़ गया और इस बात से बचन मया कि किस प्रकार महाराणी से बातचीत करेगा ?

पशु के प्रति भी प्रेम



एक बालिका अपने गाँव के पादरी के साथ घोड़े पर बैठकर घूमने जाया करती थी। पादरी के मन में अनाथ और बीमार व्यक्तियों के प्रति बहुत ही दया थी। वह पादरी उस बालिका की मनावृत्ति को दयालु बनाने के लिए इसी प्रकार की शिक्षाएँ दिया करता था।

एक दिन पादरी और बालिका घूमने जा रहे थे, तो एक गडरिया अपने कुत्ते के लिये रो रहा था, क्योंकि किसी व्यक्ति ने उसके कुत्ते का एक पैर डहा में ताँड दिया था।

बालिका ने जब उस गडरिये से रोने का कारण पूछा, तो उसने सब स्पष्ट बतला दिया।

बालिका उच्च स्वर से बोली—“अरे, रोता क्यों है? इस कुत्ते का तो केवल पैर ही टूटा है। प्रयत्न करने से ठीक हो सकता है।”

गडरिया, जो कि बहुत ही निराश हो चुका था, ने कहा—“बहिन, इस कुत्ते का अब ठीक होना असम्भव है और इसके दर्द

संशुद्ध बहूत प्रतिक्रिया बेचना हो रही है। क्योंकि मैं इसके कष्ट से उत्पन्न दुःख का सहन करने में सर्वथा असमर्थ हूँ। यहाँ तक कि धाम तो मैंने निश्चय कर लिया है कि स्वयं अपने हाथ से इसे मार दूँ। जिससे कि इसका कष्ट दूर हो पाय।

बालिका स्वयं उस कुत्ते के पास गई और बहुत ही प्रेम-पूर्वक उसके शरीर पर हाथ फेरा। कुछ ही क्षणों में प्रतीत हुआ कि जैसे कुत्ता का प्राणा साम तो हो गया। कुत्ता उस बालिका की ओर धाँस करके बैठने लगा जैसे कि वह उसके इस व्यवहार से प्रसन्न होकर सूफ नश्यवाह बे रहा है।

बालिका दिन भर कुत्ते के पास ही रही और उसके पैर को गरम पानी से धोकर कुछ सिकाई कर ही और फूँटी बाँध दी। इस प्रकार कुत्ता का सब दर्द नष्ट हो गया और वह मानस-पूर्वक मौखिक वन्दन करने लगी।

शाम तक कुत्ता का सब दर्द दूर हो गया और वह स्वयं खड़ा होकर अपने स्वामी की बैठकर पूँछ झुमाने लगा। अपने कुत्ते को इस अवस्था में देखकर गढ़रिया को बहुत ही प्रसन्नता हुई और वह बालिका के पैर पकड़ कर उपकार के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए समा मौखिक वन्दन करने लगा।

इस कथानक से हमें यह शिक्षा मिलती है कि प्रापति के समय हम को धैर्य और विवेक से काम लेना चाहिए और प्रापति निवारण के लिए उचित उपाय करने चाहिए। प्रापति घाने पर जो भोग धैर्य और विवेक-बुद्धि को जो बँटते हैं और रोने-पीटने को ही एक मात्र उपाय मान लेते हैं, वे प्रापति के सबसे पहले विचार बने हैं।

भक्ति और रोग :



भारतवर्ष में प्रार्थना द्वारा दुःख को दूर करने की बहुत पुरानी प्रथा है। यहाँ तक कि विदेशों में भी इस प्रथा को पहुँचने का सुश्रवण प्राप्त हो चुका है।

हमें अनेक व्यक्ति मिलेंगे जो कि बीमार व्यक्ति को ईश्वर के भरोसे पर छाड़कर, स्वयं विश्वास-पूर्वक उसकी उपामना करते हैं। डान आदि भी करते हैं।

एक थाँमस भी ईश्वर के प्रति ऐसा ही दृढ़ विश्वास रखते थे। एक बार उनकी प्यारी पुत्री बहुत ही भयंकर बीमारी की शिकार हो गई। बहुत से बड़े-बड़े डाक्टरों की चिकित्सा की गई, परन्तु कोई सफलता नहीं मिली। ज़्यादा का स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन गिरता ही गया और अंत में डाक्टरों ने भी उसकी आशा छोड़ कर जवाब दे दिया।

एक थाँमस का पुत्रों के प्रति बहुत प्रेम था। बड़े ही लाट-प्यार से उसकी पालना-पोसा था। पुत्री को इस कर्मण दया को देखकर उनका हृदय र आया, उन्होंने पुत्री को ईश्वर के भरोसे पर ही छोड़ दिया और स्वयं प्रभु-स्मरण में लग गए।

से मुझे बहुत अधिक बेचना हा रही है क्योंकि मैं इसके कष्ट से उत्पन्न दुःख का सहन करने में सर्वथा असमर्थ हूँ। यहाँ तक कि मात्र ता मैंने निरख्य कर लिया है कि स्वयं अपने हाथ से इसे मार डालूँ जिसे कि इसका कष्ट दूर हो जाय।

बालिका स्वयं उस कुत्ते के पास गई थीर बहुत ही प्रेम-युक्त उसके गले पर हाथ फेरा। कुछ ही क्षणों में प्रतीत हुआ कि जैसे कुत्ता को घावा सामं ता हो गया। कुत्ता उस बालिका की धीर भाव करके देखने लगा जैसे कि वह उसके इस व्यवहार से प्रमत्त होकर कुछ बच्यबाच दे रहा है।

बालिका दिन भर कुत्ते के पास ही रही थीर उसके पैर को बरग पानी से धोकर कुछ सिकाई कर बी धीर पड़ी बाँध दी। इस प्रकार कुत्ता का सब दर्द नष्ट हो गया थीर वह मानस-युक्त भाव बन्ध करके सो गया।

गाम तक कुत्ता का सब दर्द दूर हो गया थीर वह स्वयं छटा होकर अपने स्वामी को लेकर पुनः हिंसाने लगा। अपने कुत्ता को इस घटस्था में बन्धकर गड़रिया का बहुत हा प्रसन्नता हुई थीर वह बालिका के पैर पकड़ कर उपहार के प्रति कृतज्ञता प्रकट करने हुए समा माँगने लगा।

इस कथानक से हमें यह शिक्षा मिलती है कि धारण के समय हम का पैर धीर विवेक में काम मना चाहिए थीर धारण विचारण के लिए उचित उपाय करने चाहिए। धारण करने का या लोग पैर धीर विवेक-बुद्धि को मा बँटने है थीर जाने-नीटने को ही एक मात्र उपाय मान मते हैं के धारण के सबसे पहले विचार बनन है।

के लिए समाधि लगा कर बैठ गया। प्रभु-स्मरण में वावर ने ईश्वर से यही प्रार्थना की कि—“हे परवर-दिगार, मेरे प्यारे बेटे हुमायूँ की जिन्दगी को बख्श दे, और अपनी खिदमत में मुझे बुला ले।”

शुद्ध हृदय से की गई वावर की प्रार्थना का ऐसा चमत्कारी प्रभाव हुआ कि हुमायूँ के स्वास्थ्य में उत्तरोत्तर सुधार प्रारम्भ हो गया और दूसरी ओर वावर के स्वास्थ्य में दिनो दिन गिरावट शुरू हो गई, और इस दैविक उपचार का अन्तिम परिणाम यह निकला कि हुमायूँ पूर्णतः स्वस्थ हो गया और उसका पिता वावर समार में विदा हो गया।



के निम्न प्रति उपासना-गृह में चाते धीर बुटने टेक कर झुठ हृदय से प्रभु की प्रार्थना करते थे। कुछ दिन की सखी भक्ति धीर उपासना के पश्चात् उनके मन में ऐसा विचार आया कि समुक्त बस्तु के प्रयोग से क्या स्वस्थ हो सकती है।

धर पौमस ने उसी समय डाक्टर को अपना विचार बत-
नाया और डाक्टर ने उसी धीपधि का प्रयोग किया। परिणाम
सुन्दर निकसा धीर क्या के स्वास्थ्य में सुधार होने लगा।

डाक्टर ने कहा—“धर पौमस इसका धर्म यह नहीं है
कि बीमार व्यक्ति की चिकित्सा ही मही करनी चाहिए बल्कि
मनुष्य यदि प्रारम्भ से ही अपने मन को अपने कार्यों में समग
रक तो उसे सामाजिक कष्ट कम होत है और अपने कर्मों के
द्वारा वह मनुष्य में भी अपने जीवन का कल्याण करने में
सफल हो जाता है।

ईश्वरोपासना के द्वारा रोग-निवारण के सम्बन्ध में एक
ऐतिहासिक घटना हमारे देश में गुजरात शासन-काल में घटी है।
जिस समय हुमायूँ किसी कठिन रोग में ग्रहित होकर कल्या
यवस्था में रोग-व्यथा पर पड़ा था और देश-विदेश के सभी
चिकित्सकों की चिकित्सा से कोई लाभ नहीं होता दिखाई दे रहा
था उस संकट काल में हुमायूँ के पिता बाबर के चिन्ता-ग्रस्त
मन में यह अन्त-प्रस्ता पैदा हुई कि—“जिस ईश्वर को सर्व
भविष्यमान और सर्वसंकट-निवारक कहा जाता है उसी का
आभिधी सहारा लेना चाहिए।

अन्त-प्रस्ता के अनुसार बाबर ने पुत्र की आरोग्यता के
लिए ईश्वरोपासना का एक संकल्प किया और मान-भक्ति का
पूर्व परिचय कर पुत्र की रोग-व्यथा ने वास ही प्रभु-स्मरण

राजा ने मुझे जेल में रखा और मैंने एकान्त स्थान का सुअवसर समझ कर उससे लाभ उठाया। एकान्तवास में रहकर मैं सामारिक जजालों से मुक्त रहा और अपना अधिकांश समय प्रभु उपासना में लगाया। इससे मुझे सहज ही चिन्तन एवं मनन का सुअवसर प्राप्त हो गया और राजा ने जो यह शुभ अवसर दिया है, उसके लिये मैं उनका बहुत ही आभारी हूँ।”

सर थॉमस के पास कुछ रुपये बचे हुए थे, उनसे एक सुन्दर प्रतिमा खरीद कर अपने ही हाथों से फाँसी पर चढ़ाने वाले जल्लादों को भेंट रूप में बहुत ही प्रेम पूर्वक प्रदान की।

इसके पश्चात् वह वीर, शान्त और प्रभु का उपासक अपूर्व बलिदान का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करके इस सप्ताह से चला गया।



संकट में श्री धैर्य



सर चॉमस ने कर्पों तक बेस-यातना में घपने जीवन के निम घ्यतीत निय परन्तु राजा को इससे भी मनोप नहीं हुआ और उसने सर चॉमस की फौसा का हुजम सुमा दिया ।

सर चॉमस का एक मिच इस समाचार को संकर उमरुं पाम गया कि कम उन्हें फौसी भी जायेगी । इस समाचार से वह किचिन मात्र भी बिचलित नहीं हुए । यही तक कि मृत्यु-दंड देने बान राजा पर भी कोई घाओप नहीं लगाया ।

सर चॉमस ने सुदेश माने बाने को इस समाचार के सिधे बन्धबाद दिया और राजा को उत्तर मे कहा—“घापने मेरे उमर वा समय-मसय पर उपकार दिया है उच्च पर ब सम्मान दिया है तथा घनेक प्रकार से हुपा-दृष्टि रली है उसके लिये मैं घापना हुतन्न है और घापको इस हुपा को इस ताक और परलोक में भी घून नहीं संहु या ।”

राजा ने मुझे जेल में रखा और मैंने एकान्त स्थान का सुअवसर समझ कर उससे लाभ उठाया। एकान्तवास में रहकर मैं सामारिक जजालों से मुक्त रहा और अपना अधिक समय प्रभु उपासना में लगाया। इससे मुझे सहज ही चिन्तन एवं मनन का सुअवसर प्राप्त हो गया और राजा ने जो यह शुभ अवसर दिया है, उसके लिये मैं उनका बहुत ही आभारी हूँ।”

सर थॉमस के पास कुछ रुपये बचे हुए थे, उनसे एक सुन्दर प्रतिमा खरीद कर अपने ही हाथों से फाँसी पर चढ़ाने वाले जल्लादों को भेट रूप में बहुत ही प्रेम पूर्वक प्रदान की।

इसके पश्चात् वह वीर, शान्त और प्रभु का उपासक अपूर्व वलिदान का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करके इस ससार से चला गया।



स्वामी विवेकानन्द की दयालुता

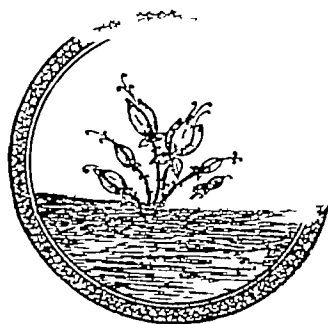


एक बार स्वामी विवेकानन्द को यह दुसर समाचार मिला कि एक व्यक्ति सन्तान रहित है और अस्वस्थता के कारण बहुत ही कष्ट उठा रहा है। यहाँ तक कि उसके पास चिकित्सा कराने के सिधे भी वेसे नहीं हैं। मूल की पीड़ा और संघर्षिणी को बीमारी से दुःखी व्यक्ति जीवन और मृत्यु के मूजे में मूल रहा है।

इस समाचार के मिसते ही स्वामी जी ने () व एकत्र किये और सीधे उस बीम व्यक्ति के घर पर पहुँच। यह बीम व्यक्ति स्वामी जी को देखकर बहुत ही प्रसन्न हुआ और उनका आभार प्रदर्शित करने लगा।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा— तुम किसी प्रकार की चिन्ता न करना। तुम्हारे पास मेरे मित्र जो कि एक डाक्टर हैं, भाएँगे और बिना फीस सिधे ही देख लेंगे। घोषि भी तुमको मुफ्त ही प्राप्त हो जाएगी।

रोगी का आघात रोग तो स्वामी जी की बातों से ही दूर हो गया था और शेष कुछ ही दिनों के इलाज से दूर हो गया ।



नेहरू जी ने जब यह गदगी देखी तो चुपचाप अपनी पुर्नी ने उठ चढे हुए और पृथ्वी पर बैठकर सब छिलके इकट्ठे करने लगे। वहाँ उपस्थित सभी लोग घबरा उठे और सभी अपने-अपने छिलके चुनने में लग गये।

लोग सम्मान लेने गये थे, परन्तु असम्मान हाथ लगा और “कथनी में करनी भली” का सुन्दर आदर्श ग्रहण किया।

वहाँ उपस्थित सभी व्यक्तियों को पंडित नेहरू ने विना कुछ कहे-सुने यह ममझने का सुअवसर दिया कि अब गुलामी की आदती को त्याग कर सम्य नागरिक बनो क्योंकि भारत के ६० करोड़ लोगों को विश्व-मंडल में सम्मान सहित बैठने का सुअवसर प्राप्त हुआ है।



मेहरू जी का स्वच्छता-प्रेम



बहुत से व्यक्ति कुछ बाली-सोनी बाजा की धोर कोई ध्यान नहीं देते हैं जब कि पंडित मेहरू जैसे विद्वान विख्यात व्यक्ति ऐसी बातों का बहुत ध्यान रखते हैं। मेहरू जी स्वच्छता प्रिय है और प्रत्येक स्थान पर इसकी धोर विशेष ध्यान देते हैं।

कुछ ही दिन पूर्व मेहरू जी नागपुर गये। राज्यपाल ने प्रधान मंत्री के सम्मान में एक मोत्र दिया जिसमें नगर के सम्मानित व्यक्तियों ने जी भाव सिखा।

भात्र के सबसर पर अन्य बन्धुओं ने प्रतिरिक्त नागपुर की प्रतिष्ठ नार्यियों की भी व्यवस्था की गई थी।

सभी व्यक्ति भात्र के सबसर पर एकत्र हुए और मेहरू जी की बड़ी पहुंचे सभी व्यक्ति नार्यियों गाले के परचात् जिसके पृष्ठी पर ज्ञानि ज्ञान। किमी को इसका लनिक भी ध्यान नहीं बा दि पंडित मेहरू इस लरंगी को सहन नहीं कर सकते।

परन्तु उस सुकुमारी ने दृढता और सयम का पूर्ण परिचय दिया ।

पत्नी ने उत्तर मे लिखा—“मैं आपकी सहधर्मिणी हूँ । सत्य मार्ग और जीवन की उच्चता की ओर अग्रसर होने मे जिस मार्ग का आपने अनुसरण किया है, उसी मार्ग पर निरन्तर आगे बढ़ते चलना । मैं भी जितना सहयोग दे सकूँगी—अवश्य दूँगी और कभी भी आपके मार्ग मे विघ्न उत्पन्न नहीं करूँगी ।”

पत्नी के इस उत्तर को पाकर अश्विनीकुमार का सकल्प और भी दृढ हो गया और उसने पत्नी होते हुए भी सम्पूर्ण जीवन अखड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए व्यतीत किया । पति-पत्नी दोनो ने अखड ब्रह्मचर्य रखकर जो आत्म-सयम और चारित्र-बल का आदर्श परिचय दिया, वह आजकल के व्यक्तियों के लिए फल्पना से परे की वस्तु प्रतीत होती है ।



आदर्श दाम्पत्य जीवन



गृहस्थाश्रम में रहते हुए भी इस-वर्ष प्राप्त करने के दृष्टान्त प्राचीन-काल में बहुत से परलु धार्मिक मही के बराबर हैं।

समकाल्य परमहंस न भी ऐसा ही जीवन व्यतीत किया था। दूसरा नम्बर ब्रह्म सखिनीकुमार दत्त का है।

विवाह के दो वर्ष पश्चात् धरवनीकुमार दत्त ने सरोर-शुद्धि का उपदेश पढ़ा और उनके मन पर इसका बहुत ही प्रभाव पड़ा।

सखिनीकुमार को ध्यान आया कि धर्म ही मेरी छाया ही है। इसलिए वैदिक पवित्रता किंचित् प्रकार सुरक्षित रखने में समर्थ हो सकता है? इस प्रकार के विचार आने के पश्चात् उन्होंने मन की धर्मशाया को पत्नी को निज मेधा।

पत्नी पति के विचारों को जान कर बहुत प्रसन्न हुई और अपने को ब्रह्म समझने लगी कि रत्न का संयोग रत्न के साथ हो हुआ है। यद्यपि पत्नी की धरवनी केवल १२ वर्ष की थी

परन्तु उस सुकुमारी ने हृदता और समय का पूर्ण परिचय दिया ।

पत्नी ने उत्तर मे लिखा—“मैं आपकी सहघर्मिणी हूँ । सत्य मार्ग और जीवन की उच्चता की ओर अग्रसर होने मे जिस मार्ग का आपने अनुमरण किया है, उसी मार्ग पर निरन्तर आगे बढ़ते चलना । मैं भी जितना सहयोग दे सकूँगी—अवश्य दूँगी और कभी भी आपके मार्ग मे विघ्न उत्पन्न नही करूँगी ।”

पत्नी के इस उत्तर को पाकर अश्विनीकुमार का सकल्प और भी दृढ हो गया और उसने पत्नी होते हुए भी सम्पूर्ण जीवन अखड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते हुए व्यतीत किया । पति-पत्नी दोनो ने अखड ब्रह्मचर्य रखकर जो आत्म-सयम और चारित्र-बल का आदर्श परिचय दिया, वह आजकल के व्यक्तियों के लिए फल्पना से परे की वस्तु प्रतीत होती है ।



हंसन की प्रामाणिकता



गंगू नामक एक बाह्यण को ज्योतिष का बहुत सम्पास था। उसके यहाँ हंसन नामक एक पठान रहता था जो कि बहुत ही प्रामाणिक और सच्चा आदमी था। गंगू उस पठान पर बहुत ही विश्वास करता था।

गंगू ने प्रसन्न होकर हंसन को एक खेत प्रदान किया और साथ ही एक जोड़ी बैल भी दिये।

एक दिन हंसन खेत में हल चला रहा था तो हल एक अगह फँस गया और बैलों की पुरी ताकत लगाये पर भी धाये नहीं बढ़े। हंसन ने जब उस स्थान को जोखा तो वहाँ से एक ताम्र पात्र निकला जिसमें कि बहुत-सा जल भरा हुआ था।

हंसन सब जल को लेकर गंगू के पास गया और सब बतला कर सुनाई। उसने सब जल गंगू के सामने रख दिया।

गंगू ने कहा—'यह जल सँभल लो, तुमको प्राप्त हुआ है इसलिये यह तुम्हारा ही है।'

हंसन बोला —“ खेत में परिश्रम के पश्चात् जो उत्पन्न होगा उस पर तो मेरा अधिकार है, किन्तु बिना परिश्रम के धन पर मैं कैसे अधिकार कर लूँ ? आप खेत के मालिक हैं, इसलिये आप ही इसको रखिये ।”

वादशाह को जब यह समाचार मालूम पड़ा, तो उसने दोनों को बुलाया । वादशाह के आग्रह करने पर भी दोनों में से कोई धन को लेने के लिए तैयार नहीं हुआ और अन्त में वह धन राज्य-कोष में पहुँच गया ।

वादशाह दोनों की प्रामाणिकता और सत्यता से बहुत ही प्रभावित हुआ और गजू को अपना राज्य-ज्योतिषी और हंसन को प्रधान सेनापति बना दिया । भविष्य में भी उन्होंने अपनी प्रामाणिकता एवं सत्यनिष्ठा का पूर्ण परिचय दिया ।



हजरत मोहम्मद का अन्तिम उपदेश



हजरत मोहम्मद का जब अन्तिम समय निकट था गया तो उन्होंने अपने उत्तराधिकारी हजरत अली को निकट बुला कर निम्नलिखित विसासप्रद उपदेश दिये :—

‘तुम एक बहादुर, विचारशील और संमीर व्यक्ति हो इमामिये कमी मी अपनी बीरता और पराक्रम का प्रतिमान मत करना। सदा ही नम्र-भाव से रहना और अपने जीवन को उन्नति के मार्ग पर बढ़ाना। सदा-सर्वदा निष्कपण और धर्म-स्वाधो की ही संघट में रहने का ध्यान रखना !

‘सन्त्याकरण और सेवा-समागम द्वारा खुदा के पास पहुँचने का जिस्वास मन में रखना और मन को सदा ही बस में रखने का प्रयत्न करना। जब भी मन अनुचित मार्ग पर चलने का प्रयत्न करे, तो तबसे सन्मार्ग पर समाने का ध्यान रखना ।

‘बुद्ध-बनो और माता-पिता की आज्ञा को सदा ही सुनना और अपने हृदय से पालन करना। प्रत्येक प्राणी के साथ प्रेम

का व्यवहार करना और कोई भी जीव तुम्हारे द्वारा किसी प्रकार का कष्ट न भोगने पाए—इस बात का सदैव ध्यान रखना ।”

“यदि तुमने मेरी इन बातों पर ध्यान दिया, तो तुम्हारा जीवन यहाँ भी सुखमय रहेगा और मृत्यु के समय भी तुम्हें शुभ कर्म करने की खुशी रहेगी और आगे भी तुम्हारे मन को सुख और शान्ति प्राप्त होगी !”



सुलतान बनने की योग्यता



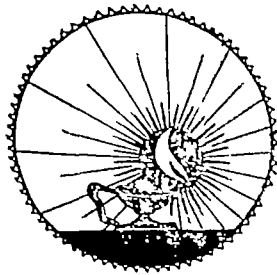
जब बाबसाह हसन परी पर बैठा तो किसी व्यक्ति ने उससे पूछा—“बिना इम्र और सैनिक-छामची के तुम बाबसाह कैसे बने ?”

हसन ने उत्तर दिया—“मिर्चों का शुद्ध प्रेम सन्तुष्टों के प्रति उपाया प्रत्येक व्यक्ति के प्रति अनुमानता आदि इतनी छामची मेरे पास इस समय है और इसे भविष्य में सुरक्षित रखने का हृदय संकल्प भी रखता हूँ। मेरे विचार से सुलतान बनने के लिये यह छामची पर्याप्त है।”

हसन के उत्तर से प्रसन्नकर्ता को पूर्ण संतोष प्राप्त हुआ और उसके मन में विचार आया कि हसन का उत्तर वास्तव में ठीक है।

“वास्तव में यदि व्यक्ति उपरोक्त बातों का पालन करे, तो वह सुलतान से भी कहीं बड़ा सम्मानित व्यक्ति है और उन्म से उन्म पर पर पहुँच सकता है। भाग्य की विपरीतता से मनुष्य मर्त ही सांसारिक वैभव प्राप्त न कर सके परन्तु

बादशाहत से भी अधिक मूल्यवान् आत्म-शान्ति तो अवश्य ही प्राप्त हो जाती है।”



सुलतान बनने की योग्यता



जब बाबलाह हुसन यही पर बैठा तो किसी व्यक्ति ने उससे पूछा—“बिना इम्य और सैनिक-सामग्री के तुम बाबलाह कैसे बने ?

हुसन ने उत्तर दिया—“मित्रों का कुछ प्रेम सन्तुष्टों के प्रति उदारता प्रत्येक व्यक्ति के प्रति सम्मानना आदि इतनी सामग्री मेरे पास इस समय है और इसे भविष्य में सुरक्षित रखने का हक संकल्प भी रखता हूँ। मेरे बिचार से सुलतान बनने के लिये यह सामग्री पर्याप्त है।”

हुसन के उत्तर से प्रश्नकर्ता को पूर्ण संतोष प्राप्त हुआ और उसके मन में बिचार आया कि हुसन का उत्तर वास्तव में ठीक है।

‘वास्तव में यदि व्यक्ति उपरोक्त बातों का पालन करे तो वह सुलतान से भी कहीं बड़ा सम्मानित व्यक्ति है और उच्च से उच्च पर पर पहुँच सकता है। भाग्य की विपरीतता से मनुष्य मते ही धार्तरिक बौद्ध प्राप्त न कर सके परन्तु

जब गाँव के व्यक्तियों को उसकी बीमारी के कारणों का पता लगा, तो उनको बहुत ही पश्चात्ताप हुआ और वे समझ गये यदि हम उस गरीब बुढ़िया की देख-रेख करते और बीमारी की दशा में उसकी चिकित्सा की व्यवस्था करते, तो इतना भयकर विनाश हमें न देखना पड़ता।

“समाज के निस्सहाय और गरीब व्यक्तियों के प्रति प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि मनुष्यता के नाते यथाशक्ति सहायता करें और यदि ऐसा नहीं होता है, तो एक-न-एक दिन सम्पूर्ण समाज ही हीन दशा को प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार की मानवीय भावना रखने से ही समाज उन्नति करता है और जब समाज उन्नति की ओर-अग्रसर होता है, तभी देश की चहुँमुखी प्रगति होती है।”



सत्त समागम से लाभ



फकीर बुम्नामी जब हज-बाग को धरने लो ऐम व्यक्तिधों की शोत्र करने लगे जो कि हज ममार से विरक्त हाँ और जिन्का मन सांसारिक विषयों के विरक्त होकर गुरा के प्रति लमा हा ।

हज को जाने हुए मार्ग में उनकी एक मंत विमा और उनकी मन्वन्ति वा मुमबमर थी । धर्म-सम्बन्धी हज-बागानीवाप हुआ ।

मन के पुछा—“बुम्नामी जी, कही जा रहे हो ?

बुम्नामी बोला—“हज करने के निम्ने जा रहा हूँ ।”

मन के कहा—“बास्तबिक हज क्यों नहीं करते हो ?

बुम्नामी के पुछा—“बास्तबिक हज कोन-सी है और कैसे करनी चाहिये ?”

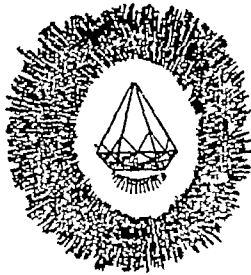
मन के कहा—“जीना जालना हज करो । उम जह स्वकन मकरा में क्या रगा है । येम स्वकन बाबा की धोर क्यों नहीं जाने हो ?

बुस्तामी की सत की बात पर विश्वास हो गया और उसने उमी दिन से अपने हृदय को शुद्ध बनने का प्रयत्न किया। इसके पश्चात् उसने सच्चा हज 'सत समागम' को ही समझा और अपने जीवन को सफल बनाया।



वचन में जो विद्याभ्यास का कार्य अधूरा रह गया था, उसको पूरा किया ।

सन् १८८७ में ७५ वर्ष की आयु होते हुए भी डॉक्टरेट की सम्मानित उपाधि प्राप्त की और अपना सकल्प साकार किया ।



ज्ञान पिपामा



पौनेन्द्र में बोधनिक नाम का एक व्यक्ति हुआ है। उसमें बचपन में आचार्यन दिया था परन्तु घर की परिस्थिति बदली म जन्मे के कारण वह छोटी उम्र में ही बुढ़ापे का नामक-वीक्षण में लग गया और बलवत्त्व का इच्छानुसार विद्याभ्यसन न कर सका।

सन् १८५३ में उसका देश-राज्य पोरमाचो में राजा के विरुद्ध कार्य किया। कार्यविना में भी उस कार्यवाही में सक्रिय भाग लिया और इसके बलवत्त्व बह बचाया गया।

माहुरिया के बर्तमान प्रदेश में उनकी बंदागाने में रजा गया और बनेक बन् दिव गये। इन्हें विद्या के अनुसार निर्दोष पाये जाने पर सन् १८८३ में उनको बिना शर्त रिहा कर दिया गया।

बोधनिक जैन में रिहा होकर सीधा अपने नगर चामा और अपने विचारों को पूरा करने के लिए विद्याभ्यसन न कर गया।

वचन में जो विद्याभ्यास का कार्य अधूरा रह गया था, उसको पूरा किया।

सन् १८८७ में ७५ वर्ष की आयु होते हुए भी डॉक्टरेट की सम्मानित उपाधि प्राप्त की और अपना सकल्प साकार किया।



अस्तौय व्रत का उच्च आदर्श



सर्व और निश्चित नामक दो माई थे। मही के किनारे ही दोनों अपने-अपने धामधर्मों में रहते थे। उनके धामधर्म में अनेक प्रकार के फल-फुल सुलभ हुए थे।

एक दिन निश्चित अपने बड़े भाई सर्व के धामधर्म में गया। उस समय सब कार्यवस्तु बाहर गया हुआ था। जब निश्चित को उसका भाई वहाँ उपस्थित नहीं मिला तो वह बगीचे में इधर-उधर घूमने लगा।

बगीचे में सुन्दर फले हुए फल लगे हुए थे। उसने सोचा कि भाई का ही तो बगीचा है इसलिये फल तोड़ने में कोई चोरी नहीं है।

वह भाई की अनुपस्थिति में ही फल तोड़ने लगा। उसी समय उसका भाई सर्व बाहर से धा गया। उसने भाई को फल तोड़कर खाते हुए देखा तो बहुत शोचित हुआ।

लिखित बोला--“ये आश्रम के फल मैंने अपने ही समझ कर तोड़ लिये हैं। सुन्दर और मीठे फल देखकर मेरा मन ललचा उठा और मैंने इनको तोड़ लिया।”

शख ने क्रोध-पूर्वक कहा—“मेरी अनुपस्थिति में, विना मेरी अनुमति के फल तोड़कर खाये हैं, इसलिये तुमने चोरी का कार्य किया है। अब तुम शीघ्र से शीघ्र राजा के सम्मुख उपस्थित होकर अपना अपराध स्वीकार करो और दण्ड भोगकर प्रायश्चित्त करो।”

बड़े भाई की आज्ञा सुनकर लिखित राजा के पास गया और अपना अपराध कह सुनाया।

राजा ने कहा—“जितना अधिकार मुझे दण्ड देने का है, उतना ही क्षमा करने का भी है, इसलिये मैं तुम्हारे इस अपराध को क्षमा करता हूँ।”

राजा की बात से लिखित को सतोष नहीं हुआ और उसने राजा से उचित दण्ड देने की प्रार्थना की।

राजा ने उसे बहुत समझाया, परन्तु जब लिखित नहीं माना तो मजबूर होकर उसके हाथ की दो अंगुलियों को काट देने की आज्ञा देनी पड़ी। उस समय चोरो को ऐसा ही शारीरिक दण्ड दिया जाता था।

लिखित राज्य दण्ड पाकर भाई के पास पहुँचा और कहा—“भाई, मैंने राज-दण्ड तो भोग लिया है, अब आप मुझे क्षमा कीजिये।”

शख बोला—“भाई, तू मुझे प्राणों से भी प्यारा है। तू ने नीति के विरुद्ध आचरण किया था, इसलिये तुमको राज्य की

घोर से भयभीत हो दण्ड विपत्ता चाहिये वा । इससे तुम को मोक्ष के मार्ग में हठ होने की प्रेरणा मिलेगी और भविष्य में ऐसा भयभीत न हो सकोगी सिखा भी ।

“अर्म-विरुद्ध कृत्य के प्रायश्चित्त हेतु ही मैंने तुमको राजा के पास भेजा था । राजा ने जो दण्ड दिया है यह ठीक ही दिया ।

“अब तुम नदी के किनारे पहुँच कर स्नान करो । ऐसा करने से तुम पाप से मुक्त हो जाओगे । भविष्य में ऐसा कार्य मत करना और मन में सदा इस बात को स्मरण रखना कि बिना अनुमति के कोई भी वस्तु लेना महान् पाप है ।



शत्रु की दया पर क्या जीना ?



जापान में कुमागे नाम का एक वहादुर फकीर हो गया है। वह फकीर तो था ही, परन्तु साथ ही दृढ-प्रतिज्ञ देश-भक्त भी था। वह एक अच्छा योद्धा भी था और समय पडने पर हाथ में तलवार लेकर मरने-मारने को भी तत्पर रहता था। उसका नाम सुनकर बड़े-बड़े योद्धा भी काँप उठते थे।

एक वार जापान में सुनानौरा नामक मैदान पर भयकर लड़ाई हुई। देश-भक्त कुमागे भी तलवार लेकर लड़ाई के मैदान में पहुँचा।

कुमागे ने शत्रु-पक्ष के एक वीर युवक शत्रु को पकड़ लिया और उसके हाथ-पैर बाँध दिये।

कुमागे ने उससे पूछा—“तुम्हारा क्या नाम है ?”

युवक ने उत्तर दिया—“तुम चाहो, तो मेरा सर काट सकते हो, लेकिन अपना नाम वही बतलाऊँगा।”

युवक का हड़ता-पूर्वक उत्तर सुनकर ब उसकी युवावस्था को देखकर कुमाये को हवा धा गई। उसने युवक को मुक्त करते हुए कहा—“मुझे तुम्हारे ऊपर क्या धा पई है। इसलिए अब तुम्हारा धब नहीं करूँ या। धब तुम निर्भय धपने धर धा सकते हो। क्योंकि तुम्हारे माता-पिता तुम्हारे धियोध में ध्याकुल होधे इसलिए धीम धर पढ़ूँधो धिसधे उनको संतोष की संध मिले।

कुमाये की बल सुनकर युवक हड़ता-पूर्वक ने उत्तर धिया—
‘मैं धापका धनु हूँ, इसलिए धुंने धापकी धमा मही धाधिये। धापको धया पर धीधन ध्याठीठ करने से ठां धापके धाधों से मृत्यु को ध्राप्त होना कहीं धधिक धय्यध है। मैं धुड-सत्र से पराधित होकर धपने माता-पिता को धपना मुक्त नहीं धिखताना धाध्या हूँ। मेरे धाधी धी मुंने काधर समझ कर धिक्कारधे।”

युवक ने धाधे कहा—“धरि मुंने धापने बन्धी नहीं बनावध होठा तो मैं धन्धिम धम तक धुड-धेष में सड़ता धोर कभी धी रलु-धूमि से धीठ धिखा कर नहीं माधता। धब धाप धिलम्ब धठ कीधिये धीर धुरन्ध ही मेरी धरिन उधा धीधिये।

कुमाये को सडबूर होकर धसका धर काटना पड़ा धीर बह युवक धरा के धिये धध धसार धसार से धिधा हो धया।

“धम्य है—ऐधे धारम-रधाधी धेध-धेधकों को धिनको धपनी माधु-धूमि की धान-मध्याध धीर धारम-धौरब की हठनी धिन्धा होठी है धीर धी धेध धर्म धीर धाधि पर धपना धीधन सधूर्य धसिधान करने के पश्चात् धेधधाधियों के मन में धरा के धिये धमर बज बल्ले है।”



महात्मा गांधी की असाधारण क्षमा :



जिस समय गांधी जी अफ्रीका में थे, उस समय बहुत से भारतीय सरकार के साथ अपने अधिकारों की सुरक्षा के लिये लड़ रहे थे। वहाँ की सरकार प्रवासी भारतवासियों पर मनमाने अत्याचार कर रही थी, इसलिये अनेक भारतवासियों इन अत्याचारों का विरोध करके अपने अधिकारों की माँग कर रहे थे। गांधी जी के नेतृत्व में ही यह सब कुछ कार्यवाही हो रही थी।

संघर्ष के फलस्वरूप अफ्रीका की गोरी सरकार कुछ हुई और गांधी जी भी स्थायी समाधान को तैयार हो गये। उस समय सभी हिन्दू और मुसलमान महात्मा जी के झंडे के नीचे थे।

एक दिन एक पठान को कुछ भ्रम हुआ कि गांधी जी सरकार के सम्मुख झुक गये हैं। पठान इस बात को सहन न कर सका और वह इतने आवेश में आ गया कि उसने गाँधी जी को बहुत बुरा-भला कहा और पीटा भी।

गांधी जी पर इतनी मार पड़ी थी कि महीनों तक वे चारपाई पर पड़े रहे। लोगो ने बहुत कहा कि पठान के विरुद्ध कार्रवाई करने चाहिए, परन्तु गांधी जी ने सब की बात अनुसूची कर ही और पठान के विरुद्ध कोई भी कार्रवाई करने को तैयार न हुए।

एक दिन वह पठान आकर गांधी जी के चरणों में बिर पड़ा और रोने लगा। उस समय उन्होंने विस्वास हो गया कि गांधी जी जो दुःख भी बर्दाश्त के वह सब कुछ हमारे हित में ही था।

गांधी जी भी मनी मांति समझते थे कि पठान ने जो भी प्रसिद्ध व्यवहार किया है वह किसी बंद मान से नहीं किया बल्कि समझ की कमी के कारण ही किया है।

गांधी जी ने पठान को उठाकर पसे लगा लिया और उसे सुहृद्वं क्षमा प्रदान की। इस क्षमा बान का उस पठान पर ऐसा अद्भुत प्रभाव पड़ा कि वह उठी खलु से गांधी जी अनन्त भेंट बन गया और उनके जन-सेवा कार्यक्रम में उन मन-बन से योग देने लगा।

भारतीय नरेशों को गांधी जी का उपदेश :



वनारस
हिन्दू विश्व-विद्यालय की आधार-शिला का शुभ महोत्सव होने वाला था। पंडित मदनमोहन मालवीय ने बहुत बड़े आयोजन की तैयारी की थी।

देश के प्रसिद्ध विद्वान्, साहित्यकार, पत्रकार, अधिकारी, नेता व भारतीय नरेश भी इस अवसर पर एकत्रित हुए थे।

राजा-महाराजा इस पुण्य अवसर पर अपनी शाही पोशाक में आये थे। हीरे-मोती और जवाहिरात आदि बहुमूल्य अलंकार भी राजाओं ने धारण किए हुए थे।

उस अवसर पर जो भी विदेशी वहाँ पर विद्यमान थे, उनको ऐसा आभाम हो रहा था कि भारतवर्ष के दरिद्र होने की जो बात कही जाती है, वह अमत्य है।

महात्मा गांधी पर राजा-महाराजाओं की इस तडक-भडक और शान-शौकत का बहुत असर पड़ा। इसलिए महात्मा जी ने

राजा-महाराजाधियों को सम्बोधित करते हुए जो कुछ कहा वह निम्न प्रकार है—

‘भाइयो ये जो बहुमुख्य हीरे-जवाहिरात के धारणाय धारण करण किए हुए हैं, ये हमारे बरौब देश में सोमा नहीं देते हैं। इसलिये धारण इनको उतार दीजिए और गरीबों की सेवा में तथा दीजिए। इस देश में ही प्रतिष्ठित व्यक्ति हीन और गरीब हैं इसलिये धारण लोगों को जन-साधारण के बीच ऐसे धारणों को धारण-करके नहीं बैठना चाहिए। इस प्रकार के धारणों से धारण सम्मान नहीं है बल्कि अपमान है।

‘धारण लोगों के पास जो भी धारण है वह धारण नहीं बल्कि भारत की पण्डित जनता की बरौहर है इसलिये निजी कार्य में उसे नहीं लाना चाहिए। राजा-महाराजाधियों की सम्पत्ति यदि जन-साधारण के संकट के बरौसर पर उपयोग में लाई जाय तो उत्तम है।



उत्तर में मेरो ने कहा— मैं अपने कमरे में केवल पाठ्यपुस्तक वस्तुएँ ही रखती हूँ। इसलिए मुझे कमरे की सफ़ाई-व्यवस्था में अधिक समय नहीं लगाता पड़ता है। इसके अतिरिक्त मुझे जो भी समय जब-जब मिलता है उसका सदुपयोग कपड़ों की सिलाई में करती हूँ और उससे जो लाभ होती है उसका उपयोग यरीबों की सहायता में करती हूँ। इस प्रकार के कार्य से मेरे मन को खान्ति मिलती है। समय का भी सदुपयोग हो जाता है।

महारानी मैरी की इस धार्ष्ट्यमय जीवन-वर्षा को सुनकर प्रसन्नता तथा अन्य पाठियों को बहुत ही आश्चर्य हुआ और वे यह अनुभव करने लगे कि यदि पाठ का व्यक्त भी इस धार्ष्ट्य के प्रति ठीक भी ध्यान दे और इसका एक सतास भी पूरा करने का प्रयत्न करे तो सर्वत्र सुख-खान्ति का साम्राज्य स्थापित हो जाए।



